मौर्य्य कालीन भारत का इतिहास

कमलापति त्रिपाठी

सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य

लेखक

भगवती प्रसाद पान्थरी, एम० ए०

प्रकाशक

नन्दकिशोर एण्ड सन्स

पो० बाक्स नं० १७

चौक, वाराणसी–१

पं० कैलाशनाथ भार्गव
नन्दकिशोर एण्ड सन्स
पो० बाक्स नं० १७
चौक, वाराणसी–१

मूल्य ५)

मुद्रक—
श्री गणेशप्रसाद यादव
श्री तारकेश्वर प्रिंटिंग प्रेस
के० १८/३१, नरायन दीक्षित लेन,
वाराणसी–१

भारत को पश्चिम की दासता से

मुक्ति प्रदान करानेवाले

देवश्री चन्द्रगुप्त और महामन्त्री चाणक्य को

तथा

भारत को पश्चिमी साम्राज्यवाद की अन्तिम

शृङ्खला से स्वतन्त्र करानेवाले

राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी

और

प्रधानमन्त्री नेहरू को

सादर

दो शब्द

अशोक और हर्षवर्द्धन शीलादित्य के बाद यह मेरा तीसरा प्रयत्न है। मुझे यह जानकर प्रसन्नता है कि उच्च कक्षाओं के विद्यार्थी इन पुस्तकों को पसन्द करते हैं। वास्तव में मेरी यही कामना है कि उच्च कक्षाओं के विद्यार्थियों के योग्य विभिन्न विषयों की पुस्तकें हिन्दी भाषा में उपलब्ध हो सकें। यह कार्य वस्तुतः किसी एक व्यक्ति से सम्पन्न नहीं हो सकता।

जबतक प्रान्तीय और भारत सरकार उच्च कक्षाओं के योग्य पुस्तके लिखने के लिए लेखकों को प्रोत्साहन और सक्रिय सहयोग प्रदान न करेगी यह कार्य पूर्ण नहीं हो सकता। राज्य और केन्द्रीय सरकार उच्च प्रकार की पुस्तकों पर पारितोषिक तो देने लगी हैं जो कि इस दिशा में एक सराहनीय कदम है। यदि विभिन्न विषयों की उच्च कक्षाओं के योग्य पुस्तकों की कम से कम एक हजार प्रतियाँ सरकार पुस्तकालयों के लिए भी खरीदा करे तो मुझ जैसे लेखक को जो कुछएक प्रकाशकों से संत्रस्त होकर स्वयं किसी तरह अपनी पुस्तकें छापते हैं, अधिकाधिक कार्य करने का मौका मिल सकेगा, और धीरे-धीरे सभी विषयों पर हिन्दी में ऊँचे स्तर की पाठ्य-पुस्तकें तैयार हो जायेंगी।

सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य, स्नातकोत्तर छात्रों के लिये पाठ्य-पुस्तक के रूप में लिखी गयी है। यदि विद्यार्थियों ने इस पुस्तक को पसन्द किया और उपयोगी समझा तो मैं आशा से अधिक अपनी कामना पूर्ण हुई मानूँगा और इसको अपना साफल्य समझूँगा।

२० दिसम्बर, १९६७

भगवती प्रसाद पान्थरी

विषय-सूची

अध्याय—१

मौर्य-वंश का अभ्युदय

ई० पू० चौथी शताब्दी—चौथी शताब्दी ई० पू० भारत के राजनैतिक इतिहास में बहुत महत्वपूर्ण स्थान रखती है। इस शती के अंतिम चतुर्थांश में पश्चिमोत्तर-भारत पर मकदूनिया और यूनान के महान् विजेता अलक्षेन्द्र (सिकन्दर) के नेतृत्व में पहला यूरोपीय आक्रमण हुआ था। इस आक्रमण के झंझावात में फँसकर उत्तर-पश्चिमी भारत के अनेक छोटे-बड़े गणतंत्र और राजतंत्र ध्वस्त हो चले थे और पंजाब को रौंदता हुआ सिकन्दर ई० पू० ३२६ के अगस्त-सितम्बर में अपनी सेना के साथ व्यास तक बढ़ गया था। यूनानी नेता की महत्वाकांक्षा व्यास को पार कर भारत के महान् पूर्वीय साम्राज्य को भी ध्वस्तकर शक्तिशाली नंद राजा पर विजय स्थापित करने की थी; किन्तु पोरस के अप्रत्याशित प्रबल-प्रतिरोध ने यूनानियों के साहस को तोड़ दिया और उनके हृदयों में भारतीयों की वीरता का भय संचारित कर दिया था। अतः अपने सैनिकों के कादर्य और भय के कारण यूनानी दिग्विजेता को व्यास से आगे बढ़ने का संकल्प त्याग कर वहाँ से वापस लौट जाना पड़ा।[1]

1. "It was reported that the Country beyound the Hyphasis (vipasa=व्यास) was exceedingly fertile, and that the inhabitants were good agriculturists, brave in war...It was also reported that the people there had a greater number of elephants than the other Indians and

ई० पू० ३२५ के सितम्बर में सिंध के पाताल अथवा पातन [वर्तमान आधुनिक हैदराबाद (सिंध) उसी स्थान पर है, जहाँ पहले पातन था] नामक स्थान में पहुँच कर सिकंदर अपने देश के लिए रवाना हो गया, किन्तु बेबिलोन अथवा बावेरु पहुँचने पर ई० पू० ३२३ में अचानक वहीं उसका निधन हो गया।

---

that those were of superior size and courage...The Macedonians now began to lose heart when they saw the king raising up without end toils upon toils and dangers upon dangers. The army, therefore began to hold conferences at which the more moderate men bewailed there condition, while others positively asserted that they would follow no farther though Alexander himself should lead the way."

सिकन्दर को जब सैनिकों की इस अशांत स्थिति का पता चला तो उसने उन्हें बहुत समझाया और अपनी पूर्व विजयों का उल्लेख करते हुए कहा—"If we have driven the skythians back into their deserts and if besides the Indus, Hydaspes, Akesines, and Hydraotes flow through territories that are ours, why should you hesitate to pass the Hypasis also and add the tribes beyound it to your-Macedonian conquests? Are you afraid there are other barbarians who may yet successfully resist you......?"

सिकन्दर ने उन्हें प्रत्यागमन के खतरों को भी बतलाया और कहा— "...If we turnback there is cause to fear lest the conquered nations, as yet wavering in their fidelity, may be instigated to revolt by those, who are still independent. Our many labours will in that case be all

अलक्षेन्द्र के आक्रमण से उत्तर-पश्चिमोत्तर-भारत में अवश्य ही एक भारी राजनैतिक उथल-पुथल पैदा हुई और तूफानी हड़कम्प मचा, लेकिन उसके प्रत्यागमन और निधन के बीच उससे भी महत्त्वपूर्ण घटना थी—भारत के राजनैतिक व्योम पर चन्द्रगुप्त-मौर्य के रूप में एक उदीयमान प्रकाशपूर्ण नक्षत्र का उदय होना जिसने भारतीयों का नेता व राजा बनकर उत्तर-पश्चिमी-भारत से अलक्षेन्द्र के यूनानी सैनिक-गढ़ों और यवन-क्षत्रपों को नष्ट-भ्रष्ट कर भारत के उस भू-भाग को वैदेशिक परतन्त्रता की बेड़ियों से मुक्त किया तथा 'अधार्मिक' नंदवंश के शूद्र राजा को उन्मूलित कर मगध में अपने नये महान् राजवंश की प्रतिस्थापना की, जो भारतीय इतिहास में मौर्य-वंश के नाम से सुविख्यात है।

मौर्यवंश के अभ्युदय-काल से भारत का इतिहास पौराणिक-गाथाओं का परिधान छोड़कर ऐतिहासिक-वृत्त धारण कर लेता है। दूसरे शब्दों में

---

completely thrown away, or we must enter on a new round of toils and dangers".

सिकन्दर ने उन्हें पुरस्कृत करने का प्रलोभन भी दिया—"I equally with you, share in the dangers, and the rewards become the public property. For the land is yours and you are its satraps; and among you the greater part of its treasures has already been distributed."

किन्तु भारतीयों के पराक्रम से आक्रान्त यूनानी सैनिकों और सेनापतियों पर इन भाषणों का कोई प्रभाव न पड़ा और सिकन्दर के एक सेनापति कोइनोस (Koinos) ने यूनानियों के प्रतिनिधि के रूप में सिकन्दर को सैनिकों की स्थिति पर प्रकाश डालते हुए कहा—"A few only out of many survive, and these few possessed no longer the same bodily strength as before, while their spirits are still more depressed."

भारत का वास्तविक ऐतिहासिक वृत्तान्त हमें मौर्य-युग से ही मिलता है; क्योंकि इस युग में पहुंचने पर हम अपने इतिहास के वृत्तों और घटना-क्रमों को सम्भावित ऐतिहासिक तिथियों के पृष्ठ पर आधारित कर सकते हैं। मौर्य युग का संस्थापक चन्द्रगुप्त मौर्य इसलिये हमारे भारत का पहला ऐतिहासिक सम्राट भी माना जाता है।

चन्द्रगुप्त मौर्य; वंश-परिचय

चन्द्रगुप्त के वंश अथवा कुल के सम्बन्ध में बहुत मतभेद रहा है। पुराणों तथा संस्कृत साहित्य का सहारा लेकर कुछ विद्वानों ने उसे नीच अथवा शूद्र-कुलोत्पन्न घोषित किया है, लेकिन विवेचना के साथ प्राचीन ब्राह्मण, जैन तथा बौद्ध साहित्य एवं गाथाओं का अनुशीलन और अध्ययन करने से स्पष्ट हो जाता है कि चन्द्रगुप्त शूद्र-जात न होकर अभिजात क्षत्रियकुल में पैदा हुआ था।

यूनानी सैनिकों ने अपने हाव-भावों से कोइनोस का पूर्ण समर्थन किया—"When Koinos had concluded his address, those present are said to have signified their approval of what he said by loud applause, while many by their streaming tears showed still more expressively their aversion to encounter further dangers, and how welcome to them was the idea of returning."

तीन दिन गुस्से में क्लान्त रहने के बाद सिकन्दर ने पुनः यूनानियों को आगे बढ़ने के लिये प्रोत्साहित करने का प्रयत्न किया, लेकिन कोई परिणाम न निकलने पर उसने अन्त में लाचार होकर सेना को लौट चलने का निर्णय सूचित कर दिया—

"He intimated to the army that he had resolved to march back"—The Invasion of India By Alexander the Great—Mccrindle, pp.—121—128.

पुराणों का कथन है कि शिशुनाग अथवा शैशुनाग वंश के अंतिम क्षत्रिय राजा महानन्दी की शूद्रा पत्नी से उत्पन्न पुत्र महापद्मनन्द परशुराम की तरह सम्पूर्ण क्षत्रियों का नाश करनेवाला (परशुराम इवापरोऽखिलक्षत्रान्तकारी भविष्यति) होगा। उसके समय से शूद्र जाति के राजा राज्य करेंगे। महापद्म और उसके सुमाल्य (सुमाल्य अथवा सुकल्प) आदि आठ पुत्र सौ वर्ष तक राज्य करेंगे। इसके बाद इन नव-नन्दों को कौटिल्य नामक एक ब्राह्मण नष्ट करेगा। तब कौटिल्य चन्द्रगुप्त को राज्याभिषिक्त करेगा—(चन्द्रगुप्तं नृपम् राज्ये कौटिल्यः स्थापयिष्यति अथवा राज्येऽभिषेस्यति)। इस प्रकार नन्दों के सौ वर्ष के शासन के बाद मौर्य नृपति पृथ्वी का भोग करेंगे।[2]

पुराणों के इस उद्धरण में ब्राह्मण कौटिल्य द्वारा शूद्र जातीय नन्दों का विनाश और चन्द्रगुप्त मौर्य को सिंहासनारूढ़ करने का उल्लेख-मात्र है। पुराणों के कथन में केवल नन्दों को शूद्र कहा गया है, मौर्यों को नहीं। महापद्मनन्द शूद्र था, इसलिए उसके बाद के राजा शूद्र होंगे—'ततः प्रभृति शूद्रा भूपाला भविष्यति' का यह अर्थ नहीं किया जाना चाहिए कि नन्दवंश के बाद के राजा भी शूद्र-वंशीय ही होंगे; उक्त कथन का अर्थ इतना ही है कि महापद्मनन्द और उसके वंशज भूपाल जो राज्य करेंगे, वे सब शूद्र होंगे। अतः पुराणों में मौर्यों को न कहीं शूद्र कहा गया है और न उनका नन्दों से कोई वंशागत अथवा जातीय सम्बन्ध ही प्रकट किया गया है। चन्द्रगुप्त मौर्य को शूद्र लक्षित करने का प्रथम श्रेय विष्णुपुराण के टीकाकार को है।[3]

---

2. The Purana Text; Dynasties of the Kali Age pp. 24 to 28. the Matsya Purana. pt. 1 xxx–xxxI ed by B. D. Bose.

3. टीकाकार की आलोचना करते हुए श्री राधाकुमुद मुखर्जी ने बहुत सही लिखा है कि—The commentator makes the

विष्णुपुराण के टीकाकार ने 'मौर्य' विशेषण की व्याख्या करते हुए कहा है कि चन्द्रगुप्त चूंकि नन्द राजा की एक पत्नी मुरा से पैदा हुआ था, इसलिये उसका विरुद अथवा उपाधि 'मौर्य' हुई। किन्तु मुरा से जो विशेषण बनेगा वह 'मोरेय' होगा, मौर्य नहीं। अतः स्पष्ट है कि टीका-

---

astounding statement that Chandragupta was a son of the Nanda king against the silence of all the Puranas on the subject. Sueh a fact completely militates against the context of the references which the Puranas maketo Chandragupta...It may be noted that if there is any sort of connexion between a preceding and succeeding dynasty which was succeeded by that of Nandas; it has been clearly stated that of the ten Saisunaga kings, the ninth was Nandivardhana, and the tenth was Mahanandın and that the son of Mahanandin by a Sudra woman will be born a king—Mahapadma Nanda...If this history had repeated itself in the Case of the Mauryas, and if the first Maurya king were also related to the preceding Nanda king in the same way as the Nanda king was related to the preceding saisunaga king that history could not have been omitted by the Puranas (Chandragupta Maurya & His Times;—pp. 9—10).

The Puranas...simply mention that the Nandas were uprooted by the Brahman Kautilya, who anointed Chandragupta as king—(The Age of Imperial unity; ed. by R, C. Majumdar: pp. 55).

कार की कल्पना ने चन्द्रगुप्त की माता का नन्द राजा की पत्नी के रूप में जो सृजन किया, उसी के फल से मौर्यों के शूद्र होने का भ्रम पैदा हुआ है।[4]

मौर्यों का नन्दों से सम्बन्ध जोड़कर उन्हें शूद्र प्रचारित करने में मुद्राराक्षस नाटक और बृहत्कथा का भी प्रमुख हाथ रहा है। मुद्राराक्षस और बृहत्कथा के कथानकों में चन्द्रगुप्त को नन्दकुल का कहा गया है। मुद्राराक्षस के टीकाकार ढुण्डिराज ने नाटक के कथानक की

---

4. श्री राधाकुमुद टीकाकार की टीका करते हुए कहते हैं—The commentator is guilty both of fictitious history and bad grammar. The derivative from Mura is Maureya, which is the name of a gotra in the Ganapatha of Panini. The commentator is more anxious to find a mother for Chandragupta than to follow grammatical rules. (Ibid; pp. 55).

इसी सम्बन्ध में एच. सी. राय चौधरी लिखते हैं—

The Puranas make no mention of Mura and do not refer to any dynastic connection between the Nandas, who were of Sudra extraction, and the Mauryas. No doubt they say that after the extermination of all the Kshatriyas by Mahapadma Nanda, kings will be of Sudra origin. This can not however be taken to imply that all the post—Mahapadman kings were Sudras as some of them, e. g, the kanvas, are distinctly styled dvija. (The Age of the Nandas and Mauryas; ed. by Shri Nilkantha Shastri; p. 140).

श्री डा० रमाशंकर त्रिपाठी टीकाकार की आलोचना करते हुए कहते है–"चन्द्रगुप्तं नन्दस्यव पत्न्यन्तरहस्यमुरा संज्ञत्य पुत्रम् मौर्याणां

भूमिका में लिखा है कि कलियुग के प्रारम्भ में मगध में नन्द-क्षत्रियों का राज्य था। नन्द राजा सर्वार्थसिद्धि की दो पत्नियाँ थीं—सुनन्दा (क्षत्रिय) और मुरा (शूद्र)। सुनन्दा से नौ लड़के हुए जो नवनन्द कहलाये। मुरा का एक लड़का हुआ जो मौर्य कहलाया। मौर्य के सौ लड़के हुए जिनमें से चन्द्रगुप्त सबसे योग्य था। राजा सर्वार्थसिद्धि ने वृद्ध होने पर नवनन्दों को शासन-भार सुपुर्द किया और मौर्य को सेनापति बनाया। नव-नन्दों ने ईर्ष्या में पड़कर मौर्य और उसके सौ पुत्रों को काल-कोठरी में बन्द कर दिया। फलत: वे सब मर गये, केवल चन्द्रगुप्त बचा रह गया। बाद में चन्द्रगुप्त ब्राह्मण चाणक्य की मदद से, जो स्वयं नन्दों से अप्रतिष्ठित होने के कारण कुपित होकर नन्दों का विनाश चाहता था, नन्दों को उन्मूलित कर पाटलिपुत्र के सिंहासन पर आसीन हुआ और मौर्यवंश का संस्थापक बना।

'मुद्राराक्षस' संभवतया पाँचवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में मौखरी राजा अवन्तिवर्म्मन के समय की कृति है[5] और उस पर टीका लिखनेवाले

प्रथमम्।" This is obviously wrong. The derivative from Mura would be Maureya. (History of Ancient India, p. 146).

5. श्री वि० स्मिथ के अनुसार विशाखदत्त चन्द्रगुप्त द्वितीय विक्रमादित्य के समय में हुआ था। (The Oxford history of India; second ed. by V. Smith; p. 159).

कुछ अन्य विद्वान् विशाखदत्त की रचना का समय ४०० ई० सन् के आस-पास मानते हैं—The Indian Historical quarterly, Vol V; 1929; p 6.

श्री रीज डेविज विशाखदत्त का समय ई० सन् की आठवीं शती मे मानते हैं—Buddhist India; p. 270.

कैम्ब्रिज हिस्ट्री में विशाखदत्त की सम्भावित तिथि सातवीं शती दी गयी है—Vol 1; p.

ढुण्ढिराज ई० सन् की अट्ठारहवीं शती के हैं। अतः मौर्यों के शताब्दियों बाद लिखे गये नाटक और टीका के आधार पर महान् चन्द्रगुप्त के सम्बन्ध में सम्पूर्ण रूप से सच्ची ऐतिहासिक जानकारी उपलब्ध करना सम्भव नहीं है। नाटक का मूलाधार ऐतिहासिक हो सकता है, किन्तु जहाँ इतिहास स्वयं मौन है वहाँ नाटक अथवा उपन्यासकार और उसके टीकाकार अपनी कल्पना से इतिहास के खन्दकों को पाट भी दिया करते हैं। ब्राह्मण साहित्य में मौर्यों के सम्बन्ध में सबसे पुरातन उल्लेख पुराणों मे मिलते हैं। पुराणों में नन्दों को तो शूद्र कहा गया है, लेकिन मौर्यों के कुल पर प्रकाश नहीं डाला गया है। चन्द्रगुप्त मौर्य की माँ अथवा पिता कौन थे—इस पर भी पुराण मौन हैं। पुराणों में मौर्यों और नन्दों के बीच में कोई वंशीय सम्बन्ध भी नहीं प्रकट किया गया है। विष्णु-पुराण के टीकाकार ने प्रथमतः नन्द राजा की एक कल्पित पत्नी 'मुरा' के रूप में चन्द्रगुप्त की माता का सृजन किया; किन्तु उसने भी मुरा को शूद्रा अथवा दासी नहीं इंगित किया था। मुरा 'शूद्रा' थी, यह शोध ढुण्ढिराज की है। किन्तु ढुण्ढिराज का कथन इतिहास पर आधारित न होकर उसकी उर्वर कल्पना की उपज मात्र है, जिसे हम ऐतिहासिक वृत्त के रूप में स्वीकार नहीं कर सकते।[6]

मुद्राराक्षस नाटक में चन्द्रगुप्त को 'नन्दान्वय' अर्थात् नन्द वंश से सम्बन्धित बताया गया है और मन्त्री राक्षस को उसके पिता का पैत्रिक

---

6. श्री राधाकुमुद मुखर्जी ढुण्डिराज की कल्पना पर कटाक्ष करते हुए लिखते हैं— "It was left to Dhundhiraja to make the discovery for the first time in the long history of these Chandragupta traditions that the woman Mura was a Vrishalatmaja, the daughter of a Vrishala or Sudra. Dhundhiraja stands alone in this statement which may be taken for what it is worth"—(Chandragupta Maurya And His Times; pp. 11—12).

मन्त्री अथवा 'पितृपर्यायागत' कहा गया है (चतुर्थ अंक, पंचम अंक–)। पंचम अंक में मलयकेतु चन्द्रगुप्त को 'मौर्य' नाम से सम्बोधित करता हुआ उसे मन्त्री राक्षस के स्वामी का पुत्र (मौर्योऽसौ स्वामी पुत्रः) कहता है। नाटक के ये कथन मौर्यपुत्र चन्द्रगुप्त का नन्द कुल से सम्बन्ध जोड़ते हैं; किन्तु नाटककार की काल्पनिक सृष्टि के अलावा इस सम्बन्ध का कोई ऐतिहासिक आधार नहीं है। शायद विष्णुपुराण के टीकाकार की सूझ ने ही मुद्राराक्षस के नाटककार की कल्पना को प्रेरणा दी हो[7]। विष्णु-पुराण का टीकाकार और नाटककार ने शूद्र-नन्दों को उच्चकुलीय क्षत्रिय इंगित किया है, जो कि प्राचीन पौराणिक गाथाओं के बिलकुल विपरीत है। यूनानी इतिहासकारों तक को यह मालूम था कि नन्दराजा नीच कुल के थे। कर्टिअस रुफस (ई० सन् की पहली शताब्दी के मध्य में हुआ था) ने नन्दराजा के मूल पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि पोरस ने सिकन्दर से यह प्रकट किया था कि नन्दराजा की शक्ति और साम्राज्य अमित हैं लेकिन राजा स्वयं बहुत ही नीच कुल का है, क्योंकि उसका पिता एक नाई था।[8]

---

7. The Drama departs from the tradition of the Purana which does not assert any connecxion by blood between Chandragupta and Nanda. The drama here draws upon the commentator of the Purana who first attests that connexion...(Chandragupta And His Times; p. 12).

8. ...The present king was not merely a man origi_nally of no distinction, but even of the very meanest condition. His father was in fact a barber, scarcely staving off hunger by his daily earnings, but who, from his being not uncomely in person, had gained the affections of the queen, and was by her influence advan-

'मुद्राराक्षस' में चन्द्रगुप्त के लिए प्रयुक्त 'वृषल' और 'कुलहीन' सम्बोधनों के आधार पर भी प्रथम मौर्य-अधिपति को शूद्र और नीच-कुल का होना अनुमानित किया गया है। नाटक में 'वृषल' नाम से विशेषतया चाणक्य अथवा कौटल्य ही अपने प्रिय शिष्य मौर्याधिपति को सम्बोधित करता है। चाणक्य का यह सम्बोधन चन्द्रगुप्त की जाति अथवा कुल की नीचता का द्योतक नहीं, उसके पौरुष और 'गौरव' का निर्देशक है। नन्दों के सिंहासन पर चन्द्रगुप्त को आसीन देखकर चाणक्य परम संतोष का अनुभव करता हुआ मौर्य सम्राट् को 'वृषलेन वृषेण राज्ञाम्' (राजाओं में वृष) घोषित करता है।[9]

---

ced to too near a place in the confidence of the reigning monarch. Afterwards, however, he treacherously murdered his sovereign; and then under the pretence of acting as guardian to the royal children, usurped the supreme authority and having put the young princes to death begot the present king; who was detested and held cheap by his subjects..." The Invaison of India By Alexander The Great; by Mccrindle; p. 222).

कर्टियस की तरह सिसली के डॉओडोरस (यह जुलियस सीजर का समकालीन था) ने भी पोरस के आधार पर नन्दराजा को हीन चरित्र-वाला और नाई का लड़का बतलाया है जिसका प्रजा में कोई आदर न था (Ibid; p. 282)।

9. चाणक्य :—अय, सिंहासन मध्यास्ते वृषलः। साधु, साधु।

नन्दैर्वियुक्तमनपेक्षितराजराजै—
रध्यासितं च वृषलेन वृषेण राज्ञाम्।
सिंहासनं सदृशपार्थिवसंगतं च
प्रीतिं परां प्रगुणयन्ति गुणा ममैते ॥ १८ ॥

(तृतीय अंक)

अर्थशास्त्र के अन्त में कौटिल्य अथवा चाणक्य ने घोषित किया है कि इस शास्त्र का रचयिता वह था जिसने रोषपूर्ण संकल्प के साथ नन्दराजा के पंजों से शास्त्रों (ब्राह्मणों), शस्त्रों (क्षत्रियों) और पृथ्वी को मुक्त किया।[10] अर्थशास्त्र के इस कथन से प्रकट है कि नन्दों ने ब्राह्मण (ब्राह्म-विद्या) और क्षत्रिय (शस्त्र-विद्या) वर्गों को दबा रखा था, लेकिन कौटिल्य ने नन्दों को उखाड़ कर उन्हें स्वतन्त्र कर दिया। अतः शूद्र नन्दों को उखाड़ने के बाद क्षत्रिय और ब्राह्मणों की रक्षा के लिए कौटिल्य ने जिस चन्द्रगुप्त को पाटलिपुत्र के सिंहासन पर आसीन किया, वह नीचकुल अथवा नन्दकुल से किसी प्रकार भी संबंधित नहीं हो सकता था। जिस कौटिल्य ने अपनी क्रोधाग्नि की लपटों से नन्दवंश का दाह किया (क्रोधाग्नौ प्रसभमदाहि नन्दवंशः—प्रथम अंक—७) वह नन्द वंश के ही कुमार को कैसे नन्द-सिंहासन पर आसीन कर सकता था? चाणक्य का चन्द्रगुप्त के प्रति अत्यन्त स्नेह था और इसीलिये यद्यपि चाणक्य चन्द्रगुप्त को बहुधा 'वृषल' शब्द से सम्बोधित करता है, लेकिन स्नेहसिक्त होने पर उसे 'वत्स' के प्यार भरे शब्द से भी पुकारता है—(तृतीय अंक—चरणों में झुककर प्रणाम करने पर चाणक्य प्यार से चन्द्रगुप्त का हाथ पकड़ कर उसे 'वत्स' कहता हुआ उठाता है—उत्तिष्ठोत्तिष्ठ वत्स')।[11]

---

10. येन शास्त्रं च शस्त्रं च नन्दराजगता च
अमर्षेणोद्धृतान्याशु तेन शास्त्रमिदं कृतम् ॥

cf Manu x–43.

11. श्री रायचौधरी के अनुसार महाकाव्य और स्मृति की पुस्तकों में उन क्षत्रियों को भी वृषल कहा गया है जो कट्टर धर्मपरायण न थे—...The cognomen is used in the epic and law books also of khatriyas and others who deviated from orthodoxy. —Age of the Nandas and Mauryas p. 140.

तपस्वी और त्यागी चाणक्य के द्वारा चन्द्रगुप्त का 'वृषल' शब्द से संबोधित किया जाना स्वयं नाटक में स्वाभाविक अथवा उचित

That Chandragupta did deviate from strict orthodoxy is proved by his matrimonial alliance with the yavanas and the predilection possibly shown for Jainism in his later years (Indian culture; vol. II; 1935; p 559).

श्री हरिश्चन्द्र सेठ के मत में—'वृषल' ग्रीक शब्द बसिलिओ (Basileus) का संस्कृत रूप है...यह ग्रीक भाषा में राजन् के स्थान पर प्रयुक्त होता था। राजा के स्थान पर बसिलियो या बसिलियन का प्रयोग अनेक भारतीय राजाओं ने अपने द्विभासिक सिक्कों में किया है। उदाहरणार्थ कडफिज तथा अज़ ने जो ग्रीक परम्परा में नहीं थे राजाधिराज के साथ बसिलियो बसिलियन की उपाधि धारण की थी।

ऐरियन आदि पुराने इतिहासकारों ने चन्द्रगुप्त को सदैव "इंडियन बसिलिओ" कहकर पुकारा है। बहुत सम्भव है कि चन्द्रगुप्त की यूनानी प्रजा इस उपाधि से ही उसे पुकारती हो।···चन्द्रगुप्त की एक यूनानी पत्नी भी थी, अत: कभी-कभी ग्रीक उपाधि से उसे अभिहित किया जाना किसी प्रकार असंगत प्रतीत नहीं होता। मुद्राराक्षस नाटक का रचयिता संभवत: इस दन्तकथा से अवगत हो और उसने अभिज्ञ-रूप से इस उपाधि का प्रयोग किया हो—चन्द्रगुप्त मौर्य और सिकन्दर की पराजय; पृष्ठ ५४।

वृषल को ग्रीक बसिलिओ समझना कल्पना व गल्प का आश्रय लेना ही है। विष्णुपुराण के टीकाकार, मुद्राराक्षस नाटक और उसके टीकाकार ने जिस प्रकार कल्पना से चन्द्रगुप्त मौर्य की उत्पत्ति के सम्बन्ध मे काम लिया है, वृषल को बसिलिओ में परिवर्तित करने में प्रो० सेठ ने भी उसी प्रकार अपनी कल्पना से अधिक काम लिया है। भाषा के अनुसार वृषल और बसिलिओ में कोई साम्य नहीं है और इसलिए

बतलाया गया है—(तत्स्थाने खल्वस्य वृषलोद्यश्चन्द्रगुप्तः। इति कुतः—तृतीय अंक १५)। किन्तु पूर्णतया सिंहासन पर प्रतिष्ठित हो जाने के बाद नाटक के अंत में चाणक्य चन्द्रगुप्त को 'राजन्' शब्द

बसिलियो का वृषल का पर्याय नहीं माना जा सकता। अतः वृषल शब्द किसी अन्य भाषा के शब्द का परिवर्तित अथवा पर्यायवाची शब्द नहीं है। यह शब्द पूर्णतया शुद्ध संस्कृत मूल का है। भारतीय मूल के राजाओं की कोई उपाधि बसिलिओ अथवा बसिलियन नहीं मिलती। कडफिज और अज़ विदेशी थे और यूनानी सभ्यता व संस्कृति से प्रभावित थे। कडफिज का वंशज कनिष्क बौद्ध होने पर भी यूनानी, ईरानी आदि देवताओं को पूजता था। अतः उनके उदाहरण भारतीय मूल के राजाओं पर लागू नहीं हो सकते। ऐरियन का चन्द्रगुप्त के लिए बसिलिओ और भारत के लिए इंडिया तथा भारतीयों के लिए इण्डियन कहना ठीक है, लेकिन इसका अर्थ यह तो नहीं होगा कि भारतीयों ने भी इन शब्दों को अपना लिया था। किसी भी भारतीय राजा के शिलालेखों अथवा प्राचीन संस्कृत व पाली आदि की पुस्तकों में भारत को इंडिया, भारतीयों को इंडियन और राजा को वसिलियो नाम से नहीं सम्बोधित किया गया है। यूनानी लेखक अथवा यूनानी प्रजा अपनी भाषा में चन्द्रगुप्त को बसिलिओ कह सकते थे, किंतु इसका यह अर्थ नहीं कि वास्तविक भारतीय प्रजा भी अपने राजा को उन्हीं की तरह 'बसिलियो' कहने लगी थी और 'बसिलियो' का उच्चारण न कर सकने से उसकी जगह अप्रतिष्ठा का भ्रम उत्पन्न करनेवाले 'वृषल' शब्द का उपयोग करने लगी। निष्कर्षतः विशाखदत्त के नाटक में 'वृषल' शब्द का प्रयोग किसी दूसरे शब्द के अपभ्रंश के रूप में नहीं मालूम होता।

इस सम्बन्ध में श्री रायचौधरी ने उचित ही लिखा है—An ingenious suggestion has been made...that the expression really stands for 'Basileus' the Greek word for

से ही संबोधित करता है। राक्षस के मंत्री-पद-ग्रहण करने पर चन्द्रगुप्त भी अपना शासन दृढ़ हुआ समझ कर प्रसन्नता से कहता है कि राक्षस की मैत्री मिल गई है; हम सिंहासन पर स्थापित हो गये हैं; सब नन्दों का उन्मूलन हो चुका है, अतः सभी मनोरथ हमें मिल गये हैं। राक्षस भी जो पहले चन्द्रगुप्त को घृणा से वृषल व कुलहीन जैसे शब्दों से संबोधित करता था, अंत में उसे भगवान के वाराह अवतार के समान घोषित करता है जिसकी भुजाओं में म्लेच्छों से आक्रांत पृथ्वी को आश्रय मिला है।[12]

प्लुटार्क (पहली शताब्दी ई० सन् के मध्य में) के अनुसार अन्ड्रो-कोटस (Androcottos) अर्थात् चन्द्रगुप्त ने सिकन्दर के व्यास से लौट जाने पर यह प्रकट किया था कि यूनानी विजेता आसानी से पूर्वीय प्रदेशों पर विजय स्थापित कर सकता था, क्योंकि दुष्टचरित्र और नीच-कुल का होने से वहाँ के राजा से उसकी जनता घृणा किया करती थी। निःसन्देह, जैसा कि श्री रायचौधरी ने इंगित किया है; यदि चन्द्रगुप्त

---

king. There is, however, no suggestion in Indian literature that Vrishala is a royal epithet. The word has a social and no political significance, and is often applied to non_royal personages particularly wandering teachers and ascetics like the Budha-Age of The Nandas And Mauryas; p. 140. see also R. K. Mookerjee—Hindu civilization; p. 264.

12. वाराहीमात्मयोनेस्तनुमवनविधावास्थितस्यानुरूपां
यस्य प्राग्दन्तकोटिप्रलयपरिगता शिश्रिये भूतधात्री।
म्लेच्छैरुद्विज्यमाना भुजयुगमधुना संश्रिता राजमूर्तेः
स श्रीमद्बन्धुभृत्यश्चिरमवतु महीं पार्थिवश्चन्द्रगुप्तः॥१८॥

स्वयं नीचकुल का होता अथवा नन्दवंश से सम्बन्धित होता तो वह कैसे नंदों के प्रति ऐसे घृणित भाव प्रकट कर सकता था।[13]

'कुलहीन' शब्द से भी चन्द्रगुप्त को नीचकुल का होना बतलाया जाता है; किन्तु 'वृषल' शब्द को स्पष्ट करने के बाद कुलहीन का अर्थ शूद्र-कुल से करना असंगत होगा। कुलहीन से अभिप्राय साधारण कुल से किया जाना चाहिए। चन्द्रगुप्त वस्तुत: राजकुल में नहीं पैदा हुआ था, किन्तु वह अपने पौरुष और चाणक्य के सहयोग से ही मौर्य-राजकुल का संस्थापक बना था। कदाचित् इसीलिये राक्षस ने कहा था कि प्रथित-कुल (उच्च राजवंश) के भूपतियों का क्या अन्त हो गया जो पृथ्वी ने कुलहीन मौर्य को अपना पति बनाया है?[14]

जैन और बौद्ध गाथाओं से भी प्रकट है कि चन्द्रगुप्त सम्राट् होने से पूर्व हीन अथवा विनम्र-स्थिति में रहा। रोमन इतिहासकार जस्टिन (द्वितीय शताब्दी ई० सन्) ने लिखा है कि चन्द्रगुप्त (सॅन्ड्राकोट्स) एक साधारण परिवार में पैदा हुआ था, लेकिन एक शुभ-शकुन ने उसे

13. The Invasion of India By Alexander The Great. p. 311.

Age of the Nandas and Mauryas—It is significant that Plutarch includes "Androcottos" among the persons who according to several historians disclosed to Alexander the meanness of the origin of the contemporary ruler of the Prasii, apparently the last Nanda king. It does not seem probable that people who sneered at the 'barbar' line of Magdha could themselves claim no higher stand in society.' p. 141.

14. पृथिव्यां किं दग्धा: प्रथितकुलजा भूमिपतय:
पतिं पापे मौर्यं यदसि कुलहीनं वृतवती।
प्रकृत्या वा काशप्रभवकुसुमप्रान्तचपला
पुरन्ध्रीणां प्रज्ञा पुरुषगुणविज्ञानविमुखी ॥७॥ द्वितीय अंक॥

प्रथमतः राजत्व प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित और प्रेरित किया था।[15]

पूर्व मध्यकालीन कश्मीर की गाथाओं, वृहत्कथा और कथा-सरित्-सागर में भी चन्द्रगुप्त को पूर्व-नन्द का लड़का बतलाया गया है जिसे चाणक्य और शकटाल ने राजा योगनन्द को मारकर पाटलिपुत्र के सिंहासन पर स्थापित किया था; किन्तु ये गल्प वैसे ही काल्पनिक हैं जैसे मुद्राराक्षस नाटक और उसके टीकाकार के कथन।[16] अतः नाटक

---

15. जस्टिन ने सैन्ड्राकोट्स अथवा चन्द्रगुप्त के पूर्व जीवन और उसके अभ्युदय पर प्रकाश डालते हुए लिखा है :—

He (sandrocottus) was born in humble life, but was prompted to aspire to royalty by an omen significant of an august destiny, For when by his insolent behaviour he had offended Alexandrum (wrongly emended into Nandrum by some), and was ordered by that king to be put to death, he sought safety by an speedy flight When he lay down overcome with fatigue and had fallen into a deep sleep, a lion of enormous size approaching the slumberer licked with its tounge the sweat, which oozed profusely from his body, and when he awoke quitely took its departure. It was this prodigy which first inspired him with the hope of winning the throne [The Invasion Of India By Alexander the Great; Mccrindle, pp, 327—328].

16 कथा सरित्सागर तरंग ४–५:
कथापीठ लम्बक—१

और कथाओं के कथनों पर मौर्यवंश के प्रथम शासक का सच्चा ऐतिहासिक परिचय निर्मित करना संगत न होगा।

चन्द्रगुप्त के पूर्वजीवन और वंश के संबंध में विश्वसनीय परिचय प्राप्त करने के लिए हमें प्राचीन जैन और बौद्ध साहित्य की ओर अभिमुख होना चाहिए।

बौद्धग्रन्थ दिव्यावदान में चन्द्रगुप्त के पुत्र बिन्दुसार को विधिवत अभिषिक्त क्षत्रिय राजा कहा गया है (Raja Khatriya Murdhabhishiktah—Divyavadana, ed. by E. B. Cowell: p. 370)।

महावंश मौर्य-वंश के अभ्युदय पर प्रकाश डालते हुए लिखता है कि नन्दों से कुपित होकर ब्राह्मण चाणक्य ने नवें नन्द (धननन्द) को मारकर चन्द्रगुप्त नाम के एक यशस्वी युवक को, जो अभिजात मोरिय वंश का था, समस्त जम्बूद्वीप का राजा बनाया।[17] इस उद्धरण से प्रकट है कि सुप्रसिद्ध मौर्यवंश का संस्थापक चन्द्रगुप्त मोरिय-क्षत्रिय था; अतः मोरिय और मौर्य दोनों एक ही है तथा मोरिय से ही मौर्य संज्ञा बनी है।[18]

---

17 The Mahavansa trans by W. Geiger. p 27—"Then the Brahman Canakka. anoint a glorious youth, known by the name Candagutta, as king over all Jambudipa, born of a noble clan, the Moriyas, when filled with bitter hate, he had slain the ninth (Nanda) Dhanananda"

18. राधाकुमुद मुकर्जी के मत में—The Moriyas were destined to rise to the greatest height of power, for there is hardly any doubt that they were the same as the Imperial Mauryas of the fourth centuary B. C.—

बुद्ध के समय मोरियवंश के क्षत्रियों का पिप्पलीवन में स्वतन्त्र गणराज्य था। पिप्पलिवन गणराज्य सम्भवतया रुमिनिन्दी (नेपाल की तराई में) और कसिया (गोरखपुर जिले में) के बीच पड़ता था। इसकी राजधानी पिप्पलीवन कुशीनगर अथवा कसिया से पश्चिम तरफ ५० मील की दूरी पर स्थित थी।[19]

महापरिनिब्बान सूत्र से विदित होता है कि मोरिय अथवा मौर्य लोग बुद्ध के समान ही उच्चकुल के क्षत्रिय थे। कुशीनारा में बुद्ध की मृत्यु होने का समाचार पाने पर पिप्पलिवन के मोरियों ने मल्लों के पास सन्देश भेजा था कि भगवान तथागत क्षत्रिय थे और वे भी क्षत्रिय हैं;

The Age of Imperial Unity; ed by R. C Majumdar, p. 17.

It is now generally agreed that the old clan name Mauriya offers a more satisfactory explanation of Maurya, the name of the dynasty founded by Chandragupta, then the supposed derivation from his mother named Mura or Father named Maurya we may therefore readily accept the view that Chandragupta belonged to the Kshatriya clan called the Mauriyas. Ibid; p 56.

श्री हेमचन्द्र राय चौधरी का भी यही मत है—"The Mauriyas were undoubtedly the same clan which gave Magdha its greatest dynasty"—Political History of Ancient India; p. 160.

19. Tribes in ancient India, Law, p. 288; The Age of Imperial Unity, p. 17.

इसलिये भगवान के अवशेषों का एक भाग उन्हें भी मिलना चाहिए।[20]

महावंश टीका के अनुसार मोरिय अथवा मौर्यजाति शाक्यवंश की ही एक प्रशाखा थी जो कोशल के क्रूर राजा विरुद्धक के आक्रमण के बाद हिमवन्त में जाकर बस गयी थी। वहाँ जिस स्थान पर शाक्यों ने अपना नगर बसाया, वह सदा क्रौंचों और मयूरों के कलरव से गुँजित रहता था, अतः वह नगर तथा वहाँ के शाक्य शासक मौर्य नाम से प्रसिद्ध हुए।[21]

जैनश्रुति के अनुसार नन्दराजा का पिता नापित था और उसकी माता एक गणिका थी तथा चन्द्रगुप्त नन्दराजा के मयूर पोषकों (मयूरों को पालनेवाले) के ग्राम के महत्तर की दुहिता का लड़का था—परिशिष्ट-पर्वण, अष्टम सर्ग; २३०–२३९)। अतः प्रकट है कि नन्दराजा और चन्द्रगुप्त में कोई वंशगत सम्बन्ध नहीं था और इसीलिये, जैसा कि डाओडोरस व प्लुटार्क से हमें विदित है, पोरस ने भी नन्द राजा को नापित-कुमार बतलाया था और चन्द्रगुप्त ने भी स्वयं नन्दों को नीचकुल का प्रकट किया था।[22]

---

20. 'Then the Mauriyas of Pipphalivana sent a messenger to the Mallas saying, the blessed one belonged to the soldier caste, and we too are of the soldier caste. we are worthy to receive a poriton of the relics of the Blessed one.

The sacred books of the East vol. V. F Max Muller, p. 134.

21. Mahavansa–Tika ed. by Turnour, Introd. pp. xxxiii—xLii.

22. Porous informed Alexander that "The king of the Gandaridai (मगध-पूर्वीगंगा का प्रदेश) was a man

उपरोक्त उद्धरणों से प्रकट है कि सुप्रसिद्ध मौर्य-साम्राज्य का प्रवीर संस्थापक चन्द्रगुप्त प्राचीन मोरिय क्षत्रिय कुल का था।[23]

---

of quite worthless character and held in no respect, as he was thought to be the son of a barbar—

(The Invasion of India—p. 82).

Androcottus (चन्द्रगुप्त) who was then very young, had a sight of Alexander and he is reported to have often said afterwards, "That Alexander was within a little of making himself master of all the the country; with such hatred and contempt was the reigning prince looked upon, on account of his profligacy of manners, and meanness of birth "

Plutarch's lives—P 490.

See; Political History of Ancient India p 160. and The Age of Imperial Unity; p 56.

श्री राधाकुमुद मुखर्जी के अनुसार—"Buddhist writers do not regard Mourya as a metronymic They invariably represent it as the name of a Clan, the members of which ranked as Kshatriyas since the days of Budha.— Age of the Nandas and Mauryas p 141."

23 यूनानी लेखकों ने मौरी, मोरि अथवा मिरो नाम के एक शासक का उल्लेख किया है जो दक्षिणी सिंध के पाताल राज्य का राजा था। (Ancient India and its Invasion by Alexander The Great, Mccrindle. p. 108, p. 256).

अतः मोरिय और मौर्य एक ही हैं और मोरिय से ही मौर्य संज्ञा बनी है। शायद मयूरों से संपृक्त होने के कारण ही मोरिय—क्षत्रिय 'मौर्य'

मोरी नाम को कुछ विद्वानो ने 'जाति' की संज्ञा माना है और उसे पाली ग्रंथों में उल्लेखित मोरिय अथवा मौर्यों से मिलाया है—"The supposition of a tribal name seems probable, since a tribe of Mories is mentioned by the Greeks and will perhaps be identical with the Mauriyas of the Pali Books" Cambridge History. Vol I p. 475.

पाताल के मौरि को प्रो० हरिश्चन्द्र सेठ चन्द्रगुप्त मौर्य से मिलाते हैं जो एलेक्जेण्डर के विरुद्ध स्थानीय राजा की सहायता कर रहा था—किंतु प्रो० सेठ का यह कथन कल्पनापूर्ण है, इसके लिए कोई पुष्ट व विश्वसनीय प्रमाण नहीं पेश किये गये है। "चन्द्रगुप्त मौर्य और एलेक्जेण्डर की भारत में पराजय" पृ० ९२।

श्री राय चौधरी ने ठीक ही कहा है कि—The names Mories, Meroes and Mocres are known to classical writers. But their connexion, if any, with Sandrocottus (Chandragupta) is not clear. If Mories is a tribal name it may well stand for Moriya or Mourya—(Age of The Nandas and Mouryas. p. 142).

यूनानी लेखकों द्वारा उल्लेखित 'मौरी' किसी 'जाति' का नाम न होकर पाताल (सिंध में) के राजा का नाम मालूम होता है—"...... Alexander..., sent to him messenger after messenger and last of all Meroes, an Indian as he had learned that Porous and this Meroes were old freinds. As soon as Porous heard the messege which Meroes now brought just at a time when he was overpowered by thirst, he

कहलाये जैसा कि 'परिशिष्टपर्वण' और महावंश-टीका के आख्यानों से प्रकट है और शायद इसी कारण 'मयूर' मौर्यों का वंशचिह्न भी

---

made his elephant halt and dismounted. Then when he had taken a draught of water and felt releived, he requested Meroes to conduct him without delay to Alexander."

"The Invasion of India by Alexader The Great" pp. 108–109.

Alexander marched thence into the Patalian territory. Its king was Moeres, but he had abandoned *the town and fled for safty to the mountains*'—Ibid p. 256 see also p. 357. "The Prince of Patala was called Mories"

इन उद्धरणों में उल्लेखित मौरि अथवा मोरी नाम स्पष्टतया एक व्यक्ति के लिए आया है, इसलिए उसे किसी जाति की संज्ञा मानना भूल होगी।

श्री मैक्रेण्डेल का अनुमान है कि शायद मोरी संस्कृत शब्द 'महाराज' का अपभ्रंश है।

राजा मौरि पोरस का पुराना मित्र था। अतः स्पष्ट है कि यह मौरी, सैन्ड्राकोट्स नहीं हो सकता, जो कि तब, जैसा कि प्लुटार्क ने लिखा है एक तरुण युवक मात्र था।

(Plutarch's lives p 490)

सैण्ड्राकोट्स सिकन्दर का दूत बनकर पोरस के पास गया हो, यह भी असंगत है, क्योंकि जस्टिन के अनुसार तरुण चन्द्रगुप्त की उद्धता से अप्रसन्न होकर सिकन्दर (गलती से कुछ विद्वान् Alexander की जगह Nandrum बाँचते हैं) ने उसे मार डालने की आज्ञा दी थी—The Invasion of India p 327.

था;[24] जैसा कि गरुड़ (ध्वज) विष्णुभक्त गुप्तों का वंशचिह्न अथवा राज-चिह्न था।

---

24. "The Asoka pillar at Nandangarh hrs been found to bear at its bottom below the surface of the ground the figure of a peacock, while the same figure is repeated in several sculptures on the great stupa at Sanchi, which are associated with Asoka......

Both Faucher and Sir John Marshal agree with Grünwedel who was the first to suggest that this representation of the peacock was due to the fact that the peacock was the dynastic emblem of the Mauryas—Chandragupta Maurya and His Times—p. 15

अध्याय—२

चन्द्रगुप्त का पूर्वजीवन और सम्राट होना

यह निःसंदेह बहुत ही खेद का विषय है कि भारत के प्रथम ऐतिहासिक सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्य के पूर्वजीवन का सही क्रमबद्ध वृत्तांत जानने के लिए हमारे पास ऐतिहासिक वृत्तों का नितान्त अभाव है; अतः उसके लिए हमें केवल पुरानी गाथाओं और यूनानी लेखकों का आश्रय लेना पड़ता है।

बौद्ध-गाथा—महावंश-टीका के अनुसार कोशल-नरेश विरुद्धक के आक्रमण से कुछ शाक्य लोग हिमवन्त में जाकर बस गये थे। वहाँ एक सुन्दर स्थान पर उन्होंने एक नगर बसाया। इस नगर के मकानों की पंक्ति मयूर के पंखों की जैसी खपरैलों से छाई गयी थीं। यह नगर क्रौंचों और मयूरों के कुंजन से गुंजित रहता था, जिस कारण यह नगर मौर्य-नगर नाम से विख्यात हुआ, और इसके शाक्य शासक जम्बूद्वीप में मोरिय अथवा मौर्य नाम से प्रख्यात हुए।

चन्द्रगुप्त इसी मौर्यनगर के राजा की रानी का पुत्र था। चन्द्रगुप्त अभी माता के गर्भ में ही था कि एक शक्तिशाली राजा ने मोरिय नगर पर चढ़ाई की और मौर्यराजा को मार डाला। गर्भवती मौर्य रानी अपने भाइयों के संरक्षण में पुष्पपुर (पाटलिपुत्र) जाकर रहने लगी। बच्चे के जन्म लेने पर रानी ने उसे एक मवेशीशाला के द्वार पर छोड़ दिया। वहाँ चन्दो नामक एक साँड बच्चे की रक्षा करने लगा। एक ग्वाले ने

जब साँड को बच्चे की रक्षा करते हुए देखा तो वह बच्चे को स्नेहपूर्वक अपने घर ले जाकर पालने लगा। चन्दो नामक साँड के नाम पर ग्वाले ने बच्चे का नाम चन्द्रगुप्त रखा। बड़ा होने पर चन्द्रगुप्त पशुओं को चराने लगा। एक व्याध नन्हे बालक चन्द्रगुप्त से आकृष्ट होकर उसे ग्वाले से मांग कर अपने यहाँ ले गया। चन्द्रगुप्त तब व्याध के यहाँ गाँव में रहने लगा।

एक दिन चन्द्रगुप्त गाँव के दूसरे बालकों के साथ पशुओं को चराते समय 'राज-क्रीड़ा' कर रहा था। स्वयं राजा बनकर और अन्य बालकों को अपने विभिन्न अधिकारी नियुक्त कर वह एक वास्तविक राजा की तरह अपराधियों का फैसला कर उन्हें दण्ड देता जाता था। तक्षशिला-वासी चाणक्य नामक ब्राह्मण जो उधर से आ रहा था, चन्द्रगुप्त की राज-क्रीड़ा से बहुत आकृष्ट हुआ। वह नन्दराजा से असन्तुष्ट था और उससे बदला लेना चाहता था। इसके लिए उसने पव्वतो नामक एक राजकुमार को अपने साथ कर लिया था और अब एक ऐसे कुमार की तलाश में था जिसे वह सम्राट बना सके। वह चन्द्रगुप्त को लेकर उसके गाँव पहुँचा और ग्वाले को एक हजार कार्षापण देकर उसे अपने साथ ले गया। चाणक्य ने चन्द्रगुप्त और पव्वतो को सुवर्ण-जटित एक-एक ऊनी डोरा गले में पहनने को दिया।

एक बार उसने दोनों कुमारों की परीक्षा लेने का निश्चय किया। चन्द्रगुप्त जब सो रहा था, चाणक्य ने पव्वतो को तलवार देकर कहा कि चन्द्रगुप्त के गले से बिना काटे व खोले ऊनी डोरा निकाल लाओ। पव्वतो से यह कार्य न हो सका। दूसरी बार जब पव्वतो सो रहा था, चाणक्य ने चन्द्रगुप्त को भी तलवार देकर पव्वतो के गले से उसी प्रकार ऊनी डोरा निकाल लाने का आदेश दिया। चन्द्रगुप्त ने जब देखा कि डोर का बिना काटे व खोले निकालना कठिन है तो उसने पव्वतो की गर्दन काट डाली और डोरा ले आया। चाणक्य उसके कार्य से बहुत

खुश हुआ। अतः उसने ६-७ वर्ष तक चन्द्रगुप्त को तक्षशिला में सब प्रकार की शिक्षा देकर सुयोग्य बनाया। तक्षशिला उस समय भारत का सुप्रसिद्ध विद्यालय था। जातकों के अनुसार तक्षशिला विद्यापीठ में भारत भर से क्षत्रिय और ब्राह्मण कुमार शिक्षा प्राप्त करने को जाया करते थे।

चन्द्रगुप्त के युवा होने पर चाणक्य ने अपने संचित कोष से सेना एकत्र की और उसे सेना का अधिनायक बनाया। अब वे नगरों और गाँवों पर आक्रमण करने लगे। उनके आक्रमणों से जनता उनके विरुद्ध हो गयी और लोगों ने मिलकर उन्हें पराजित कर दिया। चाणक्य और चन्द्रगुप्त ने तब वेष बदलकर जनता के भावों का पता लगाने का निश्चय किया।

एक बार घूमते हुए वे एक गाँव में पहुँचे। वहाँ एक घर में एक स्त्री रोटी बनाकर अपने बच्चे को दे रही थी। बच्चा रोटी के किनारों को छोड़कर बीच से ही उसे खाता जाता था। बच्चे के दूसरी रोटी माँगने पर उसकी माता ने कहा कि इस लड़के का व्यवहार चन्द्रगुप्त के ही जैसा है—जिसने सम्राट् बनने की आकांक्षा में बिना सीमान्तों को जीते राज्य के मध्यवर्ती नगरों और गाँवों पर आक्रमण किया, जिस कारण सब लोगों ने उनके विरुद्ध उठ कर उन्हें पराजित कर दिया।

इस बात को सुनकर चाणक्य और चन्द्रगुप्त ने अपनी गलती समझ ली और अब फिर सेना एकत्र कर उन्होंने सीमान्त से प्रान्तों और नगरों पर आक्रमण करना शुरू किया। धीरे-धीरे एक के बाद दूसरे प्रान्तों को जीतते हुए उन्होंने पाटलिपुत्र पर आक्रमण किया और धननंद को मारकर राज्य पर अधिकार कर लिया। चाणक्य ने तब नन्दों के गुप्तकोष को हस्तगत कर चन्द्रगुप्त को राजा बनाया।[1]

---

1. Mahavamsa Tika; Trans. by Turnour; pp. Lxxvi—Lxxxi.

जैन गाथा—श्री हेमचन्द्र के परिशिष्टपर्वण के अनुसार चन्द्रगुप्त नन्दराजा के मयूर-पोषकों के ग्राम के महत्तर अथवा मुखिया का लड़का था। अपने गाँव के बालकों के साथ वह राजक्रीड़ा किया करता था। एक बार चाणक्य जब उस गाँव में पहुँचा तो उसने बालक चन्द्रगुप्त को 'राजा' बनकर खेलते देखा। चन्द्रगुप्त की परीक्षा लेने के लिए चाणक्य ने उससे कहा कि हे राजन् मुझे कुछ भेंट दो। चन्द्रगुप्त ने पशुओं के झुण्ड को दिखाकर कहा कि तुम उन्हें ले जाओ कोई ग्वाला तुम्हे नही रोक सकता। चाणक्य उसके व्यवहार से बहुत प्रभावित हुआ और उसे राज्य दिलाने का वचन देकर अपने साथ ले गया।

चाणक्य ने अपने संग्रहीत कोष से सेना खड़ी की। इस सेना को लेकर चाणक्य और चन्द्रगुप्त ने पाटलिपुत्र नगर पर आक्रमण किया, किन्तु वे हार गये और किसी तरह प्राण बचाकर भाग निकले। सन्ध्या समय वे एक गाँव में पहुँचे। खाने की खोज में निकलने पर वे एक गरीब बुढ़िया की कुटिया के पास आये। बुढ़िया अपने बच्चों को खाना परोस रही थी। एक बच्चे ने जल्दी मचाते हुए गरम खाने की रकाबी में हाथ डालकर अँगुली जला डाली और रोने लगा। बुढ़िया ने उसे झिड़कते हुए कहा कि तुम चाणक्य के जैसा ही मूर्ख हो। इस कथन को सुनकर चाणक्य ने झोपड़ी में प्रवेश किया और बुढ़िया से उस प्रकार कहने का कारण पूछा! उसने उत्तर दिया कि बच्चे ने जिस तरह किनारे के बजाय रकाबी के बीच से खाने के कारण अंगुली जलायी, उसी तरह चाणक्य ने पहले सीमांत के प्रदेशों को जीतने के बजाय शत्रु के गढ़ पर सीधे आक्रमण करने से पराजय पायी।

चाणक्य और चन्द्रगुप्त ने बुढ़िया के कथन से लाभ उठाया और हिमवत्कूट जाकर वहाँ के राजा पर्वतक[2] की मदद से सीमांत प्रदेशों से

---

2. In the list of the kings of Nepal according to the Buddha Parvatiya Vansavali (Ind Ant Vol xiii.

आक्रमण करना शुरू किया और एक के बाद दूसरे देशों को जीतते हुए अन्त में पाटलिपुत्र पर अधिकार कर लिया। चाणक्य ने नन्दराजा पर दया कर उसे परिवार सहित अपने साथ एक रथ में जितना धन-माल आ सके उतना साथ लेकर पाटलिपुत्र से चले जाने की स्वीकृति देदी। नन्द राजा अपनी दो पत्नियाँ और एक लड़की तथा धन-माल लेकर चल दिया। मार्ग में चन्द्रगुप्त से भेंट हुई। नन्द राजा की लड़की चन्द्रगुप्त को देखकर मुग्ध हो चली और उसने स्वयंवर द्वारा उसे अपना पति चुन लिया। अतः नन्दनन्दिनी पिता के रथ से उतर कर चन्द्रगुप्त के रथ पर जाकर आरूढ़ हो गयी।

नन्दराजा के महल में पहुँचने पर राजा पर्वतक एक रूपवती विषकन्या से विवाह करने के कारण मर गया और चन्द्रगुप्त नन्द और पर्वतक दोनों के राज्यों का एकमात्र स्वामी बन गया।[3]

उपरोक्त बौद्ध और जैन गाथाओं के वर्णनों पर हम अधिक भरोसा कर सकते हैं। बौद्ध गाथों के अनुसार चन्द्रगुप्त प्राचीन मोरिय राजवंश

---

p 412) the 11th king of the third Dynasty of the Kiratas, is Parba, apparently our Parvatak; for, in the reign of the 7th king Jitedasti is placed Buddha's visit to Nepal, and in that of the 14th. Stunka, Asoka visited the country."—Parisist Parvan pp. Lxxv–fn. 1.

3 Parisistparvan. ed. by Jacobi; pp. Lxxiii–Lxxxvii–अष्टम सर्ग—215–325.

परिशिष्टपर्वन् के अनुसार यह घटना भगवान महावीर के निर्वाण १५५ वर्ष बाद हुई थी—

एवं च श्रीमहावीरमुक्तेर्वर्षशते गते।
पंचपंचाशदधिके चंद्रगुप्तोऽभवन्नृपः ॥३३६॥

में जन्मा था। महावंशटीका के अनुसार उसका पिता एक शक्तिशाली राजा द्वारा मार डाला गया था। अतः चन्द्रगुप्त एक अनाथ बच्चे के रूप में पैदा हुआ। उसका पितृहंता शक्तिशाली राजा संभवतया नन्दराजा था। जैनगाथा के अनुसार वह मोरिय नगर के मुखिया की दुहिता का लड़का था। यद्यपि बौद्ध और जैन गाथाओं में कुछ भिन्नता है किन्तु दोनों से इतना तो स्पष्ट हो जाता है कि चन्द्रगुप्त जब पैदा हुआ था उसके घर की स्थिति बहुत साधारण थी—वह राजकुल की प्रतिष्ठा, शक्ति और सम्पन्नता के साथ न पैदा हुआ था। इसीलिये जस्टिन ने चंद्रगुप्त के पूर्वजीवन पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि "He was born in humble life, but was prompted to aspire to royalty by an omen significant of an august destiny" The Invasion of India p. 327.

चन्द्रगुप्त का राज्यारोहण

चन्द्रगुप्त के राज्यारोहण का समय निर्धारित करने में हमारे मुख्य सहायक और साधन बौद्ध व जैन गाथाएँ तथा पश्चिमी लातिन लेखक—प्लुटार्क और जस्टिन हैं। राज्यारोहण के साथ उत्तरपश्चिमी-भारत और मगध की विजय का प्रश्न भी संलग्न है; क्योंकि राज्यारोहण उक्त प्रदेशों की विजय का ही प्रतिफल था। अतः राज्यारोहण की तिथि के साथ हमें यह भी निश्चित करना है कि प्रथम उत्तर-पश्चिमी भारत अथवा मगध के नन्द साम्राज्य को जीता गया था और कब?

परिशिष्टपर्वन् के अनुसार बालक चन्द्रगुप्त को चाणक्य अपने साथ तक्षशिला ले गया था जहाँ ६—७ वर्षों तक उसने शस्त्र और शास्त्रों का अध्ययन कर उनमें निपुणता प्राप्त की। अतः सिकन्दर ने जब पंजाब पर आक्रमण किया था तो सम्भवतया चन्द्रगुप्त वहीं था; और उसने यूनानी विजेता से भेंट भी की थी। प्लुटार्क इस बात का साक्षी है।
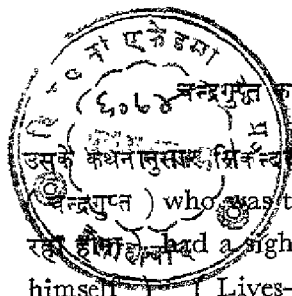
उसके कथनानुसार, सिकन्दर जब पंजाब में था तो "Androcottus (चन्द्रगुप्त) who was then very young (शायद १६-१७ वर्ष का रहा होगा), had a sight of Alexander (or saw Alexander himself") (Lives–p.490, The Invasion of India. p. 311)।

इस भेंट के अवसर पर चन्द्रगुप्त ने शायद उद्धतता के बातें की थीं जिस कारण, जस्टिन के अनुसार, सिकन्दर ने उसे मार डालना चाहा लेकिन वह उसके हाथ न आ सका। जस्टिन का कथन इस प्रकार है—

'For when by his insolent behaviour he had offended Alexanderum and was ordered by that king to be put to death, he sought safety by a speedy flight. (Ibid; p. 327).

चन्द्रगुप्त और चाणक्य, जैसा कि प्राचीन ब्राह्मण, बौद्ध और जैन गाथाओं से विदित है, नंदों के साम्राज्य को उन्मूलित करने के लिए कृत-संकल्प थे। तक्षशिला और पंजाब में वे इसी ध्येय से प्रेरित होकर पहुँचे थे। बौद्ध और जैन गाथाओं से प्रकट है कि नन्द-राज्य के हृदय पर आघात करने से उन्हें सफलता न मिल सकी थी और सीमावर्ती प्रदेशों को जीतने के बाद ही वे मगध पर अधिकार कर सके थे। जस्टिन का कथन भी इस बात को प्रमाणित करता है। उसके कथनानुसार सिकन्दर से बचने के लिए जब चन्द्रगुप्त भागकर किसी जंगल में पहुँचा और 'When he lay down overcome with fatigue and had fallen into a sleep,a lion of enormous size approaching the slumberer, licked with its tongue the sweat which oozed profusely from his body, and when he awoke quietly took off departure. It was this prodigy which

first inspired him with the hope of winning the throne and so having collected a band of robbers, he instigated the Indians to overthrow the existing Government. The Invasion of India; pp.327–328.

जस्टिन के इस उद्धरण से प्रकट है कि सिकन्दर के शिविर से भागने के बाद 'सिंह' वाली घटना ने उसे राज्य-सिंहासन प्राप्त करने की प्रेरणा दी और तब सेना को संगठित कर उसने 'तत्कालीन शासन' को उलटने के लिए भारतीयों को उकसाया।

कुछ विद्वान् चन्द्रगुप्त के उद्धत-व्यवहार वाली घटना सिकन्दर के बजाय नंद राजा से घटित हुई कहते हैं, क्योंकि ये लोग जस्टिन के उक्त कथन में आये Alexamdrun नाम को Nandrun करके पढ़ते हैं (जो कि सही नहीं है)।[4] अतः वे 'सिंहवाली' घटना के बाद चन्द्रगुप्त के प्रसंग में उल्लेखित तत्कालीन शासन से अभिप्राय नन्दों का शासन समझते हैं और इसके प्रमाण में वे जस्टिन के उपरोक्त कथन के आगे का यह वाक्य पेश करते हैं—

---

4. श्री रायचौधरी ने सिकन्दर की जगह नन्द का नाम रखनेवाले लेखकों की आलोचना करते हुये लिखा है—"Curiously enough some modern editors amend the text of Justin and propose to read Nandrum in place of Alexandrum. The name Nanda, however, is not known from any other classical source and Plutarch, who also refers to the meeting between Alexander and "Androkottos" makes separate mention of the king or the kings of the Prasii."—The Age of the Nandas and Mauryas; p. 144; see also Indian Culture; Vol II; p. 558.

'when he was thereafter preparing to attack Alexandar's prefects a wild elephant of monstrous size approached him and kneeling submissively like a tame elephant received him on its back and fought vigorously in front of the army' (Ibid—p. 328).

इस कथन में आये "Thereafter" शब्द पर जोर देकर उक्त विद्वानों का कहना है कि 'तत्कालीन शासन' (Existing government) से यदि नन्दों को उलटने का आशय न होता तो जस्टिन यूनानी क्षत्रपों से युद्ध होने की घटना का 'Thereafter' से उल्लेख न किया होता। किन्तु 'Thereafter' से यह आशय भी निकलता है कि से ा बटोरने और जनता को यूनानी शासन के विरुद्ध भड़काने के बाद (Thereafter), जो कार्य प्रारम्भ में गुप्त रूप से किया गया होगा, चन्द्रगुप्त ने यूनानी क्षत्रपों से खुल्लमखुल्ला युद्ध किये और उन्हें हराकर उत्तरापथ-राज्य पर अधिकार प्राप्त किया। इसीलिये सिकन्दर के क्षत्रपों से भीषण युद्धों का उल्लेख करके जस्टिन ने उनके प्रतिफल पर प्रकाश डालते हुए यह कहा है कि चन्द्रगुप्त को इस प्रकार राज्य प्राप्त हुआ और वह भारत में, जब कि सिल्यूकस अभी अपने महान् भविष्य के निर्माण में लगा था, राज्य कर रहा था, Sandracottus having thus won the throne was reigning over India when Selecus was laying the foundations of his Future greatness—Ibid, p 328.

चन्द्रगुप्त ने सिकन्दर के लौटने और मरने के बाद प्रथम उत्तर-पश्चिमी भारत के यूनानी क्षत्रपों का संहार किया था, यह जुस्टिन के इस उल्लेख से और भी स्पष्ट हो जाता है—"Selecus Nicator waged many wars in the east after the partition of Alexan-

dar's Empire among his generals. He first took Babylon and then with his forces strengthened by victory subjugated the Bactrians. He then passed over into India, which after Alexander's death, as if the yoke of servitude had been shakenod off from its neck, had put his prefects to death. Sandrocotus was the leader who achieved their freedom (Ibid, p 327).

प्लुटार्क के कथन से भी मालूम होता है कि सिकन्दर के व्यास (इस नदी की जगह प्लुटार्क ने भूल से गंगा का नाम दिया है) से प्रत्यागमन करने के कुछ समय बाद ही अन्ड्राकोट्स भारत में राज्य करने लगा था और एक विशाल सेना लेकर उसने संपूर्ण भारत को जीत डाला था—"......they (the Greek generals and soldiers) opposed Alexander with great firmness when he insisted that they should pass the Ganges (meaning vyas), for the kings of the Gandarites and Paresians were said to be waiting for them there with eighty thousand horses, two hundred thousand foot, eight thousand chariots, and six thousand elephants trained to war. For Androcottus, who reigned not long after, made Selecus a present of five hundred elephants at one time and with an army of six hundred thousand men traversed India and conquered the whole[5] (Lives, p. 490).

---

5. जस्टिन के उक्त दो उल्लेख शायद इस बात को प्रकट करते है कि यूनानी-क्षत्रपों से चन्द्रगुप्त ने दो बार संहारात्मक युद्ध किये थे।

प्रकटत: लातिन लेखक, बौद्ध और जैन गाथाओं के इस मत का समर्थन करते हैं कि नन्दों को उन्मूलित करके भारत में एकछत्र साम्राज्य स्थापित करने के लिए कृत-संकल्प चाणक्य और चन्द्रगुप्त मगध पर तभी अधिकार प्राप्त कर सके, जब पहले वे सीमावर्ती प्रदेशों को विजित कर लिये थे।

सिकन्दर के लौटते ही पंजाब की स्थिति कितनी अशान्त हो चली थी, इसका अनुमान ३२५ ई० पू० में भारतीयों द्वारा भारतीय प्रदेशों के शक्तिशाली यूनानी-क्षत्रप फिलिप की हत्या से किया जा सकता है। फिलिप की हत्या का समाचार सिकन्दर को बेबीलोन जाते हुए कारमेनिया में मिला था। अत: तब उसने तक्षशिला के राजा और यूडेमस को संदेश भेजा था कि जब तक फिलिप की जगह दूसरा क्षत्रप नियुक्त नहीं किया जाता है, तब तक के लिए वे उसकी जगह काम करते रहें;[6] यद्यपि इसके शीघ्र बाद ही सिकन्दर की मृत्यु होने और चन्द्रगुप्तका उत्तर-पश्चिमी भारत पर अधिकार स्थापित हो जाने से किसी दूसरे यूनानी क्षत्रप को फिलिप की जगह आने का कभी मौका न मिल सका। फिलिप की मृत्यु के कुछ ही समय बाद ३२३ ई० पू० में सिकन्दर की भी मृत्यु हो गयी थी।

एकबार पहले मगध पर आक्रमण से पूर्व (३२२–२१ से पूर्व) और दूसरी बार मगध पर अधिकार होने के बाद जब यूडेमस को यहाँ से चला जाना पड़ा था (३१६ ई० पू०)। इसकी दूसरे स्थल पर विवेचना की गयी है।

6 When Alexander heard in Karmania that Philip, who had been left in India as satrap, had been treacherously murdered by the mercenaries, he sent orders to Texiles and Eudamos to administer affairs till a new Satrap should be appointed.

—The Invasion of India; p. 384,

अत: इसे तथा उपरोक्त अन्य सभी बातों को दृष्टि में रखकर यह अनुमान करना गलत न होगा कि सिकन्दर के वापस लौटने (३२५ ई० पू०) और उसके मरने (३२३ ई० पू०) के समय के भीतर चन्द्रगुप्त और चाणक्य ने पंजाब और सीमान्त के असंतुष्टजनों और नायकों को उकसाकर यूनानियो तथा उनके अनुगामिन भारतीय शासकों के विरुद्ध युद्ध छेड़ दिया था और शायद जैसा कि डा० राधाकुमुद मुखर्जी का अनुमान है—फिलिप की हत्या कोई अप्रासंगिक और आकस्मिक घटना न थी, वरन् चन्द्रगुप्त और चाणक्य द्वारा आयोजित स्वातन्त्र्य संग्राम की योजना का ही एक अंग था।[7]

जस्टिन का कथन कि सिकन्दर के क्षत्रपों को नष्ट कर उत्तर-पश्चिमी भारत को विदेशी परतन्त्रता से मुक्त करानेवाला प्रमुख व्यक्ति अथवा स्वातन्त्र्य-संग्राम का प्रमुख नेता चन्द्रगुप्त था; सम्भवतया इस आशय को भी इंगित करता है कि स्वातन्त्र्य-संग्राम के लिए सेना एकत्र करने के साथ ही साथ चाणक्य ने चन्द्रगुप्त को भारत का सम्राट् भी घोषितकर दिया था, यद्यपि वास्तविक रूप से सम्राट होने के लिए उसे अभी यूनानियों और नन्दों को उन्मूलित करना था, जिस कार्य में उसे दो-तीन वर्ष से कम न लगे होंगे। यदि सिकन्दर के लौटने पर उपयुक्त सेना बटोरने और तैयारी

---

7 The Greek withdrawl from India was not an automatic process It was forced by a revolution, a war of Independence declared by Chandragupta as its leader. The assassinations of Greek governers are not to be looked upon as mere accidents or isolated events They were the preliminary incidents of a planned scheme of attack against Greek rule.

—Chandragupta and His Times; p. 31.

करने में एकाध वर्ष का समय लगा हो तो सम्भवतया चन्द्रगुप्त ३२५ ई० पू० के अन्त अथवा ३२४ ई० पू० के प्रारम्भ में सम्राट घोषित कर दिया गया होगा, और सम्भवतया सिकन्दर की मृत्यु के बाद लगभग ३२३-३२२ ई० पू० तक उसने उत्तरपश्चिमी भारत के कुछ भाग पर अधिकार भी स्थापित कर लिया था[8] (मिलाइए 'India, which after Alexander's death (i e; after 323 B. C.) had shaken off the yoke of servitude from its neck.' The invasion of India; p. 328) ।

सिकन्दर के साम्राज्य का दूसरा बँटवारा उसके सेनापतियों के बीच ३२१ ई० पू० में हुआ और उस समय सिल्यूकस को बेबीलोन मिला था जो कि शीघ्र ही उसके हाथ से निकल गया और फिर ३१२-११ ई० पू० में उसका पुनः बेबीलोन पर अधिकार हो सका। अतः सिल्यूकस का गौरव और राजवंशकी प्रतिष्ठा यद्यपि ३१२ ई० पू० में जाकर स्थापित हो सकी, किन्तु इसके लिए वह ३२१ ई० पू० से ही प्रयत्नशील रहा। अतः जिस बीच वह अपने गौरव को बढ़ाने में संलग्न था (३२१—३१२ ई० पू०) उस समय, मेगास्थनीज के आधार पर जस्टिन ने कहा है— भारत में चन्द्रगुप्त राज्य करता था। इस प्रकरण से यह भी प्रकट होता है कि ३२१ ई० पू० और ३१२ के भीतर चन्द्रगुप्त पूर्णरूप से भारत का सम्राट बन चुका था। प्लुटार्क के अनुसार सिकन्दर के लौटने के कुछ ही समय बाद चन्द्रगुप्त राजा बन गया था और उसने ६ लाख सेना लेकर

---

8 श्री रायचौधरी का भी मत है कि—"The assumption of soverignty by Chandragupta in the lower Indus valley or the plains of the Eastern Punjab and the Ganges sometimes before 321 B. C." cannot be precluded—Indian culture; Vol. II; p. 563.

सम्पूर्ण भारत को अधिकृत कर लिया था (Androcottus who reigned not long after, with an army of six hundred thousand men traversed India and conquered the whole)[9]।

३२१ ई० पू० में जब सिकन्दर के साम्राज्य का उसके सेनापतियों ने दूसरी बार बँटवारा किया तब उत्तर-पश्चिमी भारत का बहुत-सा भाग यूनानियों के हाथ से निकल चुका था। अतः एण्टीपेटर (Antipeter-who became supreme regent of Alexander's empire in 321 B C.) ने डाओडोरस के अनुसार Paropanisadai के सीमांत के भारतीय-प्रदेश के लिए पैथोन (*Python*) को क्षत्रप नियुक्त किया और सिन्धुनद से लगा भारतीय-प्रदेश पोरस को तथा झेलम (Hydaspes) से लगा प्रदेश अम्भी को सौंपा क्योंकि भारतीय राजाओं को तब बिना किसी योग्य सेनापति और शाही सेना के हटाना कठिन हो चला था।[10] निष्कर्षतः ३२१ ई० पू० तक उत्तरपश्चिमी

---

9. Plutarch's Lives; p. 490. श्री टार्न के अनुसार चन्द्रगुप्त ई० पू० ३२३ और ३२१ के पूर्व मगध का सम्राट बन गया था—THe Greeks In India and Bactria; p. 46.

श्री राधाकुमुद मुकर्जी के अनुसार—"The Independence of India was achieved by Chandragupta about 323 B. C.—"and certainly before 321 B. C." Chandragupta and His Times; p. 32.

कैम्ब्रिज हिस्ट्री के अनुसार भी चन्द्रगुप्त ३२१ ई० पू० तक मगध का सम्राट बन गया था— Vol I. p. 471 and p. 473.

10—"Antipater...gave India, which bordered on the Paropanisadai, to Python, and of the adjacent

भारत की स्थिति यूनानियों के लिए अत्यन्त गम्भीर और अशांत हो चुकी थी, और यूनानियों के पास तब भारत में कोई ऐसा प्रबल नायक अथवा इतना सैन्य बल न रह गया था कि वे भारत के भीतरी प्रदेश

Kingdom he gave that which lay along the Indus to Porus, and that along the Hydaspes to Taxiles, for it was impossible to remove these kings without royal troops under the command of some distinguished general"—India As Described In Classical Literature, pp. 201-202.

डाओडोरस के उक्त कथन की विवेचना करते हुए श्री रायचौधरी लिखते है—"The successors of Alexander in 321 B. C. confessed their inability to remove the Indian Rajas without royal troops under the command of some distinguished general. The abandonment of Sind, the complaint about the inadequacy of troops and the wholesome respect for the power of the Indian Rajas must have been due to new developments in politics. Greek military power to the east of the Indus was virtually extingnished as early as 321 B C. The result could not have been due to Ambhi or the Paurava. Had they been instrumental in emancipating their country from foreign thraldom, they and not Chandragupta and his followers, would have been mentioned by the classical writers as the great liberators".—Indian Culture; Vol II; p. 562.

भारतीय राजाओं से लेकर यूनानी क्षत्रपों को सौंप देते। इस स्थिति का प्रकट कारण यही था, जैसा कि जस्टिन व प्लुटार्क आदि से विदित है कि सिकन्दर की मृत्यु के बाद चन्द्रगुप्त (Sandrac ttus) ने यूनानी क्षत्रपों को मारकर भारत को मकदूनिया की परतन्त्रता से मुक्त कर दिया था।[11] दूसरी बात जो डाओडोरस के उक्त कथन से प्रकट होती है, यह है कि चन्द्रगुप्त प्रथम प्रयत्न में शायद केवल झेलम तक का प्रदेश

---

11. श्री रायचौधरी कहते हैं—"Such a situation could have arisen only after the destructi n of most of the Greek commnnders on the spot by Chandragupta... Indian Culture; vol. II; p. 562 और "The inadequacy of "royal troops" and the absence of "distinguished general" are inexp'icable unless the more important among the prefects of Alexander had already been put to death or expelled. That achievement is ascribed by Latin histor'ans solely to Chandragupta who 'was the leader who achieved their (i. e., Indians) freedom'—Age of the Nandas and Mauryas; pp 139.

अतः श्री राधाकुमुद मुकर्जी लिखते हैं—"Thus it may be assumed that the death of Alexander meant the death of Greek rule in India...The provisions of the second partition of Alexander's Empire in 321 B C. practically point to the Greek recognition of the independence of India which was achieved by Chandragupta about 323 B. C., and certainly before 321 B. C.—Chandragupta And His Times; p 32.

ही अपने अधीन कर सका था, क्योंकि सिन्धुघाटी और झेलम से लगा पंजाब का प्रदेश ३२१ ई० पू० में एण्टीपेटर द्वारा पोरस और अम्भी को शासन के लिए सौंपे गये थे। किन्तु प्राचीन पश्चिमी लेखकों के कथनों से यह भी प्रकट है कि यह यूनानियों का नाममात्र का अधिकार भी ३१६ ई० पू० तक समाप्त हो चला था। डाओडोरस के आधार पर यह कहा जाता है कि यूडेमस ने जो कि अम्भी से मित्रता रखता था पोरस को मार डाला और उक्त घटना के शीघ्र ही बाद ३१७ ई० पू० में वह भारत छोड़कर चला गया। इसी समय के लगभग ३१६ ई० पू० में दूसरा अन्तिम यूनानी क्षत्रप पैथोन भी भारत के सीमांतीय प्रदेश से वापस चला गया। इस प्रकार ३१६ ई० पू० तक पश्चिमीभारत से यूनानी सत्ता का रहा-सहा अवशिष्ट प्रभाव भी समाप्त हो चुका था।

यूनानियों के इस निष्कासन में चन्द्रगुप्त का ही हाथ था, यह सहज ही अनुमान किया जा सकता है।[12] पोरस की हत्या से शायद चन्द्रगुप्त को यूनानियों पर पुनः आक्रमण करने का अच्छा बहाना और अवसर मिल गया था, फलतः यूडेमस और पैथोन

12. मुद्राराक्षस नाटक में भी कतिपय म्लेच्छ और उनके दल का दमन नन्दों के उन्मूलन के बाद दर्शाया गया है। अतः कुछ यवन क्षत्रप चन्द्रगुप्त द्वारा नन्दों के उन्मूलन से पूर्व कुचले गये थे और बचे-खुचे यवन-क्षत्रप नन्दों पर विजय स्थापित होने के बाद हटाये गये थे।

कुछ विद्वान् मुद्राराक्षस और जस्टिन के इस कथन के आधार पर कि चन्द्रगुप्त ने "Solicited the Indians to support this new soverignty' or 'instigated the Indians to overthrow the existing government,' and 'Thereafter (denide) went to war with the prefects of Alexander and fought

को निकाल बाहर कर चन्द्रगुप्त ने ३१६–३१५ ई० पू० तक अपने राज्य की सीमा झेलम से आगे सिन्धुनद तक पहुंचा दी थी। यही कारण है कि प्लिनी ने मगध-राज्य की प्रथम-सीमा सिन्धुनद तक ही बतलायी

---

vig.rously with them—यह अनुमान करते हैं कि यूनानियों के साथ मगध पर अधिकार होने के बाद ही युद्ध हुआ था—The Macedonian war came sometime aft r the change of govt. among Indians—Indian Culture; vol II; p 561.

जस्टिस ने यूनानी-क्षत्रपों के साथ युद्ध होने का उल्लेख करने के बाद भी 'having thus won the throne' शब्दों का प्रयोग किया है। अतः टार्न का कहना सही है कि—'Sandracott s gets his kingdom after a war with the Macedonian satraps, and the last one, Peithon of Gandhara, did not leave India till 316—The Greeks In Bactria And India; p 47 Fn 2.

कैम्ब्रिज हिस्ट्री के लेखकानुसार—'a conquest of the Panjab by Chandragupta with forces from East rn Hindustan has little inherent plausibility— p. 47 I इसी पुस्तक के पृष्ठ—४३० में मगध की विजय के बाद केवल बचे-खुचे यूनानियों को विनष्ट करने की बात कही गई है—"Under his leadership India threw off, the la t remnants of the Mac donian Yoke (अर्थात् पैथोन और यूडेमस जो ३१७–३१६ ई० पू० में विदा हुये थे) And, if we can rely on Justin, the revolution was not a bloodless one : he indicates (xv, 4) that such of the Macedonian prefects as still held th ir posts were ruthlessly put to the sword"—Cambridge History—Vol. I.

है,[13] यद्यपि आगे यह सीमा सिल्यूकस की पराजय के बाद हिन्दूकुश तक पहुँच गयी थी। उपरोक्त सभी वृत्त का अनुशीलन कर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि ३२३–३२२ ई० पू० तक चन्द्रगुप्त ने उत्तर-पश्चिमी-भारत के यूनानियों को पछाड़कर प्रथम झेलम तक के प्रदेश पर विजय स्थापित की थी और इसके बाद ३२२–३२१ ई० पू० में उसने मगध पर आक्रमण कर पाटलिपुत्र पर भी अधिकार कर लिया था। फिर पोरस की हत्या होने पर वह दुबारा पंजाब गया और यूडेमस तथा पैथोन को निकाल बाहर करने पर ३१५ ई० पू० तक सिन्धु-नदी तक का समस्त प्रदेश भी उसके अधिकार में चला आया था।

मगध पर आक्रमण

मगध पर चन्द्रगुप्त और चाणक्य का सहज में ही अधिकार न हुआ था। इसके लिए जैसा कि महावंश टीका और परिशिष्ट पर्वण के उल्लेखों से प्रकट है, उन्हें अनेक बार प्रयत्न करना पड़ा और असफल होने पर आक्रमण की योजनाएँ बदलनी और सुधारनी पड़ीं। अन्त में उनका प्रयत्न सफल हुआ और नन्दराजा से राज्य और अधिकार छीन लिये गये। चन्द्रगुप्त और नन्दराजा धननंद के बीच का अन्तिम निर्णायक-युद्ध बहुत ही रक्तपूर्ण और विकट हुआ था। मिलिन्दपन्हो के अनुसार नन्दराजा की सेना ने भद्दसाल के सेनापतित्व में राजा चन्द्रगुप्त से अत्यन्त विकट युद्ध किया था, जिसमें १०,००० (दस हजार) हाथी, १,००,००० (एक लाख) अश्वारोही, ५,००० (पाँच हजार) रथी, १०० कोटी पदाति रणक्षेत्र में काम आये थे।[14] यद्यपि यह विवरण

---

13. "The Indus skirts the frontiers of the Prasii" —Ancient India; Mc Crindle; p. 140.

14 "...there was Bhaddasla, the soldier in the service of...Nanda, and he waged war against Kanda-

निश्चय ही अतिरंजित है, तथापि इससे इतना अवश्य अनुमान किया जा सकता है कि नन्दराजा और चन्द्रगुप्त के बीच का संग्राम बहुत ही भीषण हुआ था और उसमें असंख्य सैनिक काम आये थे। एक भारतीय राजा फेगस अथवा फेगेलस ने सिकन्दर को नन्दराजा की शक्ति का परिचय देते हुए कहा था कि उसकी सेना में युद्ध के लिए सुशिक्षित और सुसज्जित २०,००० (बीस हजार) अश्व, २,००,००० (दो लाख) पदाति, २,००० (दो हजार) हाथी और ४,००० (चार हजार) रथ थे। पोरस ने भी इस कथन की पुष्टि की थी।[15] अतः नन्दराजा की सेना की इस भारी संख्या को दृष्टि में रख कर यह अनुमान करना गलत न होगा कि उक्त युद्ध नितान्त भीषण हुआ था।

मुद्राराक्षस के अनुसार इस युद्ध में राजा पर्वतेश्वर चन्द्रगुप्त का एक महान् और शक्तिशाली साथी था और पाटलिपुत्र पर अधिकार हो जाने के बाद उसे चाणक्य की मन्त्रणा से विषकन्या द्वारा मार दिया गया था। इस पर्वतेश्वर को अनेक विद्वान् झेलम और चिनाब के प्रदेश के यशस्वी महाराज पोरस से मिलाते हैं, लेकिन यह कथन सही नहीं है। हमें स्मरण रखना चाहिए कि पोरस लगभग ३१८ अथवा ३१६ ई०

---

gutta Now in that war, there were eighty corpse Dances. For they say that when one great Head Holocaust has taken place (by which is meant the slaughter of ten thousand elephants, and a lack of horses, and a hundred Kotis of soldiers on-foot), then the headless corpses arise and dance in frenzy over the battlefield"—Sacred Books of The East; vol. xxxvi, Pt. II; p. 147

15. The Invasion of India; pp. 181–182.

पू० के अन्त तक चाणक्य के बजाय यूनानी क्षत्रप यूडेमस द्वारा मारा गया था। अतः नाटक का पर्वतेश्वर ऐतिहासिक पोरस नहीं हो सकता। यद्यपि यह सम्भावित है कि पंजाब के पोरस ने चन्द्रगुप्त को नन्दों के विरुद्ध युद्ध में मदद दी हो, क्योंकि नन्दराजा के प्रति उसके भाव भी अच्छे नहीं थे और भारतीय स्वातन्त्र्य के नेता को सहायता पहुँचाना स्वातन्त्र्य-प्रिय पोरस अपना धर्म और कर्त्तव्य समझ सकता था। किन्तु यह सहायता साम्राज्य के अर्द्ध-बँटवारे पर न की गयी होगी, जैसा कि मुद्राराक्षस के पर्वतेश्वर के सम्बन्ध में कहा गया है। अतः यदि पोरस अथवा पोरुरव चन्द्रगुप्त की मदद के लिए साथ गया हो तो युद्ध के बाद वह अपने राज्य को वापस चला आया था, जहाँ कुछ समय बाद यूनानी क्षत्रप ने धोखे से उसकी हत्या कर डाली। यह हत्या शायद पोरस का स्वतंत्रता के नेता चन्द्रगुप्त का सहायक अथवा मित्र होने के कारण ही की गयी थी। मुद्राराक्षस का पर्वतेश्वर और परिशिष्टपर्वण का पर्वतक संभवतया एक ही व्यक्ति हैं। प्रोफेसर जैकोबी के मतानुसार शायद हिमालय प्रदेश का पर्वतक नेपाल का राजा पर्व था।[16] मुद्राराक्षस के आधार पर अनुमान किया जाता है कि चन्द्रगुप्त की सेना में शायद म्लेक्ष अथवा यूनानी सैनिक भी थे और शायद अपनी सेना को शिक्षित व

---

16. 'In the list of the kings of Nepal, according to the Baudha Parvatiya Vansavali (Ind. Ant, vol. xiii, p 412) the 11th king of the 3rd dynasty that of th kiratas, is Parba, apparently our Parvatak; for, in the reign of the 7th king Jitedasi, is placed Buddha's visit to Nepal, and in that of the 14th, Sthunka, Asoka visted the country"—Parisistaparvana; p. Lxxxv; Fn. 1.

व्यूहित करने में उसने यूनानी प्रणाली अपनायी थी।[17]

महावंश टीका के अनुसार युद्ध में नन्दराजा धननन्द मार डाला गया था। मुद्राराक्षस नाटक के कथनानुसार भी चाणक्य ने नन्दवंश का

17. 'It has been conjuctured that he employed Greek mercenaries in his struggle with Nanda or Nandrus, the king of Magdha (S Bihar) on the ruin of whose power he rose to greatness; he certainly seems to have adopted western methods in the training and discipline of his local levies—Camb Hist vol. I; p. 430.

प्लुटार्क और जस्टिन के अनुसार चन्द्रगुप्त ने एक बार सिकन्दर से भेंट की थी जिस कारण कुछ विद्वानों ने यह अनुमान किया है कि—It is not unreasonable to infer that Chandragupta visited Alexander with the intention of inducing the conqueror to put an end to the rule of the tyrant of Magdha. His conduct may be compared to that of Rana Sangrama Simha who invited Babur to put an end to the regime of Ibrahim Lodi'—Political History of Ancient India; Raychaudhari, p. 218—यह अनुमान अतिरंजित है। यदि चन्द्रगुप्त मदद के लिए सिकन्दर से मिला होता तो वह उद्धता से बातें क्यों करता जिस कारण जस्टिन के अनुसार सिकन्दरने उसे मार डालने तक का हुक्म दे दिया था। साथ ही कौटिल्य जैसा विदग्ध राजनीतिज्ञ ऐसी मददपर कभी भरोसा न कर सकता था जिसका परिणाम बाहरी शक्तिका आश्रय ग्रहण करना होता अथवा स्वामित्व स्वीकार करना! कौटिल्य विदेशियोंपर कोई विश्वास कोई आस्था न रखता था इसीलिए अर्थशास्त्र में विदेशियों को राजा का अंगरक्षक और मंत्री आदि न बनाने का स्पष्ट निर्देश दिया गया है। यूनानी सैनिकों में, सिकन्दर के ही कथना-

चिह्नमात्र तक उन्मूलित कर दिया था। परिशिष्टपर्वण के अनुसार पाटलिपुत्र पर अधिकार हो जाने पर नन्दराजा ने आत्मसमर्पण कर दिया था। अतः उसे मारा नहीं गया था, अपितु चाणक्य ने उसे एक रथ में अपनी दो रानियों और एक लड़की सहित जितना धन-माल वह ले जा सकता था लेकर पाटलिपुत्र से चले जाने की आज्ञा दे दी थी। कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र में पराजित शत्रुराजा के साथ सहानुभूतिपूर्ण शिष्ट-व्यवहार करने का निर्देश दिया है। इस बात को दृष्टि में रखते हुए परिशिष्टपर्वण का कथन सही माना जा सकता है।

चन्द्रगुप्त की दिग्विजय

यूनानियों और नन्दों की पराजय से चन्द्रगुप्त लगभग समस्त उत्तरी-भारत का सार्वभौम सम्राट बन गया था। उत्तर का अधिपति बनने के बाद उसने सम्पूर्ण भारत को एकछत्र के नीचे लाने का प्रयत्न किया। उसके इस प्रयत्न का हमें प्राचीन लेखकों से विशद् और स्पष्ट वर्णन प्राप्त नहीं है। लेकिन जो थोड़ा-बहुत सामग्री हमें पुराण इतिहासकारों और अभिलेखों आदि से प्राप्त है, उससे प्रकट है कि चन्द्रगुप्त ने अपनी दिग्विजय द्वारा पश्चिमी-भारत और दक्षिण-भारत के एक काफी बड़े हिस्से पर अधिकार स्थापित कर लिया था।

नुसार भारतीयों ने ही नन्दों की भारी शक्ति आदि की अफवाहें फैलायी थीं, जिस कारण उसके सैनिक भयभीत होकर आगे न बढ़ने की जिद पकड़ गये थे। बहुत संभव है कि इन अफवाहों को फैलाने में चन्द्रगुप्त और चाणक्य का ही हाथ अधिक रहा होगा क्योंकि वे यूनानियों के बढ़ाव को देश के लिए खतरनाक और अवांछनीय समझते थे! शायद चन्द्रगुप्त की उद्धत बातों (boldness of speech) से यही अभिप्राय है कि उसने यूनानियों को छद्मपूर्ण और कूट-युद्धक बताया था—जिस बल पर उन्होंने पोरस पर विजय पायी थी।

दूसरी शताब्दी मध्य के शकराजा रुद्रदामन के जूनागढ़ अभिलेख के अनुसार चन्द्रगुप्त मौर्य के समय में उसका सौराष्ट्र का राष्ट्रीय अथवा गवर्नर वैश्य पुष्यगुप्त था, जिसने सौराष्ट्र में सुप्रसिद्ध सुदर्शन झील का निर्माण करवाया था। सौराष्ट्र की विजय के परिणामस्वरूप अवन्ति अथवा मालवा पर भी चन्द्रगुप्त मौर्य का अधिकार हो गया होगा, इसमें सन्देह नहीं किया जा सकता। चन्द्रगुप्त मौर्य के बेटे बिन्दुसार के समय अवन्ति मौर्य साम्राज्य का ही एक प्रदेश था और उसका यशस्वी पोता अशोक वहाँ का गवर्नर था। मालवा का सुप्रसिद्ध नगर उज्जैनी मौर्यों के समय बहुत काल तक उस प्रदेश की राजधानी रहा।[18]

तामिल लेखकों और कुछ मध्ययुगीन अभिलेखों से मालूम होता है कि चन्द्रगुप्त मौर्य ने दक्षिण-भारत पर भी चढ़ाई की थी और मौर्य सीमा को तिन्नेवली (Tinnevelly) तक पहुँचा दिया था। तामिल लेखक मामुलनार और परणार के अनुसार 'वम्बा मोरियार' अर्थात् नव्य-मौर्यों (Maurya Upstarts) ने दक्षिण पर चढ़ाई कर पोदियल

18. श्री राय चौधरी लिखते है—"Chandragupta is also known to have conquered Malwa and Kathiawad. The Jaina date 313 B. C., (जैन श्रुतियों के अनुसार चन्द्रगुप्त ३१३ ई० पू० में सिंहासनारूढ़ हुआ था। मगध का राज्य तो चन्द्रगुप्त ३२१ ई० पू० से पहले प्राप्त कर चुका था; अतः यह तिथि रायचौधरी के मत में अवन्ति का राज्य प्राप्त करने से सम्बन्धित है) if it is based on correct tradition, may refer to his acquisition of Avanti in Malwa, as the chronological datum is found in a verse where Chandragupta's name occurs in a list of successors of Palaka, king of Avanti"—Indian Culture. vol, II; p. 563.

(Podiyil–तिन्नेवेली जिले में) पहाड़ी तक अधिकार स्थापित किया[19] यद्यपि वह प्रदेश अधिक दिन मौर्यों के हाथ में नहीं रह सका। अशोक के अभिलेख से प्रकट है कि उसके समय में मौर्य-सीमा उत्तरी-मैसूर से आगे न थी और पाण्ड्य-प्रदेश एक स्वतंत्र अंता-प्रदेश था। अनुमानतः प्रथम-मौर्य दक्षिण में मैसूर से आगे न बढ़ सका था या विजय के बाद पांड्य-प्रदेश शीघ्र ही मौर्यों के हाथ से निकल गया था। श्री कृष्णस्वामी आयंगर का कहना है कि मौर्यों के आक्रमणों की बाढ़ को "...The Tamil kings and chiefs stemmed the tide of iuvasion successfully so far as to rank among the allies of the Great Mauryan Asoka on terms of equality, as in fact they are referred to have been in the Asoka edicts" —Beginnings of South Indian History; p. 96.

मौर्यों की दक्षिण विजय के संबंध में विद्वानों में मतभेद है। श्रीकृष्ण-स्वामी आयंगर का कहना है—"It may be that he (Chandragupta) himself effected the conquest, or his son as

---

19. Mysoor and Coorg; from the inscriptions. Rice; p. 90; Beginnings of S. Indian History; pp. 100–101.

बर्नेट (Berneti) के अनुसार तामिल लेखकों द्वारा उल्लेखित 'मौर्यों' से अभिप्राय शायद बाद के कोंगकणी मौर्यों से है—Cambridge History; vol. I; p. 596—लेकिन श्रीकृष्णस्वामी ने सप्रमाण यह सिद्ध किया है कि तामिल लेखकों द्वारा उल्लेखित...references to the Maurya invasions must have taken place in the heyday of Mauryan power...' Beginnings of S. Indian History; p. 100.

his father's viceroy at Vidisa" दूसरे स्थल पर आयंगर इस बात पर अधिक जोर देते हैं कि शायद बिन्दुसार ही दक्षिणी-भारत का विजेता था—'The Dakhan or Peninsulars. India; down to approximately the latitude of Nellore must therefore apparently have been subjugated by either Chandragupta or Bindusara, because it was inherited from the latter by Asoka, whose only recorded war was the conquest of Kalinga, and it is more probable that the conquest of the south was the work of Bindusara, than it was effected by his busy father"[20] किन्तु बौद्ध-जैन अनुश्रुतियों, प्राचीन क्लासिक लेखक प्लुटार्क और मुद्राराक्षस नाटक तथा बाद के कतिपय अभिलेखों आदि के विवरणों से प्रतीत होता है कि दक्षिण की दिग्विजय चन्द्रगुप्त के समय में ही सम्पन्न हुई थी।

तिब्बती इतिहासकार तारानाथ के अनुसार चन्द्रगुप्त का बेटा बिन्दुसार एक बड़ा विजेता हुआ, किन्तु उसकी विजय का प्रसार तारानाथ ने पश्चिमी समुद्र से पूर्वी-समुद्र तक ही बतलाया है। जूनागढ़-लेख के अनुसार सौराष्ट्र के पश्चिमी-प्रदेश पर बिन्दुसार से पूर्व उसका पिता ही अधिकार कर चुका था और पूरब में कलिंग के प्रदेश पर उसके बेटे अशोक के समय में जाकर अधिकार स्थापित हो सका था। अतः तारानाथ के अनुसार बिन्दुसार द्वारा १६ जनपदों की विजय का उल्लेख या तो अतिरंजित है या उसका इतना ही अर्थ है कि उसके समय में शायद मौर्य-साम्राज्य के विभिन्न जनपदों ने स्वतन्त्र होने की चेष्टा की थी, लेकिन उसने सफलतापूर्वक उन्हें दबा दिया था। बौद्ध-साहित्य से हमें मालूम है कि बिन्दुसार के समय तक्षशिला में जबर्दस्त विद्रोह हुआ था जिसे जब उसका बड़ा लड़का नहीं दबा सका तो विदिशा से छोटा

20. Beginnings of S. Indian History; pp. 100-101.

लड़का अशोक वहाँ भेजा गया था, जो वहाँ के विद्रोह को दबाने में सफलीभूत हुआ। अशोक के अभिलेखों से यह भी मालूम है कि उसने कलिंग-विजय के अलावा किसी दूसरे प्रदेश अथवा जनपद की विजय नहीं की थी। अतः प्रकट है कि अशोक जिसके राज्य की दक्षिणी-सीमा चेरा-चोल और पांड्य राज्यों की सीमा को छूती थी, स्वयं दक्षिन-प्रदेश का विजेता न था और न उसके पिता ने ही दक्षिणी-जनपदों को जीता था। परिणामतः दक्षिण-भारत की दिग्विजय का श्रेय मौर्यवंश के प्रथम प्रवीर संस्थापक को ही मिलना चाहिये। चन्द्रगुप्त द्वारा समस्त भारत की दिग्विजय की प्रतिध्वनि प्लुटार्क के उल्लेख में भी प्रतिध्वनित होती है। उसने लिखा है कि चन्द्रगुप्त ने ६ लाख सेना लेकर दिग्वजय के लिए अभियान किया और संपूर्ण देश को जीत लिया—'Androcottus with an army of six hundred thousand men traversed India and conquered the whole'—Plutarch's lives; p. 490.

मुद्राराक्षस नाटक में चन्द्रगुप्त को शैलेन्द्र-हिमालय से लेकर दक्षिणी-समुद्र तक के सभी राजाओं का आश्रयदाता अथवा सम्राट कहा गया है.—

आशैलेन्द्राच्छिलान्तस्खलितसुरनदीशीकरासारशीता-
तीरान्तान्नैकरागस्फुरितमणिरुचो दक्षिणस्यार्णवस्य।
आगत्यागत्य भीतिप्रणतनृपशतैः शश्वदेव क्रियन्तां
चूडारत्नांशुगर्भास्तिव चरणयुगस्यांगुलीरन्ध्रभागाः ॥१९॥

अंक—३.

महावंश में भी चन्द्रगुप्त को समस्त 'जम्बूद्वीप' का एकछत्र सम्राट कहा गया है।[21] ये सब कथन इस बात का विश्वास दिलाते है कि उत्तरी, पश्चिमी और दक्षिणी-भारत की विजय करनेवाला मौर्य-अधिपति और कोई नहीं चन्द्रगुप्त ही था।[22]

---

21. The Mahavansa; M. Geiger; p. 27.

22. श्री डा० त्रिपाठी के मत में—"Jain traditions and

सिल्यूकस से युद्ध (३०४-३०३ ई० पू०)

सिकन्दर के सेनापति सिल्यूकस नैकेटर (Selecus Nicator)

---

certain late inscriptions further testify to Chandragupta's connection with North Mysore. Thus, it appears that the conquest of a large part of India is to be ascribed to him."—Ancient India; p 149

श्री डा० राधाकुमुद मुखर्जी का मत है—"From the epithet 'upstarts' (Vamba Moriyar) applied to the Mauryas we may infer that the Tamil poets referred to the times of Chandragupta" The Age of Imperial unity; p. 61.

श्री हेमचन्द्रराय चौधरी के मत में भी चन्द्रगुप्त ही संभवतया दक्षिण का प्रथम मौर्य-विजेता था—Certain Mysore inscriptions refer to Chandragupta's rule in North Mysore. Thus one epigraph Says that Nagarkhanda in the Shikarpur Taluq was protected by the wise Chandragupta, "an abode of the usages of eminent Kshatriyas". This is of the fourteenth century and little reliance can be placed upon it But when the statements of Plutarch, Justin, Mamulnar, and the Mysore inscriptions referred to by Rice, are read together, they seem to suggest that the first Maurya did conquer a considerable portion of trans—"Vindhyan India."

—Political History of Ancient India; p. 270.

का उल्लेख करते हुए जस्टिन ने कहा है कि बेबिलोन[23] और बैक्ट्रिया पर अधिकार करने के बाद वह भारत की ओर बढ़ा, जहाँ सिकन्दर की मृत्यु के बाद उसके क्षत्रपों को मारकर चन्द्रगुप्त (Sandrakottos) राज्य कर रहा था। सिल्यूकस ने उससे समझौता किया और फिर एण्टिगोनस से लड़ने के लिए वापस हो गया (३२० B. C.)[24]।

सिल्यूकस और चन्द्रगुप्त के बीच युद्ध होने का दूसरे रोमन

---

23 सेनापति सिल्यूकस सिकन्दर के पिता फिलिप के सेनापति एण्टिओकस का लड़का था। सिकन्दर के सेनापतियों में जब दूसरा बँटवारा हुआ था उस समय बेबिलोन उसे मिला था। लेकिन तब शीघ्र ही बेबिलोन उसके हाथ से निकल गया और फिर ३१२—३११ ई० पू० में उसका बेबिलोन पर पुनः अधिकार हो सका। इस समय से उसने अपने नाम से एक सम्वत् भी चलाया। ३०६ ई० पू० में उसने 'राजा' की उपाधि ग्रहण की।

24 Justinus (xv 4) says—'He (Seleucus Nikator) carried on many wars in the East after the devision of the Makedonian kingdom between himself and the other successors of Alexander, first seizing Babylonia and then reducing Baktriane, his power being increased by the first success Thereafter he passed into India, which had since Alexander's death, killed its governors...Sandrakottos had made it free... Seleukos came to an agreement with him, and after settling affairs in the East, engaged in the war against Antigonos (302 B. C.)—Ancient India; p. 9. Invasion of India By Alexander; p. 328.

इतिहासकार एप्पियन (Appian) ने भी उल्लेख किया है। उसने लिखा है कि सिल्यूकस ने दुबारा बेबिलोन लेने के बाद शीघ्र ही फ्रीजिया (Phrygia) से सिन्धु तक अपना अधिकार स्थापित किया और इसके बाद—"He (Seleucus) crossed the Indus and waged war on Sandrokottos, king of the Indians who dwelt about it[25], until he made friends and entered into relations of marriage with him'.

अतः जस्टिन और एप्पियन दोनों से प्रकट है कि सिल्यूकस ने भारत में घुसने के लिए सिन्धुनद को पार किया था किन्तु चन्द्रगुप्त तब उसका प्रतिरोध करने के लिए वहाँ मौजूद था। अतः दोनों में सिन्धुनद पर ही शायद युद्ध हुआ जिसमें सिल्यूकस की पराजय हुई और चन्द्रगुप्त से सुलह और वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित कर वह शीघ्र वापस भी लौट गया।

एप्पियन ने इस युद्ध का पूर्ण विवरण नहीं दिया है और न युद्ध होने की तिथि का ही उल्लेख किया है। उसने लिखा है कि सिल्यूकस के कुछ पराक्रम एण्टिगोनिस की मृत्यु से पूर्व (वह ३०१ ई० पू० में इपसस (Ipsus) के युद्ध में मारा गया था) और कुछ उसके बाद किये गये थे—"Some of the exploits were perfomed before the death of Antigones and some afterwards".[26]

---

25 एप्पियन ने भूल से एक जगह चन्द्रगुप्त को 'King of the Indians around the Indus' लिखा है, लेकिन माइक्रेण्डेल का कहना है कि उसके कथन का अभिप्राय यह है कि The war was carried on the boundaries of India—Ancient India; p. 11. Fn.

26. Appain; Roman history, Vol II; Book xi, p. 204; Trans. by White.

सिल्यूकस का एण्टिगोनस के साथ लगभग ३०२ ई० पू० में युद्ध हुआ था और ३०१ ई० पू० में एण्टिगोनस युद्ध में मार डाला गया था। अत: जस्टिन और एप्पियन के अनुसार प्रकट है कि सिल्यूकस का चन्द्रगुप्त से युद्ध ३०२–३०१ के पूर्व हुआ होगा। यदि यह अनुमान किया जाय कि बेबिलोन और बैक्ट्रिया में अपनी स्थिति दृढ़ करने में उसे ६–७ वर्ष लगे होंगे तो उसका भारत पर आक्रमण अनुमानत: ३०५ और ३०३ ई० पू० के भीतर हुआ होगा, क्योंकि बेबिलोन पुन: लगभग ३११ ई० पू० में उसके अधिकार में आया था। सिल्यूकस सम्भवतया काबुल नदी के मार्ग से ही सिन्धु-तट पर पहुँचा था।[27]

---

27 कैम्ब्रिज हिस्ट्री के लेखक ने सिल्यूकस के आक्रमण की तिथि पर विवेचना के साथ यह मत व्यक्त किया है—'Von Gutschmid placed it (The Indian expedition of Seleucus) in 302 B C and although his calculation rests on what is probably an erroneous view . , it is quite possible that he has come within two or three years of the truth.

It was not till 311 that the satrap of Babylon (Seleucus)—he had not yet assumed the title of king—was free to quit his capital with an easy mind, and devote his energies to consolidateng his authority in the more distant provinces. The task must have required time, for some hard fighting had to be done, notably in Bactria...we may suppose that about 305 or 304 at the latest, he deemed himself ready to demand a reckoning with Chandragupta.'—Camb. History of India; vol. I; p. 430.

सिल्यूकस अपने को सिकन्दर का उत्तराधिकारी मान कर उसके द्वारा विजित भारतीय-प्रदेशों पर पुन: अधिकार स्थापित करने की आकांक्षा से प्रेरित होकर ही भारत में घुसा था।[28] किन्तु भारतीय-प्रदेशों पर अधिकार

उपरोक्त समान कारणों के साथ श्री राधाकुमुद मुखर्जी ने भी सिल्यूकस के आक्रमण का काल ३०५—३०४ ई० पू० में माना है—Chandragupta and His Times; p. 36.

28. कुछ वर्तमान लेखकों ने यह अनुमान किया है कि सिल्यूकस अपने भारतीय आक्रमण में गंगा और पाटलिपुत्र तक ही नहीं अपितु गंगा के मुहाने तक पहुँच गया था। किन्तु इस अनर्गल कथन को Lassen, A. G. Schlegel, और Schwanbeck आदि विद्वानों ने बिलकुल गलत बतलाया है।

जस्टिन और एप्पियन के कथनों से स्पष्ट है कि सिन्धु-नद से वह एक कदम भी आगे न बढ़ सका था और स्ट्राबो और प्लूटार्क आदि से यह भी प्रकट है कि वह बहुत-सा राज्य गँवाकर और बदले में ५०० हाथी लेकर तुरन्त वापस लौट गया था।

श्री माइक्रेण्डल ने दर्शाया है कि 'Diodorous in setting forth the affairs of Seleucus, has not a single word about the Indian war' और Schwanbec का हवाला देते हुए दूसरे स्थल पर माइक्रेण्डेल लिखते हैं—"In the first place Schwanbeck, mentions the passage of Justinus where it is said that no one had entered India but Semiramis and Alexander; whence it would appear that the expedition of Seleucus was considered so insignificant by Trogus as not even to be on a par with the Indian war of Alexander—Ancient India pp. 10–11 and ff.

करने के बजाय उसे अपने ही राज्य के कई प्रदेश प्रवीर चन्द्रगुप्त को सौंप देने पड़े थे। सिकन्दर को असंगठित और परस्पर संघर्षरत राजतन्त्रों और गणतन्त्रों से युद्ध करना पड़ा था जिस कारण उसे पराजय का अपयश नहीं उठाना पड़ा, यद्यपि पोरस और मालवों ने उसे आसानी से विजय का सेहरा न पहनने दिया था। लेकिन सिल्यूकस को सिन्धु-नद

सिल्यूकस के जमुना-गंगा तक पहुँचने का भ्रम प्लिनी के एक कथन से फैला है—उसने लिखा है—'The other journeys made for Seleukos Nikator are as follows :—One hundred and sixty eight miles to the Hesidrus and to the river Jomanes...; from thence to the Ganges one hundred and twelve miles—(History Natural vi,-21; Ancient India; p. 12.)—इस कथन ने ही, कैम्ब्रिज हिस्ट्री का लेखक कहता है—'Have led Droysen and Others to conclude that he not merely entered the territory he had come to regain, but actually penetrated as far as Palibothra (Patliputra) on the Ganges, the Chief seat of his enemy's power, whence he made his way along the banks of the river to the sea

The premises, however, are scarcely substantial enough to bear so far-reaching a conclusion. Pliny may quite well have had in his mind, not reconnaissances made during a campaign, but information gathered subsequently by the Greek envoys who, ...resided at the court of the Indian king.—vol. I; 430. प्लिनी के उक्त कथन की विवेचना के लिये मार्कण्डेल की Ancient India; pp. 12 and ff भी देखिये।

के पार करते ही एकछत्र और सार्वभौम सम्राट चन्द्रगुप्त की संगठित और सुसज्जित शक्ति से मुकाबला करना पड़ा जिसके सामने अपने को क्षीण-बल पाकर यूनानी आक्रमणकारी ने काफी कीमत देकर सुलह खरीद लेने में ही अपना हित और लाभ समझा।

यहाँ पर एक प्रश्न उठता है कि सिल्यूकस के सिन्धु-नद पर पहुँचते ही चन्द्रगुप्त उसका प्रतिरोध करने के लिए वहाँ कैसे मौजूद था? उसकी राजधानी और शासन का केन्द्र तो पाटलिपुत्र था? हमारे अनुमान में यूडेमस ने जब पोरस की हत्या की थी तो चन्द्रगुप्त यूनानियों को खदेड़ने के लिए मगध से पुनः पंजाब चला आया था और परिणामतः ३१७ और ३१६ ई० पू० में पैथोन और यूडेमस दोनों अवशिष्ट यूनानी-क्षत्रपों को भारत की सीमा को छोड़कर चला जाना पड़ा था। उनके विदा होने पर भी स्वभावतः यूनानियों के प्रत्याक्रमण का खतरा बना ही था। अतः उत्तर-पश्चिमी सीमान्त को यूनानी आक्रमकों से सुरक्षित रखने और उत्तर-पश्चिमी भारत की सुव्यवस्था करने के लिए शायद कुछ वर्ष चन्द्रगुप्त ने वहीं व्यतीत किये। सम्भवतया ३१६ ई० पू० से ३०३ ई० पू० तक चन्द्रगुप्त पंजाब में ही रहा और यही कारण है कि जब सिल्यूकस ने भारत में घुसने के लिए सिन्धु नदी को लाँघा तो चन्द्रगुप्त उसका रास्ता रोकने को वहाँ मौजूद था। इतने वर्ष सिन्धु-नद के प्रदेश में रहने के ही कारण शायद एरियन ने कहा है—कि भारतीयों का राजा चन्द्रगुप्त सिन्धु-तट के पास निवास करता था—"Androkottus, king of the Indians who dwelt on the banks of that stream."

सिल्यूकस की पराजय से भारत की सीमा अपने वैज्ञानिक सीमान्त हिन्दूकुश तक पहुँच गयी और फलतः कुछ समय के लिये हमारा देश यूनानी-आक्रमण के भय से निरापद हो गया। मुद्राराक्षस के नाटककार ने इसीलिये कहा है कि म्लेच्छों से पीड़ित पृथ्वी ने महाराज चन्द्रगुप्त की युगल-भुजाओं में संश्रय ग्रहण किया था (म्लेच्छैरुद्विज्यमाना भुजयुगमधुना संश्रिता

राजमूर्तेः; स श्रीमद्बन्धुभृत्यश्चिरमवतु महीं पार्थिवश्चन्द्रगुप्तः ॥ अंक—सात, श्लोक—१८।)

यूनानी क्षत्रपों के निष्कासन तथा सिल्यूकस की पराजय से यूनानी म्लेच्छों का भय पूर्णतया समाप्त हो गया था; इससे यह भी अनुमान किया जा सकता है कि यूनानियों के भय से उत्तर-पश्चिमी सीमान्त के विमुक्त होने के बाद ही पश्चिमी और दक्षिणी भारत की दिग्विजय की गयी होगी क्योंकि उत्तरी-भारत पर खतरा रहते हुए दूसरी ओर ध्यान देना नीतियुक्त नहीं हो सकता था। कृष्णस्वामी आयंगर भी दक्षिण-भारत के आक्रमणों का उल्लेख करते हुए लिखते हैं—

The Invasions must have taken place in the heyday of the Mauryan power after Chandragupta had entered into the definitive treaty with seleucus of Asia (Nicator)

—Beginings of S. Indian History; p. 100.

सन्धि की शर्तें

स्ट्रेबो के अनुसार सिल्यूकस ने सन्धि और वैवाहिक सम्बन्ध करने पर एरियाना प्रदेश का एक बहुत बड़ा भाग सैन्ड्राकोटस को दे दिया था और बदलेमें उससे ५०० हाथी प्राप्त किये थे। एरियाना का वर्णन करते हुए स्ट्राबो लिखता है—

"The order in which the nations of Ariane are placed is as follows; Along the Indus are the Paropamisadai at the base of the Paropamisos range; then towards the south are the Archotoi, to the south of whom succeed the Gedrosenoi with the nations who occupy the coast. The Indus runs in a parallel course along the breadth of these regions. The Indians possess partly some of the countries lying along the Indus,

but these belonged formerly to the Persians. Alexander took them away from the Arianoi and established in them colonies of his own Seleucus. Nikator gave them to Sandrakottos in concluding a marriage alliance, and received in exchauge 500 elephants". प्लुटार्क ने भी चन्द्रगुप्त द्वारा सिल्यूकस को ५०० हाथी दिये जाने का उल्लेख किया है। फिलारकोस (Philarchos) ने चन्द्रगुप्त द्वारा सिल्यूकस को कुछ अन्य अद्भुत उपहार भेजे जाने का भी उल्लेख किया है।[29]

प्लिनी के अनुसार मगध के प्राच्य साम्राज्य की सीमा पहले सिन्धु-नद तक ही थी। लेकिन बहुत से लेखक सिन्धु नद को भारत की पश्चिमी सीमा नहीं मानते और उसके अन्तर्गत चार प्रदेशों—गड्रोशिया (Gredrosia) अथवा बिलोचिस्तान व मकरान, आरकोशिया (Archosia) अथवा कंदहार; एरिया (Aria) अथवा हिरात, परोपनसदी (Paropanisadi) अथवा ऊपरी काबुल की घाटी को भी शामिल करते हैं।[30]

---

29. Ancient India As Described In Classical Literature; Mccrindle; pp 88–89 Plutarch's Lives; p. 490.

Phylarchos, in Athenaeus, refers to some other wonderful enough presents as being sent for Seleukos by Sandrokottes—Ancient India; p 10.

30 Ancient India—The Indika of Megasthanes and Arrian; McCrindle, pp, 140 and 151.

श्री टार्न के अनुसार परोपनिसदी (The people of the Paropanisus or Hindukush) को काबुल समझना गलत है;

प्लिनी के उक्त कथन से प्रकट है कि सिल्यूकस की पराजय से पूर्व चन्द्रगुप्त के साम्राज्य की सीमा सिन्धुनद तक सीमित थी। लेकिन सिल्युकस पर विजय पाने के बाद स्ट्राबो और प्लिनि के उल्लेखानुसार

उससे वस्तुत: अभिप्राय हिन्दूकुश के प्रदेश से है, जो कि अब अफगानिस्तान का हिस्सा है, और जिसमें उस समय गान्धार प्रदेश भी शामिल था। इस प्रदेश का केवल गान्धार का हिस्सा चन्द्रगुप्त को दिया गया था—

The Paropamisadae was not among the provinces ceded by Seleucus to Chandragupta of the satrapy which Erastosthenes calls Paropamisadae, Chandragupta got Gandhara, the land between the Kunar river and the Indus; this is certain because Erastosthenes says that he did not get the whole, while the thorough evangelisation of Gandhara by Asoka shows that it belonged to the Mauryas.—The Greeks In Bactria And India; p. 100.

टार्न का उक्त कथन मान्य नहीं हो सकता। टार्न ने गान्धार के सम्बन्ध में अशोक की धर्मविजय को प्रमाण दिया है, लेकिन वह अशोक के अभिलेख के उस उल्लेख को भूल गया है जिसमें अन्तिओकस और उसके अन्य पड़ोसी राज्यों का वर्णन है। अशोक के १३ वें शिलालेख में अन्तिओकस (Antiochus—सीरिया का राजा सिल्यूकस का पोता) के राज्य को 'सीमान्त-राज्य' कहा गया है—जो इस बात का प्रमाण है कि मौर्य-सीमा हिन्दूकुश तक थी। अत: हिन्दूकुश का प्रदेश अथवा यूनानी परोपनिसदी मौर्यों के अधिकार में था जो कि प्रथम मौर्य को सीरिया के प्रथम राजा से ही प्राप्त हुआ था।

श्री रायचौधरी लिखते हैं कि सिल्यूकस ने सिन्धु के पूर्व के प्रदेशों

सिन्धु-नद के पार के चार प्रदेश मौर्य-साम्राज्य में मिला लिये गये थे। फलत: भारत की सीमा हिन्दूकुश तक जा पहुँची। और सीरिया का यूनानी-साम्राज्य भारत का पड़ोसी सीमांत राज्य बन गया।

को लेने का प्रयत्न किया, किन्तु–'He failed and had to conclude a treaty with Chandragupta by which he surrendered the satrapies of Paropanisadai (Kabul), Aria (Herat), Archosia (Kandhar), and Gedrosia (Balochistan) in return for 500 elephants'—Indian Culture; vol. II; p 563.

श्री वि० स्मिथ का मत है—"This memorable treaty extended Chandragupta's frontier to Hindukush mountains. and brought under his sway nearly the whole of the present kingdom of Afghanistan, besides Baluchistan and Makran." आगे वह पुन: कहता है—"A German writer has evolved from his inner consciousness a theory that Chandragupta recognized the suzerainty of Seleucus, but the plain facts are that the Syrian monarch failed and was obliged to surrender four valuable provinces for very inadequate consideration (i. e.; 500 elephants whose value is estimated at two millions of rupees by V Smith) Asoka; pp 15–16.

आगे अशोक के साम्राज्य की सीमाओं का उल्लेख करते हुए वि० स्मिथ कहता है कि हिन्दूकुश तक के प्रदेश बिन्दुसार और अशोक के समय में भी मौर्य साम्राज्य में थे क्योंकि अशोक—'Refers to Antichos, king of Syria, in terms which suggest that the Syrian and Indian empires were conterminous. Ibid; p. 76.

चन्द्रगुप्त के साथ, जैसा कि स्ट्राबो और एप्पियन का कहना है, सिल्यूकस ने परस्पर वैवाहिक सम्बन्ध भी स्थापित किया था। इस वृत्त से मालूम होता है कि शायद सिल्यूकस ने अपनी कोई लड़की विवाह में चन्द्रगुप्त को दी थी।

कैम्ब्रिज हिस्ट्री के लेखकानुसार स्ट्राबो का कथन कि दोनों राजघरानों में वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित किया जाना तय हुआ—'Jus connubi'—का यह अर्थ नहीं होता कि वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित हुआ ही हो, क्योंकि जाति-प्रथावाले भारत में ऐसा होना संभाव्य न था—("In that land of caste a jus connubi between the two peoples is unthinkable").

उक्त लेखक का यह भी कहना है कि सिल्यूकस के घराने में तब कोई लड़की भी न थी जिससे कि वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित किया जाता।[31]

प्राचीन भारतमें जाति-प्रथा वस्तुतः इतनी कसी-बँधी हुई न थी जैसाकि कैम्ब्रिज हिस्ट्रीके लेखकका अनुमान है। भारतके इतिहासमें भारतीय और वैदेशिक राजघरानों के बीच हुए वैवाहिक सम्बन्धों के कई एक उदाहरण मौजूद हैं। कान्हेरी अभिलेखानुसार प्राचीन सातवाहन राजा वासिष्ठीपुत्र श्रीशातकर्णी (वासिष्ठपुत्र पुलुमावी) ने उज्जैन के शक-महाक्षत्रप रुद्रदामन प्रथम (१३० से १५० ई० सन्) की बेटी से विवाह किया था।[32]

गुप्तवंश के महान् सम्राट दिग्विजयी समुद्रगुप्त को उत्तर-पश्चिम के विदेशी कुशानों और पश्चिमी प्रदेश के शक-मुरुडों ने अनेक उपहारों के

31. Camb. Hist. vol I; p 431.

32. (Political History of Ancient India; by Hemchandra Raychauhduri; IVth ed. p. 415–425)

साथ विवाह में अपनी कन्यायें भी दान देकर (कन्योपायन) उसके आतंक से मुक्ति प्राप्त की थी; यह प्रयाग प्रशस्ति से निर्विवाद प्रकट है। अतः शकों का उल्लेख करते हुए अपनी पुस्तक में एक स्थल पर श्री रायचौधरी लिखते हैं—Already in the time of Samudra gupta the Sakas appear among the peoples who hastened to buy peace by the offer of maidens and other acts of respectful subm'ssion'.[33]

प्राचीन काल में ही नहीं, वरन् पूर्व-मध्य-युग में भी जातीय-प्रतिबन्ध कड़े नहीं प्रतीत होते। कलचुरी राजा लक्ष्मीकर्ण (ई० सन्–१०४९—१०७२) की पत्नी एक हूण-राजकुमारी आवल्लदेवी थीं।[34]

फौचर आदि कुछ विद्वान् स्ट्राबो और एप्पियस के 'वैवाहिक सम्बन्ध' वाली सन्धि की शर्त से यह अर्थ लेते हैं कि भारतीय राजा चन्द्रगुप्त ने यूनानियों को क्षत्रिय-वर्ण के साथ विवाह-सम्बन्ध करने की स्वीकृति प्रदान की थी; किन्तु रीजडेविस के आधार पर टार्न ने इस मत का खण्डन करते हुए बहुत सही कहा है कि—

"Th's theory cannot be supported, either from Strabo or in subs'ance, f.r there seems to have been no jus Connubi in India, or any difficulty at this time in the marriage of persons of different colours" (The Greeks In Bactria And India; p 174).

कैम्ब्रिज हिस्ट्री के लेखक का दूसरा कथन है कि सिल्यूकश की कोई कन्या थी ही नहीं और इसलिए चन्द्रगुप्त का उसके घराने में वैवाहिक सम्बन्ध सम्भाव्य न था (There seems however, to be no room in his family circl', as we otherwise know it,

---

33. Ibid; p. 428.

34. Ancient India; R. S. Tirpathi; p. 171.

for any relationship of the kind, p. 431)। इस कथन का श्री टार्न ने उपयुक्त उत्तर पेश किया है। अतः इस सम्बन्ध में टार्न का वक्तव्य नीचे उद्धृत कर देना पर्याप्त होगा।

"The objection that Seleucus, only daughter Phila II was not yet born is idle; he could have had daughters by Apama or an earlier wife without our fragmentary sources mentioning them" (The Greeks In Bactria And India; p 174—Fn. 3)

ड्रोयसन (Droysen) और बलोच (Beloch) आदि कतिपय विद्वान् स्ट्राबो के कथन का गलत अर्थ लगाकर यह अनुमान करते हैं कि शायद चन्द्रगुप्त ने ही अपनी बेटी सिल्यूकस को दी थी, जिस कारण भ्रम में पड़कर कतिपय अन्य विद्वान् भी यह कहते हैं कि स्ट्राबो और एप्पियन के वैवाहिक संबंधवाले वृत्त के अनुसार चन्द्रगुप्त सिल्यूकस का दामाद या श्वसुर बना था (There is a suggestion made by Appean (Syr. 55) that there was a marriage alliance between the two kings so that Seleucus became either the father-in-law or the son-in-law of Chandragupta—Chandragupta Maurya and his Times; p. 37; C. H. I. vol. I; p. 431)।

किन्तु स्ट्राबो के अनुसार, जैसा कि टार्न कहता है, वैवाहिक संबंध सिल्यूकस ने स्थापित किया था न कि चन्द्रगुप्त ने। वह आगे आश्चर्य प्रकट करते हुए कहता है—

How scholars like Droysen and Beloch can have persuaded themselves against Strabo's text that it means that Seleucus married a daughter of Chandragupta I cannot guess; when did a conquerer in the

east ever give a daughter to the conquered ?' (Ibid; p. 174).

निस्संदेह डायसन आदि के कथन का इससे अधिक कोई दूसरा सीधा और सही उत्तर नहीं दिया जा सकता है।

अत: उपरोक्त विवेचना और स्ट्राबो व एप्पियन के वृत्तों के आधार पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि सिल्यूकस ने अपने विजेता चन्द्रगुप्त को अपने राज्य के कुछ प्रदेशों के साथ एक यूनानी राजकुमारी भी उसे या उसके लड़के को ब्याह में दी थी, जो शायद उसकी अपनी लड़की अथवा भतीजी अथवा सिल्यूकस-परिवार की कोई कुमारी थी। जे. एलेन (J. Allen) का कहना है—If the usual oriental practice was followed and if we regard Chandragupta as the victor, then it would mean that a daughter or other female relative of Seleucus was given to the Indian ruler or to one of his sons, so that Asoka may have had Greek blood in his veins[35]

मञ्जुश्री मूलकल्प के अनुसार चन्द्रगुप्त की मृत्यु के समय बिन्दुसार एक नाबालिग कुमार था। यदि यह कथन सही हो तो यूनानी राजकुमारी चन्द्रगुप्त से ही ब्याही गयी होगी।

सिल्यूकस और मौर्य घराने में वैवाहिक संबंध होने से दोनों राज-

35. The Cambridge Shorter History of India; 1934; p. 33.

श्री K. K. Druva का भी मत है कि—"That on the dates she was more probably married to Chandragupta's son Bindusara, Ashoka's father. J. B. O. R. S. XVI, 1930, p. 35).

परिवारों में जो मैत्री कायम हुई, वह लगभग तीन पीढ़ियों तक बनी रही। दोनों राष्ट्रों में मैत्री और सद्भावना बनाये रखने के लिए सिल्यूकस ने अपना राजदूत मेगस्थनीज भी चन्द्रगुप्त के पास पाटलिपुत्र भेजा जो वर्षों वहाँ रहा। भारत आने से पूर्व वह सिल्यूकस के प्रतिनिधि के रूप में आरकोसिया के क्षत्रप के दरबार में रहता था। संभवतया वह ई० पू० ३०२ और ३०५ के आसपास पाटलिपुत्र पहुँच गया था।[36] भारत-भ्रमण पर उसने 'इन्डिका' नाम की एक पुस्तक लिखी थी जो कि अब नष्ट हो चुकी है, लेकिन जिसके उद्धरण बाद के कई पश्चिमी लेखकों की पुस्तकों में वर्तमान हैं। यह मैत्रीपूर्ण दौत्य-सम्बन्ध सिल्यूकस और चन्द्रगुप्त के उत्तराधिकारियों के बीच भी कायम रहा और भारतीयों व यूनानियों में अशोक के समय तक घनिष्ठ राजनैतिक, सांस्कृतिक, सामाजिक और व्यापारिक सम्बन्ध बना रहा। चन्द्रगुप्त के बाद बिन्दुसार और उसके लड़के के समय में पारस्परिक दौत्य-सम्बन्ध तो रहा ही, इसके अलावा अशोक ने अपनी धर्म-विजय द्वारा सीरिया और उसके पड़ोसी यूनानी राज्यों में बुद्ध के सत्य और अहिंसा के धार्मिक सिद्धांतों का प्रचार कर भारतीय-संस्कृति का पाश्चात्य संस्कृति से मेल कराया

---

36. Ancient India: p. 15–16.

इस पुस्तक के अनुसार मेगस्थनीज ई० पू० ३०२ और २८८ (चन्द्रगुप्त की अन्तिम तिथि—लेकिन इसे २९८—७ होना चाहिये) के बीच पाटलिपुत्र पहुँचा होगा। क्लिनटन (Clinton) के अनुसार मेगास्थनीज ई० पू० ३०२ से कुछ पूर्व पहुँचा था (Ibid: p. 16)।

वि० स्मिथ के अनुसार—"...In or about B. C. 305, Seleucus dispatched Megasthenes, an officer of Sibyrtios, the satrap of Archosia as his ambassador to the court of Chandragupta" Asoka; p. 16.

और सार्वजनिक हित के कार्यों का उन राज्यों को भी क्षेत्र बनाया। इस राजनैतिक और सांस्कृतिक मेल-जोल से भारत और पश्चिमी यूनानी राष्ट्रों के साथ व्यापारिक सम्बन्ध और परस्पर सामाजिक मेलजोल भी बढ़ा होगा—यह स्वाभाविक है।[37]

---

37. श्री रायचौधरी सिल्यूकस द्वारा की गयी संधि का उल्लेख करते हुए कहते हैं—The treaty was cemmented by a matrimonial allience and a Greek envoy was received at the court of Patliputra.

Thus was ushered in a policy of philhellenism which bore fruit in the succeeding reigns. In the days of Bindusara and Asoka there was not only an exchange of embassies with the Hellenistic powers of the west but the services of Greek philosphers and administrators were eagarly sought by the Imperial Government at Patliputra'—Indian Culture, Vol. II; pp. 563–564.

श्री टार्न के अनुसार—In the third century under the Mauryas there must have been a regular export trade to the Greek West...The Greek In India And Bactria; p. 366.

अध्याय—३

चन्द्रगुप्त का राजकीय वैभव

चन्द्रगुप्त का युग भारत में प्रथमतः 'एकछत्र' साम्राज्य स्थापित होने का युग था। प्रवीर चन्द्रगुप्त और उसके महामंत्री चाणक्य के प्रयत्न का ही फल था कि पहली बार हिन्दूकुश और हिमालय से लेकर पूरब में बंगाल, पश्चिम में सौराष्ट्र और विन्ध्याचल के पार मैसूर तक भारतीय साम्राज्य की सीमाएँ प्रसारित हुई थीं और यह महान् देश एक शासन-सूत्र में गठित हुआ था। उत्तर-पश्चिम की ओर भारत की सीमाएँ मौर्यों के बाद मुगलों और अंग्रेजों के समय में कभी भी फिर दुबारा हिन्दूकुश तक न पहुँच पायीं।

इस विशाल साम्राज्य का शासन और उसकी सुव्यवस्था उस युग के लिए कोई सरल और सुगम कार्य न था। किन्तु मौर्य-शासकों, मंत्रियों और अधिकारियों की नीति-निपुणता और कार्य-क्षमता अत्यन्त सराहनीय है जिन्होंने तीन पीढ़ियों तक लगभग एक सौ साल मगध-साम्राज्य को अपनी सुव्यवस्था व संगठन के द्वारा आभ्यंतरिक भयों और आंतरिक अशांतियों से मुक्त, सुरक्षित और अक्षुण्ण बनाकर रखा। अनेक यूनानी इतिहासकार और विशेषकर मेगास्थनीज एवं विष्णुगुप्त कौटिल्य मौर्य शासन-व्यवस्था का सुस्पष्ट और सुविस्तृत चित्र उपस्थित करते है, जिसका वर्णन आगे के दो अध्यायों में किया जायगा।

चन्द्रगुप्त ने भारत को विदेशी यवनों और नन्दों के कुशासन से छुड़ाकर भारत को बाहरी म्लेच्छों के आतंक और आन्तरिक अशांति व अव्यवस्था से मुक्ति प्रदान की थी। उसके इस महान् कार्य के प्रति भारतीय जनता की ओर से कृतज्ञता प्रदर्शित करते हुए सुप्रसिद्ध नाटककार विशाखदत्त ने उसे म्लेच्छों से अवरुद्ध भारत माता को भगवान् वाराह की भाँति अपनी भुजाओं में प्रश्रय देने वाला कहा है।

आदर्श राजा

कौटिल्य ने अर्थशास्त्र में राजा के लिए जो आदर्श रखे हैं, उनका चन्द्रगुप्त ने दृढ़ता के साथ अनुसरण करने का प्रयत्न किया था। यूनानी इतिहासकारों ने उसकी कर्त्तव्यनिष्ठा का जो वर्णन किया है उससे प्रकट है कि भारत का प्रथम सम्राट् वास्तव में एक आदर्श राजा था, इसीलिये मुद्राराक्षस नाटक चन्द्रगुप्त की शासन-प्रभा को जन-दृष्टि के लिए चन्द्र-स्वरूप बतलाकर उसकी जय घोषित करता है—'जयति च जनदृष्टि-श्चन्द्रमाश्चन्द्रगुप्तः'—छठा अंक—१

कौटिल्य ने आदर्श राजा के लिए हमेशा दत्तचित्त होकर प्रजा के सुख और समृद्धि के हेतु पुरुषार्थ करने का निर्देश दिया है। उसका कहना है कि आदर्श राजा को शास्त्रों के अध्ययन द्वारा वैयक्तिक संयम व शील का पालन करना चाहिए और सार्वजनिक हित के कार्यों द्वारा अपने को लोकप्रिय बनाना चाहिए—उत्थानेन योगक्षेमसाधनं, कार्यानुशासनेन स्वधर्मस्थापनं, विनयं विद्योपदेशेन, लोकप्रियत्वमर्थसंयोगेन, हितेन वृत्तिम्—अ० ७; अधि—१

आदर्श राजा को न्यायालय में होने पर आवेदकों को द्वार पर रोककर नहीं रखना चाहिए, क्योंकि जो राजा अपनी प्रजा के लिए अप्राप्य बन जाता है और राजकार्य कर्मचारियों के हाथ में छोड़ देता है, वह शासन में अराजकता पैदा करके जनता में रोष पैदा कर शत्रु का शिकार बन जाता है :—उपस्थानगतः कार्यार्थिनामद्वारासङ्गं कारयेत्। दुर्दर्शो

हि राजा कार्याकार्यविपर्यासमासन्नैः कार्यते । तेन प्रकृतिकोपम विशंरिवा गच्छेत् । अ० १६—अधि—१

आवश्यक कार्यों पर आदर्श राजा को तुरन्त ध्यान देना चाहिए और उन्हें टालना न चाहिए क्योंकि स्थगित करने से ऐसे कार्य बाद में कठिनाई उपस्थित कर सकते हैं।

राजा का धर्म उसका पुरुषार्थ है; कर्त्तव्य का समुचित पालन और अनुशासन उसका यज्ञ है; और सबके साथ निष्पक्षता से समान व्यवहार करना उसकी 'दक्षिणा' है—राज्ञो हि व्रतमुत्थानं यज्ञः कार्यानुशासनम् । दक्षिणा वृत्तिसाम्यं...

प्रजा के सुख में राजा का सुख है, उनका हित उसका हित है, जिससे उसे आनन्द मिले उसको उसे अच्छा नहीं समझना चाहिए, लेकिन जिससे प्रजा आनन्दित हो, वही उसे अच्छा मानना चाहिए—प्रजासुखे सुखं राज्ञः प्रजानां च हिते हितम् नात्मप्रियं हितं राज्ञः प्रजानां तु प्रियं हितम् ॥[1]

अतः राजा को हमेशा पुरुषार्थ के साथ अपने कर्त्तव्यों का पालन करना चाहिए, क्योंकि पुरुषार्थ ही समृद्धि का मूल है और आलस्य से सभी बुराइयाँ पैदा होती हैं—तस्मान्नित्योत्थितो राजा कुर्यादर्थानुशासनम् । अर्थस्य मूलमुत्थानमनर्थस्य विपर्ययः ॥[2]

---

1. महाकवि कालिदास ने राजा का परमकर्त्तव्य 'प्रकृति का रंजन' बतलाया है—'राजा प्रकृति रंजनार्थम् ।' अशोक ने भी अपने शासन का ध्येय 'सर्वभूतानसक्षति संयमं समचर्य्यां मोदवृतिम्' घोषित किया है और 'पराक्रम' करने पर जोर दिया है (१३वाँ शिलालेख, और गौण. शिला. लेख १—ब्रह्मगिरी)।

2. अ० १६—अधि. १–Chap. XIX; BK. I pp. 37–88.

सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्य अपने महामन्त्री द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों के अनुरूप चलने वाला एक आदर्श राजा था, यह मैगास्थनीज तथा अन्य यूनानी लेखकों के विवरणों से प्रत्यक्ष प्रमाणित है। मेगास्थनीज के आधार पर स्ट्रावों ने चन्द्रगुप्त की कार्य-प्रणाली पर जो प्रकाश डाला है, उससे प्रकट है कि वह बहुत ही उद्यमशील और जनता के प्रति अत्यन्त कर्त्तव्यनिष्ठ था। राजकीय कार्यों को पूरा करने के लिए वह दिन में न सोता था...और तमाम दिन न्यायाधिकरण अथवा उपस्थान में बैठकर निर्बाध रूप से राजकार्य किया करता था। मालिश का समय हो जाने पर भी वह राजकार्य अधूरा न छोड़ता था, और मालिश कराते हुए आवेदनों को भी सुनता जाता था।[3]

"The king may not sleep during the day time,... The king leaves his palace not only in time of war, but also for the purpose of. judging causes. He then remains in the court for the whole day, without allowing the business to be interrupted even though the hour arrives when he must needs attend to his person that is, when he is to be rubbed with Cylinders of wood. He continued hearing cases while the friction, which is performed by four attendents, is still proceeding" (Ancient India; McCrindle; p. 72; Ancient

---

3. चन्द्रगुप्त मौर्य का यह आदर्श कौटिल्य के निर्देशित राजधर्म के सर्वथा अनुकूल है—चन्द्रगुप्त के महान् पौत्र अशोक ने भी पुरुषार्थ और अनरंजन के लिए निष्ठा के साथ कार्य करना 'धर्म' घोषित किया है—'मुझे पुरुषार्थ अथवा उद्योग करने तथा कार्य करने में सन्तोष ही नहीं मिलता। सबका कल्याण करना ही मेरा प्रमुख कर्त्तव्य है। इस सर्वलोक-हित का मूल उद्यम तथा राजकार्य करना है'—छठा शिलालेख

India as Described in Classical Literature, p. 58.).

कर्टिअस (Curtius) के अनुसार राजा का दर्बार महल के भीतर ही लगता था। उसके अनुसार राजप्रासाद सबके लिए खुला था। जिस समय सम्राट् के बाल साजे-सँवारे जाते थे उस समय भी लोग प्रासाद मे आ-जा सकते थे।[4] उस समय वह विदेशी राजदूतों से भेंट करता था और प्रजा के आवेदनों को भी सुनता था। इसके बाद उसके जूते उतार दिये जाते थे और सुगन्धित उबटनों से पैर मले जाते थे।[5]

कौटिल्य अर्थशास्त्र के अनुसार अन्तःपुर के पृष्ठभाग में एक तरफ स्त्रीनिवेश था और फिर उसके बाहर राजकन्याओं और कुमारों के पुर और फिर आगे की तरफ अलंकारभूमि, मन्त्रभूमि (परिषद जहाँ होती थी), उपस्थान (दरबार), युवराज और अध्यक्षों के स्थान अथवा कार्यालय होते थे। इस विवरण से भी प्रकट है कि उपस्थान आदि अन्तःपुर अथवा राजप्रासाद के भवनों से ही लगकर बने थे जिस कारण

---

4. चन्द्रगुप्त के पौत्र सम्राट अशोक ने आज्ञा प्रेषित की थी कि 'प्रतिवेदक' हर जगह और हर समय प्रजा का आवेदन उसे पहुँचाया करे—"जब मैं खा रहा हूँ या अन्तःपुर में होऊँ या व्रज में, या धार्मिक शिक्षालयों में या प्रमोदवन में, सब जगह प्रतिवेदक को आदेश दिया गया है कि वे प्रजा के कार्य की मुझको सूचना दें। मैं सभी जगहों पर प्रजा का कार्य करता हूँ"—छठा शिलालेख। कर्टिअस के विवरण से प्रकट है कि उसके महान् दादा का भी यही आदर्श था।

5. The Palace in open to all comers, even when the king is having his hair combed and dressed. It is that he gives audience to ambassadors and administers justice to his subjects.

कर्टिअस ने दरबार का महल के भीतर होना लिखा है (अ० २०—अधि० १)।

राजा की सुरक्षा और दिनचर्या

मेगास्थनीज के आधार पर स्ट्रैबो ने लिखा है कि राजा की वैयक्तिक सुरक्षा के लिए राजभवन में स्त्रियाँ नियुक्त थीं। अन्य अंगरक्षक और सैनिक राजभवन के द्वार के बाहर रखे जाते थे।

राजा दिन में नहीं सोता था। रात में वह समय-समय पर अपना शयनागार बदलता रहता था ताकि कोई उसकी हत्या करने में सफल न हो सके।[6]

---

6. Ancient India as Described in Classical literature: p. 58.

स्ट्रैबो के कथनों का कौटिल्य से भी समर्थन मिलता है। अर्थशास्त्र से प्रकट है कि राजा की सुरक्षा के लिए भवन के भीतर सशस्त्र-स्त्रियों के दल नियुक्त थे। कौटिल्य के निर्देशानुसार प्रातः उठने पर प्रथम सशस्त्र स्त्री-सैनिक दल ही राजा का अभिनन्दन करता था—

On getting up from the bed the king shall be received by troops of w.men armed with bows—chap. xxi; Bk I; p. 41.

कौटिल्य ने राजा का जो समय बाँधा है और जिस प्रकार उसे दिन-रात जागरूक होकर पुरुषार्थ करने को कहा है, उसके अनुसार उसके लिए दिन में सोना तो सम्भव नहीं था, वरन् रात में भी वह निर्धारित समय में ही सो सकता था—क्योंकि कौटिल्य का कहना है कि यदि राजा पुरुषार्थी है तो उसकी प्रजा भी पुरुषार्थी होगी—जो लापरवाह होता है वह आसानी से शत्रु के जाल में आ फँसता है—अतः राजा को हर समय जागरुक रहना चाहिए—chap XXI. BK. I, p. 36.

मुद्राराक्षस नाटक के द्वितीय अंक में दिये गये वर्णन से प्रकट है कि नन्दों को उन्मूलित करनेवाले चन्द्रगुप्त के अनेक शत्रु थे और उसे मारने के लिए अनेक तरह के षड्यन्त्र होते रहते थे।

नन्दों के मन्त्री राक्षस ने सूत्रधार दारुवर्मा द्वारा राजभवन में प्रवेश के लिए एक सुसज्जित यन्त्रतोरण का निर्माण करवाया था जो कि अवसरानुसार चन्द्रगुप्त पर गिराया जा सकता था; चन्द्रगुप्त के हाथी

अर्थशास्त्र में कहा गया है कि राजा को दिन और रात का समय आठ बराबर भागों में बाँटना चाहिए और इस प्रकार कार्य चलाना चाहिए—

"During the first one eighth part of the day, he shall post watchmen and attend to the accounts etc... during the second part, he shall look to the affairs of both citizens and country people: during The third, he shall not only bathe and dine, but also study; during the fourth, he shall not only receive revenue in gold, but also attend to the appointments of superintendents; during the fifth he shall correspond in writs with the assembly of his ministers, and receive the secret information gathered by his spies; during the sixth, he may engage himself in his favourite amusements or in selfdeliberation: during the seventh, he shall superintendent elephants, horses, chariots and infantry; and during the eighth part, he shall consider various plans of military operations with his commander-in-chief.

At the close of the day he shall observe the evening prayer (Sandhya).

को हांकने के लिए महावत के रूप में राक्षस ने अपना गुप्तचर उर्वरक को नियुक्त किया था और अपने भिषज (वैद्य) अभयदत्त द्वारा चन्द्र-गुप्त के लिए विषयुक्त औषधी तैयार करवायी थी। गुप्तचर प्रमोदक को राजा के शयन-कक्ष में तैनात किया गया था, और बीभत्सक व उसके साथियों को निद्रित अवस्था में चन्द्रगुप्त को मारने के लिये भेजा गया था। चाणक्य की सतर्कता और बुद्धिबल के सामने यद्यपि षड्यन्त्रकारी कुछ न कर सके और स्वयं ही अपने जाल में फंसकर विनष्ट हुए किन्तु इससे दूरदर्शी चाणक्य सजग हो गया और चन्द्रगुप्त की अंग-सुरक्षा के लिए वह पहले से हजार गुना सावधानी बरतने लगा—"ततः प्रभृति चन्द्रगुप्तशरीरे सहस्रगुणमप्रमत्तश्चाणक्य···" कौटिल्य अर्थशास्त्र में

During the first part of the night, he shall receive secret emissaries, during the second he shall attend to bathing and supper and study; during the third, he shall enter the bedchamber amid the sound of trumpets and enjoy sleep during the fourth and fifth parts, having been awakened by the sound of trumpets during the sixth part, he shall recall to his mind the injunctions of sciences as well as the day's duties; during the seventh, he shall consider administrative measures and send out spies; and during the eighth part, he shall receive benedictions from sacrificial priests, teachers and the high priest, and having seen his physician, chief cook and astrologer, and having saluted both a cow with its calf and a bull by circumbulating round them, he shall get into his court." (Ibid; pp. 37–38).

राजा की सुरक्षा के लिए जिस प्रकार हर तरह से सावधानी और अप्रमत्तता के साथ कार्य करने को कहा गया है—वह इस बात को प्रमाणित करता है कि शत्रुओं के षड्यन्त्रों के कारण चन्द्रगुप्त की शरीर-रक्षा के लिए चाणक्य ने निस्संदेह सावधानी के प्रयोगों को बहुत बढ़ा दिया था (Kau. Arth, Shrmshastri, chap XXI. BK. I.) अतः मेगास्थनीज अथवा स्ट्राबो का यह कहना कि राजा सुरक्षा के लिए रात में अपने शयन-कक्षों को बदलता रहता था—सत्य है।

राजप्रासाद में होनेवाले षड्यन्त्रों का संकेत करते हुए मेगास्थनीज कहता है कि जो स्त्री नशे में मदहोश राजा को मारती है वह उसके बाद उत्तराधिकार पानेवाले की पत्नी बनती है।[7] इस वृत्त से प्रकट है कि षड्यन्त्रकारी बहुधा राजा की हत्या के लिए राजा के निकट रहनेवाली स्त्रियों अथवा रानियों में से किसी को अपनी ओर मिला लेता था। शायद इसी कारण कौटिल्य ने राजा को निर्देश दिया था कि अन्तःपुर में रानी के पास जाने से पूर्व राजा को किसी बूढ़ी स्त्री के द्वारा रानी की शुचिता ज्ञात कर लेनी चाहिए तथा किसी भी स्त्री को बिना उसकी वैयक्तिक शुद्धता ज्ञात किये छूना नहीं चाहिए[8]—अन्तर्गृहगतः स्थविरस्त्री परिशुद्धां देवीं पश्येत्।

---

7. A woman who kills a king when drunk is rewarded by becoming the wife of his successor—Ancient India As Described in Classical literature, p. 58.

8 Kaut-Artha—Shamshastri; Chap. xx. Bk. I p. 40.

उत्तराधिकार नियम

उत्तराधिकार के बारे में मेगास्थनीज ने कहा है कि सामान्यत: 'पिता के बाद लड़के उत्तराधिकार पाते हैं।'

कौटिल्य के अनुसार ज्येष्ठपुत्र को उत्तराधिकारी बनाना सर्वोचित है। लेकिन यदि जेठा लड़का सुयोग्य न हो तो अन्य लड़कों में से जो भी योग्य हो उसे उत्तराधिकारी बनाना चाहिए[9] और यदि एक ही लड़का हो जो कि अयोग्य हो तो उसके या लड़की के लड़के में से जो योग्य हो उसे उत्तराधिकारी बनाया जाना चाहिए। लेकिन अकेले दुष्ट लड़के को कभी उत्तराधिकार न मिलना चाहिए। जो लड़का उत्तराधिकारी चुना जाय उसे सेनापति अथवा युवराज के पद पर नियुक्त करना चाहिए।

अंगरक्षक-स्त्रियाँ

मेगास्थनीज अथवा स्ट्रावो के अनुसार राजा के अंगरक्षक-दल की स्त्रियाँ, जिन्हें अर्थशास्त्र में 'स्त्रीगणैर्धन्विभिः' नाम से कहा गया है, उनके माता-पिताओं से खरीद की हुई होती थीं। कौटिल्य के अनुसार आर्यों (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र) में किसी को गुलाम के रूप मे बेचा अथवा खरीदा न जा सकता था। एरियन के अनुसार मेगास्थनीज का कहना है कि भारतीयों में कोई गुलाम नहीं होता था—

"...All the Indians are free and not one of them is a slave.[10]—अत: अंग-रक्षक दल के लिए खरीद की जानेवाली

---

9. इस निर्देश का गुप्त सम्राटों ने बहुधा पालन किया है—समुद्रगुप्त और चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य अपने पिताओं के जेठे लड़के न थे।

10. Ancient India; p. 69.

स्त्रियाँ भारतीय उद्भव की नहीं मानी जा सकती। तब वे स्त्रियाँ कौन थीं? कौटिल्य ने कहा है कि केवल म्लेक्ष (अथवा यूनानी) लोग ही अपने बच्चों को वेच अथवा बन्धक रख सकते है (Kautilya-Arth. Chp–XIII, BK. III, P. 206)। अत: प्रकट है कि ये अंगरक्षक-दल के लिए खरीदी जाने वाली स्त्रियाँ म्लेक्ष अथवा यवनियाँ (यूनानी) थीं। यवनियों का अंगरक्षिकाओं के रूप में रखे जाने का प्राचीन भारतीय साहित्य में बहुधा उल्लेख मिलता है। श्री रॉविन्सन् (Rawbinson) के अनुसार इन यवनियों को यूनान के व्यापारी अन्यान्य वस्तुओं के साथ बारिगाजा (भड़ौंच) आदि भारतीय नगरों में बेचने के लिए लाते थे और उन्हें ही, जैसा कि मेगा-स्थनीज संकेत करता है, खरीदकर सम्राट के निजी अंगरक्षक-दल में नियुक्त किया जाता था।[11]

---

11. मेगास्थनीज ने स्ट्राबो के अनुसार यह भी कहा है—'none of the Indians employ slaves'—India As Described in Classical literature; p. 58.

प्रोफेसर मोनहन (Monhan) का कहना है कि यह आश्चर्य की बात है कि एक जगह तो मेगास्थनीज (जैसा कि स्ट्राबो ने लिखा है) ने कहा है कि स्त्री-दासियाँ रखी जाती थीं और दूसरी जगह उसी ने यह भी कहा है कि 'भारतीय गुलाम नहीं रखते'–None of the Indians employ slaves?—The Early Hist. of Bengal, pp. 164–176.

श्री मोनहन ने मेगास्थनीज को ठीक से नहीं समझा है। यूनान में Slave (जिसका भारतीय भाषा में दास से अनुवाद किया गया है) वह था जिसके कोई व्यक्तिगत अधिकार नहीं थे, वह मृतक-तुल्य था; लेकिन भारत में जो दास-दासी होते थे उनके अपने निजी अधिकार भी थे—कौटिल्य ने स्पष्ट यह कहा है कि कोई भी आर्य (ब्राह्मण,

भोजन-शयन

कर्टिअस ने लिखा है कि राजा (चन्द्रगुप्त) का भोजन तैयार करने के लिए स्त्रियाँ ही रखी जाती थीं और स्त्रियाँ ही उसको मदिरा पिलाती थीं। नशे में चूर होने पर वेश्या-परिचारिकाएँ

क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र) दास याने गुलाम नहीं बनाया जा सकता और कोई किसी आर्य को बेच या बंधक नहीं रख सकता, केवल म्लेक्ष ऐसा कर सकते हैं (It is no crime for Mlechchhas to sell or mortgage the life of their own offspring. But never shall an Arya be subjected to slavery Chp. xlll Bk. III.)

साथ ही कौटिल्य ने यह भी निर्देश दिया है कि दासों के साथ जो ठीक व्यवहार न करे उन्हें उनका कर्त्तव्य सिखाना चाहिये (Kautilya Arthashatra Bk. II Chp. I)। अतः मेगास्थनीज ने slave अथवा दास का भारत में न रखा जाना यूनानी दृष्टि से ठीक ही कहा है।

निष्कर्षतः मेगास्थनीज द्वारा उल्लेखित अंगरक्षिकाएँ तथा कौटिल्य अर्थशास्त्र में वर्णित धनुर्धारी स्त्रियाँ जो प्रातः राजा का प्रथम अभिनन्दन करती थीं—शयनादुत्थितः स्त्रीगणैर्धन्विभिः परिगृह्येत (xxl, Bk. I)। वे शायद म्लेक्ष जाति की ही थीं क्योंकि म्लेक्ष ही अपनी लड़कियों को बेच सकते थे—आर्य नहीं।

पेरिप्लस (Periplus—49) ने पश्चिम से भड़ौंच आनेवाले माल में रूपवती कुमारियों का भी जिक्र किया है जिन्हें खरीदकर राजा लोग अपनी दासियाँ बनाकर रखते थे। भास और कालिदास के नाटकों में यवनियों का राजा की दासियों के रूप में उल्लेख है। टार्न के अनुसार इन यवनियों से अभिप्राय पश्चिमी देशों की कुमारियों से भी हो सकता

राजा को शयन-कक्ष में ले जाती थीं और वहाँ ले जाते समय वे रात्रि के भयों से राजा की रक्षा के हेतु रात्रि के देवताओं का आवाहन किया करती थीं।[12]

कौटिल्य अर्थशास्त्र के अनुसार राजा के लिए सुरक्षित स्थान में 'माहानसिक' के निरीक्षण में स्वादिष्ट भोजन तैयार किया जाता था। भोजन की ठीक तरह से जाँच होने के बाद ही राजा को भोजन परोसा जाता था, ताकि कोई शत्रुतावश भोजन में विष न मिला सके। राजा के स्नानगृह व शयन-कक्ष में गणिकाएँ ही परिचारिकाएँ नियुक्त की जाती थीं और राजा के वस्त्र धोने व फूलों के हार बनाने आदि का काम भी गणिकाएँ ही करती थीं।[13] अत: कर्टिअस का वेश्या-परिचारिकाओं का उल्लेख पूर्णतया संगत है।

मनोरंजन

आखेट, चन्द्रगुप्त का प्रमुख मनोरंजन था। इसका आगे वर्णन किया

है जो 'सीरिया' से भारत लाई जाती थीं। किन्तु उसका यह कथन कि व्यापार के लिए यवनियों का भारत में लाया जाना, दूसरी शताब्दी ई० पू० और उसके बाद से ही प्रारम्भ हुआ होगा; क्योंकि चन्द्रगुप्त की अंगरक्षिकाएँ भारतीय ही थीं, जिन्हें उनके माता-पिताओं से खरीद लिया जाता था, मान्य नहीं हो सकता जैसा कि हम ऊपर दर्शा चुके हैं—The Greeks In Bactria And India; p. 374.

12. India As Described In Classical Literature p. 58 Fn, 1.

13 Prostitutes shall do the duty of bath room servants, shampooers, bedding-room servants, washermen and flower garland—makers...Kau. Artha. Chp xxl; Bk. I.

जायेगा। आखेट के अलावा चन्द्रगुप्त को पहलवानों का मल्ल-युद्ध और पशुओं—जंगली बैल, भेड़, हाथी आदि की लड़ाई देखने का भी बहुत शौक था। इसके लिए सम्राट प्रतिवर्ष एक दिन नियत रखता था। एप्पियन लिखता है—'The great king of the Indians appoints a day every year for fighting between men......and also even between brute animals that are horned. These butt each other, and with a natural ferocity that excites astonishment, strive for victory, just like athelets Stari-ning every nerve whether for the highest prize or for proud distinetion, or for fair renown Now these combatants are brute animals–wild bulls; tame rams..., unicorn asses, hyaenas...Before the close of the spectacle elephants come forward to fight and with their tusks inflict death wounds on each other. One not unfreque-ntly proves the stronger, and it not unfrequently happens that both are killed "[14]

व्यायाम

मेगास्थनीज के अनुसार स्ट्राबो कहता है, भारतीयों का मुख्य व्यायाम चिकनी लकड़ी (ebony) के गोलाकार बेलनों से शरीर रगड़ना था। सम्राट् चन्द्रगुप्त के व्यायाम का मुख्य प्रकार भी यही था।

स्ट्राबो ने लिखा है—'Their (Indians) favourite mode of exercising the body is by friction applied in various ways, but especially by passing smooth ebony rollers over the skin.'

---

14. India As Described In The Classical Litera-ture; p. 145.

और फिर दूसरे स्थल पर राजा की दिनचर्या का उल्लेख करते हुए वह कहता है—

He then remains in court for the whole day, without allowing the business to be interrupted, even though the hour arrives when he must needs attend to his person,—that is when he is to be rubbed with cylinders of wood."[15]

व्यायाम के इस प्रकार का महाभारत, रामायण और प्राचीन संस्कृत नाटकों में भी उल्लेख मिलता है। रामायण के अनुसार यह कार्य स्त्रियाँ किया करती थीं।[16]

राजकीय उत्सव

स्ट्राबो के अनुसार सम्राट् के बाल धोये जाने के अवसर पर भारतीय बहुत बड़ा उत्सव मनाते थे और इस अवसर पर प्रत्येक व्यक्ति राजा को बढ़िया से बढ़िया उपहार भेंट करने में अपने पड़ोसी से होड़ लिया करता था। यह उत्सव सम्भवतया जन्मदिन के अवसर पर मनाया जाता था।[17] एलियन ने राजा को भेंट दिये जाने वाले उपहारों में पालतू बाघ, चीता, बैल, कुत्ता, बन्दर और पीले वर्ण के कबूतर आदि गिनाये हैं। वह

15 Ancient India; pp, 70 and 72.

16. Ancient India As Described in Classical Literature; p. 57 Fn. 1.

17 When the king washes his hair they celebrate a great festival, and send him great presents each person seeking to outrival his neighbour in displaying his wealth—

Ibid; p. 75 and Fn. 2.

लिखता है—"The Indians. bring to their king tigers made tame, domesticated panthers, and oryxes with four horns. of oxen there are two kinds—one fleet of foot, and the other extremly wild, and from (the tails of) these oxen they make fly-flaps. The hair on their body is entirely black, but that of the tail is of the purest white. They bring also pegions of a pale yellow plumage which they ever cannot be tamed or ever cured of their ferocity; and Korkonoi (an unknown bird) as well as dogs of noble breed..., and apes some of which are white and others again black" Ibid, pp 144—145)

अशोक के अभिलेखों से प्रकट है कि राजकीय-उत्सव का दूसरा मुख्य अवसर 'अभिषेकदिवस' था। इस अवसर पर प्रतिवर्ष दर्बार की ओर से महोत्सव मनाया जाता था और उसके उपलक्ष में बन्दी रिहा किये जाते थे—(या व सडुवीसति वस अभिसितेन मे एताये अतलिकाये पनंवीसति बन्धनमोखानि कटानि— अर्थात् यावत् षड्विंशत्तिवर्षा-भिषिक्तेन मया एतस्मिन्नन्तरे पञ्चविंशतिबन्धन मोक्षाः—अब तक १६वें वर्ष यावत् तिलक होने के मैंने २५ बार बन्दियों को मुक्त किया है,' पंचम् स्तम्भलेख)।

उपनाम

मेगास्थनीज के अनुसार सम्राट अपने नाम के साथ राजनगरी पालीबोथ्रा (पाटलिपुत्र) के नाम पर भी एक उपनाम अथवा उपाधि धारण किया करता था। स्ट्राबो लिखता है—

"The king, in addition to his family name must adopt the surname of Palibothros, as Sandrokottes for

instance did to whom Megasthenes was sent on an embassy'—Ibid; p. 43.

मुद्राराक्षस में चन्द्रगुप्त को देव और प्रियदर्शन व देवश्री की उपाधियों से अलंकृत किया गया है ('देवस्य चन्द्रश्रियो' और प्रियदर्शनस्य 'चन्द्रश्रियो'—षष्ठ-अंक)।

उपनाम व उपाधि धारण करने की यह पद्धति मौर्य-राजाओं में सर्वप्रिय थी। यूनानी लेखकों से मालूम होता है कि बिन्दुसार की उपाधि 'अमित्रघात' (Amitrachates) अथवा अमित्रखाद (Amitrakhada) थी; और अशोक के अभिलेखों में उसकी सुप्रसिद्ध उपाधि 'देवानांप्रिय प्रियदर्शी' मिलती है।

चन्द्रगुप्त का वैभव—राजप्रासाद

राजप्रासाद—चन्द्रगुप्त का राजप्रासाद उसके युग के विश्वभर के राजप्रासादों में अद्वितीय था। मुद्राराक्षस के अनुसार चन्द्रगुप्त का राजभवन 'सुगाङ्गप्रासाद' नाम से सुप्रख्यात था। ऐलियन (Allian) के शब्दों में मिमोनियन सूसा अपने सम्पूर्ण वैभव या इकबताना अपने सम्पूर्ण गौरव के साथ चन्द्रगुप्त के राजप्रासाद की स्पर्धा न कर सकते थे। राजभवन की वाटिकाओं में मोर और बाज पाले जाते थे। राज-उद्यान अनेक प्रकार के वृक्षों, पताओं व कुंजों आदि से सुशोभित रहता था। कुछ पेड़ ऐसे थे जिनकी देख-रेख के लिए विशेष रूप से आदमी रखे जाते थे। पेड़ों की टहनियों को मिलाकर माली बड़े सुन्दर कुंज बनाकर रखते थे और उनकी पत्तियाँ झड़ा न करती थी। कुछ पेड़ स्वदेशीय मूल के थे और कुछ बहुत सावधानी के साथ बाहरी देशों से मँगवाकर लगाये गये थे। इन पेड़ों की सुन्दरता से उद्यान की छटा अत्यन्त मनोरम हो गयी थी।

राजोद्यान में बहुधा तोते राजा के आस-पास फुदकते और उस पर मडराया करते थे। राजप्रासाद के आँगन में सुन्दर पुष्करणियाँ या सरोवर बने थे, जिनमें बड़ी-बड़ी किन्तु पालतू मछलियाँ पाली जाती थीं।

किशोर राजकुमारों के अलावा इन मछलियों का कोई अन्य शिकार नहीं कर सकता था। इन सरोवरों में राजकुमार नाव खेना भी सीखा करते थे।[18]

---

18. एलियन का यह विवरण संभवतया मेगास्थनीज द्वारा लिखित चन्द्रगुप्त के राजप्रासाद के वर्णन पर आधारित है—(Ibid; p. 142, Fn. I.).

'In the Indian royal palace whence the greatest of all the kings of the country resides, besides much else which is calculated to excite admiration and with which neigther Memcnian Susa with all its costly splendour, nor Ekbatana with all its magnificience can vie (for, me thinks only the well known vanity of the Persians could prompt such a comparison), there are other wonders besides......In the parks tame peacocks are kept, and pheasants which have been domesticated; and among cultivated plants there are some to which the king's servants attend with special care, for there are shady groves and pasture grounds planted with trees, and branches of trees which the art of the woodsman has deftly interwoven. And these very trees, from the unusual benignity of the climate are ever in bloom, and untouched by age, never shed their leaves; and while some are native to the soil, others are brought from other parts and...enhance the charms of the landscape...Parrots are natives of the country and keep

कर्टिअस ने भी चन्द्रगुप्त के राजप्रासाद के अपूर्व वैभव और छटा का वर्णन करते हुए लिखा है कि राजभवन के स्तम्भ सुवर्ण-मंडित थे और उनपर सोने की अंगूरलताएँ, जिनपर चाँदी की कलापूर्ण सुन्दर चिड़िया बनी थीं, चढ़ा दी गयी थीं।[19]

चन्द्रगुप्त के राजप्रासाद के भवनों के छिटपुट अवशेष पटना के पास बुलन्दिबाग और कुमारहार गाँव में मिले हैं। चन्द्रगुप्त का राजभवन कुमारहार गाँव के निकट था और उसके निर्माण में विशेषतया लकड़ी का उपयोग किया गया था।[20] इन अवशेषों से प्रतीत होता है कि राजप्रासाद में अनेक भवन थे।[21] इनमें सबसे भव्य पाषाण के स्तम्भोंवाला बृहत्मंडप

---

hovering about the king and wheeling round him...... within the palace grounds there are also artificial ponds of great beauty in which they keep fish of enormous size but quite tame. No one has permission to fish for these except the king's sons...These youngsters amuse themselves without the least risk of being drowned while fishing in the unruffled sheet of water and learning how to sail their boats'—(Ibid; pp 141–142).

19. Ancient India And Its Invasion By Alexander; p 180.

20. The Oxford Hisorty of India; V. Smith Second-ed; p 77.

21. कौटिल्य ने राजा का निजी निवास मोहनगृह (Delusive Chamber) के मध्य में बनाये जाने का निर्देश दिया है। राजा के भवन में आने-जाने के लिये दीवारों में गुप्त-मार्ग (गूढभित्तिसोपानं) भी बने होते थे। भूमि के नीचे भी राजा का गृह होता था (भूमिगृह) और

(Hall) था। स्तम्भ नियमित रूप से पंक्तियों में थे। मंडप की फर्श और छत लकड़ी की बनी थी। पत्थर के स्तम्भों के अवशेषों से अनुमान होता है कि संभवतया मूलतः मंडप में लकड़ी के ही स्तम्भ थे (क्योंकि मौर्य-काल में पत्थर का प्रयोग अशोक से प्रारम्भ हुआ), लेकिन बाद में अशोक ने लकड़ी के स्तम्भों को हटवा कर उनकी जगह पत्थरों के स्तम्भ लगवा दिये थे अथवा पत्थरों के स्तम्भोंवाला मंडप बाद में अशोक द्वारा ही बनवाया गया था।[22]

उसमें आने-जाने के लिए गुप्त सुरंग (अनेक मुखक्षाससञ्चारम्) होती थीं। दूसरी मंजिल में भी राजा का भवन होता था और उसमें जाने के लिए दीवार के भीतर गुप्त-रूप से सीढ़ियाँ बनी होती थीं। राजा का वासगृह इस प्रकार निर्मित किया जाता था कि आवश्यकता पड़ने पर उसे गिरा भी दिया जा सके—वासगृहं यन्त्रबद्धतलावपातं कारयेद् आपत्प्रतीकारार्थम् (KT. Arth Chp. xx; BK. I. p. 39)। मुद्राराक्षस में भी यन्त्रतोरण (जो कि इच्छानुसार गिराया जा सकता था); और राजगृह के भीतर आने-जाने के लिये गुप्त-सुरंगों का उल्लेख है (द्वितीय अंक)।

22. डा० नीहाररञ्जन रे कहते हैं—

"It is dificult to say whether the Maurya Pillard Hall at Patllputra was the conception of Chandragupta himself or one of his successors—personally I think it was built at the direction of Asoka" The Age of The Nandas Aud Mauryas; p. 358.

"The palace appears to have been an aggregate of buildings; the most important of which was an immense pillard hall supported on a high substratum of wood. The Pillars were set in regular rows, thus divi-

डा० स्पूनर (Dr. Spooner) और वि० स्मिथ आदि कतिपय विद्वानों का मत है कि चन्द्रगुप्त का राजप्रासाद शायद ईरानी राजमहल की शैली पर ईरानी-शिल्पियों के द्वारा बनाया गया था; क्योंकि मौर्य राजप्रासाद का स्तम्भोंवाला मंडप परसिपोलिस के ईरानी राजभवन के स्तम्भोंवाले मंडप के जैसा है।[23] मंडपों की सामान्य एकरूपता को देखकर

---

ding the hall into a numb.r of smallar square bays. Fragments of stone pillars, including one nearly complete, with their round tapering shafts and smooth polish indicate that the great Asoka was responsible for the construction of the hall or at least for the stone columns which replac d the earlier wooden ones." The Age of Imperial Unity; p. 487.

23. JRAS, 1915; pp. 63 ff, 403 ff.

"Excavations at the site support the belief that the buildings were design-d in imitation of the Persian palace at Persep.lis'—The Oxford History of India; IInd ed, p 77.

किन्तु साथ ही श्री स्मिथ का यह भी ख्याल है कि—"The resemblance of the Maurya buildings with the Persian Palace at Persepolis was not definitely established' The Pol. Hist. of Ancient India; p 225.

श्री आर० पी० चन्दा (R. P. Chanda) स्पूनर का आधार लेकर कहते हैं—

"Whereas no other structure of really early date in Ancient India disclosed, says spooner, an arrange-

मौर्य-राजप्रासाद को ईरानी प्रकार का घोषित करना संगत न होगा। यह भी हो सकता है कि ईरानी मंडप ही भारतीय शैली पर तैयार किया गया था। हैवेल के शब्दों में हमारा भी यह मत है कि विदेशी यवन-प्रभुता से भारत को मुक्त करनेवाला और भारत के प्रथम राष्ट्रीय एवं ऐतिहासिक महान् मौर्य-साम्राज्य की संस्थापना करने वाला प्रवीर चन्द्रगुप्त कला के क्षेत्र में ईरानियों की बौद्धिक प्रभुता को कदापि संहन नहीं कर सकता था।[24]

-ment of pillars in square bays over the whole floor the hall at Kumarhar did show this otherwise unparalleled arrangement, and this was identical with the arrangement of the pillars in the Achaemenian Hall The Columns themselves moreover showed a technique in their polished surface which is not only known to have been un-Indian, and outside the line of Indian architectural development but which again is idenical with Persepolitan workmanship " और आगे इस ईरानी शैली के कारण पर प्रकाश डालते हुए श्री चन्दा कहते हैं—

"This adoption of the Persepolitan style of building at Patliputra was not the natural result of the contact of the Achaemenian and Indian sculptures but was due to conscious adoption of the plan of the Achaemenian Hall of Public Audience by the Mauryan Emperor (Asoka) as a part of the paraphernalia of his Imperialism—" Beginning of Art In Eastern India; p, 12.

24. Aryan Rule In India; Havell.

कुमारहार गाँव के पास के राजभवन और स्तम्भोंवाले मंडप तथा डेरियस के भवन और सिंहासन-मंडप में सादृश्य लक्षित करते हुए डा० स्पूनर ने यह भी कल्पित किया है कि मौर्य जरथुस्त्रीयन-धर्म (Zoroastrian) के मानने वाले थे (JRAs; 1915 pp. 63. ff, 405 ff)। इस तथ्यहीन अन्दाज को हम अद्भुत ही कह सकते हैं—भारत के प्राचीन ब्राह्मण, जैन और बौद्ध साहित्य में उपलब्ध विवरणों तथा यूनानी लेखकों के वर्णनों से निर्विवादतः प्रकट है कि प्रथम मौर्य ब्राह्मणधर्मी था और शायद जीवन के अन्तिम भाग में उसका जैन-धर्म के प्रति भी कुछ झुकाव हो गया था। यदि मौर्य चन्द्रगुप्त जरथुस्त्री धर्म का माननेवाला होता तो ईरान के सम्बन्ध में पूरी जानकारी रखने वाले प्राचीन यूनानी लेखक मेगास्थनीज आदि इस बात को लिखना नहीं भूल सकते थे कि ईरानी राजा की तरह भारतीय राजा भी जरथुस्त्रीधर्म का मानने वाला था। मौर्य-राजभवन का वर्णन करते हुए एलियन (अथवा मेगास्थनीज और कटिअस) को सूसा और इकबताना के राजभवन याद आये ही थे। अतः यदि भारतीय राजा के धर्म और राजकीय-जीवन में ईरानी साम्य और प्रकार का होता तो यूनानी लेखक इस सबका अवश्य ही उल्लेख किये होते।

और यदि यह मान भी लिया जाय कि मौर्य और ईरानी स्थापत्य में समानता थी तो वह इस बात का प्रमाण नहीं हो सकता कि मौर्य ईरानी-मूल के थे अथवा ईरानी-धर्म के मानने वाले थे—श्री चन्दा के शब्दों में—

Ethnologist do not recognize high class architecture as test of race, and in the opinion of experts the buildings of Darius and Xerxes at Persepolis are not Persian in style, but are mainly dependent on Badylonian models and bear traces of the influence of Greece, Egypt and Asia Minor".

The Political History of Ancient India, p. 225

हमें एलियन का यह कथन भी स्मरण रखना चाहिये कि मौर्य-प्रासाद और ईरानी राजभवनों में समानता बतलाना—बतलाने वालों की ईरानी अहमन्यता ही प्रकट करता है। ऐलियन का वक्तव्य इस प्रकार है—

"Methinks only the well known vanity of the Persians could prompt such a comparison"

ईरानी प्रभाव प्रकट करने वाले वर्तमान लेखकों का ध्यान एलियन के इस वक्तव्य की ओर आकृष्ट करते हुए श्री रायचौधरी उन्हें स्मरण कराते हैं—

"This statement should be remembered by those modern writers who find traces of Persian influence in Maurya architecture."[25]

राजधानी पाटलिपुत्र

यूनानी लेखकों के अनुसार चन्द्रगुप्त की राजधानी पालिमबोथ्रा—पालिबोथ्रा अथवा पाटलिपुत्र भारत का सबसे बड़ा नगर था।[26] यह नगर सोन (Erannoboas) संस्कृत 'हिरण्यबाहु' और गंगा नदी के संगम पर बसा था। एरियन (Arrian) के अनुसार 'गंगा भारत की सबसे बड़ी नदी है और सोन गंगा से छोटी है, लेकिन बड़ी नदियों में उसका तीसरा स्थान है।' आगे मेगास्थनीज के आधार पर उसने लिखा है कि इस नगर की लम्बाई ८० स्टेडिया (९½ मील) और चौड़ाई १५ स्टेडिया (१¾ मील) थी। इस नगर के चारों ओर एक खाई थी जो

25. Ibid; p. 224.

26. दीपवंश में पाटलिपुत्र को पुरों में उत्तम कहा गया है—Patliputte puruttame—H. Oldenburg; p. 43.

६०० फीट चौड़ी और ३० क्यूबिट गहरी थी। नगर के चारों ओर लकड़ी की दीवार भी थी जिस पर ५७० बुर्ज अथवा अट्टालिकाएँ बनी थीं और प्रवेश के लिए उसमें ६४ द्वार थे।[27] स्ट्राबो ने लिखा है कि पाटलिपुत्र नगर समानान्तर चतुर्भुज (Parallelogram) के रूप का था। इसको घेरनेवाली दीवार लकड़ी की थी जिसमें तीर चलाने के लिए सूराख बने थे। कचरा या गंदा पानी बहाने के लिए दीवार के सामने की तरफ खाई भी खोद दी गयी थी।[28]

---

27 "...The greatest city in India is that which is called Palimbothra, in the dominians of the Parisians (संस्कृत प्राच्यवाले), where the streams of the Erannoboas and the Ganges unite,—the Ganges being the greatest of all rivers, and the Erannoboas being perhaps the third longest of Indian rivers, though greater than the greatest rivers elsewhere; but it is smaller than the Ganges where it falls into it Megasthenes informs us that this city stretched in the inhabited quarters to an extreme length on each side of eighty stadia, and that a ditch encompassed it all round, which was Six hundred feet in breadth and thirty cubits in depth, and that the wall was crowned with 570 towers and had four and sixty gates"—Ancient India; p. 68.

28. 'It (Patliputra) is of the shape of a parallelogram, and is surrounded by a wooden wall, pierced with loopholes for the discharge of arrows It has a ditch in front for receiving the sewage of the city. —India As Describ d In Classical Literaturse; p. 42.

चन्द्रगुप्त का अन्त

पुराणों तथा बौद्ध-गाथाओं दोनों के अनुसार यशस्वी सम्राट प्रवीर चन्द्रगुप्त ने २४ वर्ष राज्य किया[29] और लगभग ई० पू० २९८-९७ में

डाओडोरस (Diodorous) ने लिखा है कि पाटलिपुत्र नगर की स्थापना 'हिराक्लस' (Herakles) ने की थी (Iudia As Descri bed In Classical Literature p 43; fn 3)। यह नगर वास्तव में अजातशत्रु के बेटे उदयिन अथवा उदयभद्र ने बसाया था—दीघनिकाय—Ancient India; R. S. Tripathi p. 103।

जैनग्रन्थ परिशिष्टपर्वण के अनुसार उदयिन ने गंगा के तट पर जहाँ एक सुन्दर पाटलिद्रुम था अपनी नई राजधानी बसायी थी और पाटलिवृक्ष के नाम पर राजनगरी का नाम पाटलिपुत्र रखा था—षष्ठ सर्ग; ३३-४१

नन्दों और मौर्यों के समय से लेकर गुप्तों के समय तक यह नगर भारत का सर्वप्रमुख और सर्वप्रसिद्ध नगर रहा। ५ वीं शताब्दी ई० सन् के प्रारम्भ में जब फाहियान ने भारत की यात्रा की थी, उस समय भी यह नगर श्रीसम्पदापूर्ण था, किन्तु गुप्त-युग के बाद यह नगर श्रीविहीन होता चला गया और धीरे-धीरे उसकी जगह महोदय या कन्नौज (कान्यकुब्ज) ने ले ली। ७ वीं शती के प्रारम्भ में जब ह्वेनसांग ने पाटलिपुत्र की यात्रा की थी तो उसने इस नगर को उजाड़ और श्रीविहीन पाया था।

29—Chandraguptani nrpam rajye
Koti yah sthapayisyati
Catur-Vimsat Sama Raja
Candragupto bhavisyati—Vayu—The Dynasties Of The Kali Age; F. E. Pargiter; p. 28.

उसकी मृत्यु हुई। जैन-अनुश्रुतियों के अनुसार चन्द्रगुप्त जीवन के अन्तिम दिनों में जैन हो गया था यद्यपि चाणक्य ने सम्राट को ब्राह्मणधर्म छोड़कर जैन-प्रभाव में जाने से रोकने की बहुत चेष्टा की थी। जैन होने पर चन्द्रगुप्त ने समाधि द्वारा जीवनलीला समाप्त की थी (**समाधिमरणं प्राप्य चन्द्रगुप्तो दिवं ययौ--परिशिष्टपर्वण-अष्टम सर्ग--४४४**)। जैन-पुस्तक राजवलीकथे के अनुसार जैन-आचार्य भद्रबाहु पाटलिपुत्र के सम्राट चन्द्रगुप्त से मिला। उसने सम्राट के १६ स्वप्नों का अर्थ समझाया और अन्तिम स्वप्न के अनुसार १२ वर्ष का अकाल व दुर्भिक्ष होने की भविष्यवाणी की। अकाल प्रारम्भ होने पर चन्द्रगुप्त ने राज्य अपने पुत्र सिंहसेन को दे दिया और जैन-धर्म अंगीकार कर भद्रबाहु के साथ कर्नाटक चला गया। वहाँ वे एक पहाड़ी पर रहने लगे। कुछ ही समय बाद वहीं पहाड़ की एक गुफा में भद्रबाहु की मृत्यु हो गयी और चन्द्रगुप्त ने उसका अन्तिम संस्कार सम्पन्न किया। कुछ समय बाद सिंहसेन के लड़के भास्कर ने दक्षिण जाकर चन्द्रगुप्त की वन्दना की और पहाड़ी के निकट बेलगोला नाम का नगर बसाया। अन्त में चन्द्रगुप्त की भी वहीं मृत्यु हुई।

नवीं शती के दो अभिलेखों में जो श्रृंगापट्टम के पास कावेरी नदी के गौतम-क्षेत्र में मिले हैं, कहा गया है कि श्रवण-बेलगोला की पहाड़ी पर भद्रबाहु और मुनीपति चन्द्रगुप्त के पदचिन्ह अंकित हैं। श्रवणबेल-गोला में प्राप्त सातवीं शती के एक अभिलेख में भी भद्रबाहु और मुनीन्द्र चन्द्रगुप्त का उल्लेख है।

स्थानीय गाथाओं के अनुसार श्रवणबेलगोला की दो पहाड़ियों में से छोटी पहाड़ी का नाम चन्द्रगुप्त के नाम पर चन्द्रगिरि पड़ा। इस पहाड़ी की दो गुफाओं में से एक भद्रबाहु स्वामिन् के नाम से कहलाती है

Candagutto rajjam Karesi Vassani catuvisati—DIPAVAMSA; H. Olden Berg; p. 41.

और दूसरी चन्द्रगुप्तबस्ती कही जाती है। इन वृत्तों के आधार पर श्री राइस ने यह निष्कर्ष निकाला था कि उक्त भद्रबाहु अन्तिम श्रुतिकेवलिन् था और चन्द्रगुप्त प्रथम मौर्य सम्राट थे। इस निष्कर्ष के अनुसार अधिकतर विद्वान यह मानते हैं कि चन्द्रगुप्त जीवन के अन्तिम दिनों मे जैन हो गया था और भद्रबाहु के साथ वह सन्यास लेकर दक्षिण चला गया जहाँ श्रवणबेलगोला की पहाड़ी में समाधि द्वारा उसने जीवन-लीला समाप्त की। किन्तु डा० फ्लीट ने राइस के इस मत को स्वीकार नही किया है। उनका कहना है कि राजावलीकथे के ही अनुसार उक्त चन्द्रगुप्त अशोक के लड़के कुणाल का पुत्र था।[30] अतः "The Chandragupta in question was not the wellknown grandfather of Asoka—The Sandrakottes of the Greeks, at all, but a son otherwise unknown of Asoka's son Kunala"—डा० फ्लीट ने यह भी स्पष्ट कर दिया है कि श्रवणबेलगोला-अभिलेखों में अभिलेख नं० एक में भद्रबाहु स्वामिन् के शिष्य का नाम आचार्य प्रभाचन्द्र दिया गया है। यह भद्रबाहु अन्तिम श्रुतकेवलिन् न था, वह दूसरा ही भद्रबाहु था और प्रभाचन्द्र नाम सन्यास ग्रहण करने पर चन्द्रगुप्त मौर्य का धारण किया हुआ दूसरा नाम न था जैसा कि राइस का मत है। अन्त में फ्लीट कहते हैं कि श्रवणबेलगोला-गाथाओं और अभिलेखों में उल्लेखित चन्द्रगुप्त वस्तुतः गुप्तिगुप्त है (५३ ई० पू०) जो एक दूसरे ही जैन-आचार्य भद्रबाहु द्वितीय का शिष्य था और ३१ ई० पू० में वह स्वयं भी आचार्य पद को पहुँच गया था।[31]

---

30. श्री डा० राजबली पांडेय के मत में जैनअनुश्रुति की प्रमाणिकता में सन्देह है। यह बहुत कुछ अशोक के पौत्र संप्रति (चन्द्रगुप्त द्वितीय) पर लागू होती है—भारतीय इतिहास की भूमिका—पृ० १४२

31. The Indian Antiquary, vol. XXI, 1892, pp. 156–160.

राइस के विपरीत फ्लीट का मत अधिक संगत और मान्य लगता है। श्री रायचौधरी ने भी इस समस्या का विश्लेषण करते हुए बहुत सही प्रकट किया है कि जैन-अनुश्रुतियों के विपरीत चन्द्रगुप्त अन्त तक ब्राह्मण-धर्म का ही अनुयायी बना रहा, यद्यपि जीवन के उत्तरार्द्ध में तीर्थंकरों के प्रति भी उसमें थोड़ा-बहुत आदर-भाव पैदा हो गया था—"Greek evidence however suggests that the first Maurya did not give up the preformance of sacrificial rites and was far from following the Jaina creed of Ahimsa or non-injury to animals. He took delight in hunting, a practice that was continued by his son and is also alluded to by his grandson Asoka in the eighth Rock edict. It is however possible that in his later years the emperor, though officially a Brahmanical Hindu, paid some reverence to the Tirthankaras as the imperial patrons of vasubandhn and Hiuen Tsang did to the Buddha".[32]

श्रीमंजुश्रीमूलकल्प के अनुसार चन्द्रगुप्त ने चूँकि बहुत से प्राणियों का वध किया था, इसलिए विपाक्त-स्फोट या व्रण से मूर्छित होकर उसकी मृत्यु हुई थी—

अकल्याणमित्रमागम्य कृतं प्राणिवधं बहु ।
तेन कर्मविपाकेन विस्फोटैः स मूर्छितः ॥४४१॥

इस उल्लेख से दो बातें इंगित होती हैं—एक तो यह कि चन्द्रगुप्त 'अहिंसा' धर्म का माननेवाला न था और दूसरा यह कि उसकी मृत्यु व्रण-रोग से हुई थी। अतः यह अनुमान अधिक संगत है कि चन्द्रगुप्त

32. Indian Cutlure, vol. II, 1935; p. 564.

प्रमुखत: ब्राह्मणधर्म का माननेवाला था; यद्यपि हो सकता है जीवन के अन्तिम दिवसों में जैन-आचार्यों के प्रभाव से उसका जैन-धर्म के प्रति भी आदरपूर्ण झुकाव हो गया हो। किन्तु जैन-धर्म का वह इतना कठोर व्रतधारी हो गया था कि अधेड़ उम्र में ही समाधि द्वारा उसने जीवन-लीला समाप्त कर दी थी—सही नहीं प्रतीत होता। चन्द्रगुप्त जिसने म्लेक्षों और नन्दों से भारत को प्रश्रय और सुरक्षा प्रदान की थी; जो मौर्यवंश का प्रथम संस्थापक था और इसलिए जिसपर मौर्य साम्राज्य के सुसंगठन और सुव्यवस्था का प्रारम्भिक उत्तरदायित्व था; वह अपरिपक्व उम्र[33] में वैयक्तिक-आत्मलाभ के लिए सारे उत्तरदायित्वों को अपने कन्धों से ढकेलकर समाधि में लीन हो गया—कदापि संगत और मान्य नहीं किया जा सकता। यद्यपि यह माना जा सकता है कि अन्य धर्मों के प्रति भी वह उदार रहा होगा, क्योंकि वह एक धर्मात्मा और सत्यानुरागी व्यक्ति था, जिसका प्रमाण चन्द्रगुप्त के संदर्भ में मंजुश्रीमूलकल्प के लेखक का यह कथन है—सत्यसन्धश्च-धर्मात्मा। उसका वैयक्तिक जीवन आदर्शपूर्ण था, यह यूनानी लेखकों द्वारा वर्णित उसकी दिनचर्या से भी प्रकट है। परिशिष्टपर्वण के विवरण से मालूम होता है कि उसकी एक ही पत्नी थी, जिसका नाम राज्ञी दुर्धरा था और जो उसके उत्तराधिकारी बिन्दुसार की जन्मदात्री थी—अष्टम सर्ग–४३९–४४३। अत: चन्द्रगुप्त की एक पत्नी यदि सिल्यूकस राजकुमारी भी थी तो उसकी कुल दो

---

33. 'Chandragupta seems to have died comparatively young. He had a reign of 24 years, both according to the Puranas and the Budhist records. He was a young man when he ascended the throne. Probably he died about 45 leaving a minor'—An Imperial History of India; p. 17.

पत्नियाँ हमें मालूम हैं और यह उसके आदर्श चरित्र और जीवन की संयमितता को ही प्रदर्शित करता है।

यशस्वी चन्द्रगुप्त प्राचीन भारत के प्रवीर, योग्य और महान् सम्राटों की नक्षत्रावली में प्रथम प्रकाशमान् नक्षत्र है, जिसके प्रकाशित मार्ग पर चलकर उसके उत्तराधिकारी बिन्दुसार और अशोक भारत को एकसूत्र में ग्रथित रखने में समर्थ रहे और जिसके आदर्शों का शताब्दियों बाद गुप्त-सम्राटों ने भी अनुसरण और अनुकरण कर समर और शासन दोनों में साफल्य प्राप्त किया। सम्राट समुद्रगुप्त, विक्रमादित्य चन्द्रगुप्त और प्रवीर स्कन्दगुप्त ने प्रथममौर्य की तरह ही विदेशी शक, कुषाण और हूणों का दलन कर अपने समय में भारत को वैदेशिक परतन्त्रता से मुक्त किया था तथा मौर्य-शासन एवं सामरिक प्रणाली को ही गुप्त साम्राज्य की सुव्यवस्था और सुसंगठन के लिए आधारशिला बनाया था।[34]

चन्द्रगुप्त वज्रकठोर योद्धा और न्याय व व्यवस्था का लौह-पुरुष होने के साथ-साथ मुगलवंश के महान् संस्थापक बाबर की तरह ही प्रकृति से सान्निध्य और कला व सौन्दर्य से एकरागात्मक सम्बन्ध रखनेवाला एक मृदुल, सरस और कोमल-हृदयी व्यक्ति भी था। उसका वैभव और कला के लालित्य से पूर्ण राजप्रासाद जो उस युग में अद्वितीय था, उसके कला-प्रेमी व सौन्दर्य का पारखी होने का प्रमाण उपस्थित करता है। उसका अनोखे विटपों और सदाबहार वाले वृक्षों से परिपूर्ण प्रमोदवन जो विभिन्न प्रकार के रंग-बिरंगे सुन्दर पक्षियों से कूजित और गुंजित रहता था, और राजभवन के आँगन के स्फटिक जैसे स्वच्छ सरोवर और उनमें तिरनेवाली सुन्दर वृहत्तकार मछलियाँ उसके प्रकृति-प्रेम और रसात्मक कवि-हृदय के साक्षी हैं।

---

34. Proceedings of the Indian History Congress, 1949; p. 105 and ff.

अध्याय—४

चन्द्रगुप्त की साम्राज्य-व्यवस्था

सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्य एक अद्वितीय जन-नायक, सेनापति व योद्धा ही नहीं था, वह एक अत्यन्त कुशल शासक और व्यवस्थापक भी था। उसके सौभाग्य से उसे व्यावहारिक राजनीति के महान् पंडित, द्रष्टा और कूटनीति में निपुण विष्णुगुप्त चाणक्य अथवा कौटिल्य का सहयोग प्राप्त रहा। यदि मंजुश्रीमूलकल्प का कथन सच माना जाय तो कौटिल्य चन्द्रगुप्त का ही नहीं अपितु उसके बेटे बिन्दुसार और कुछ समय तक उसके पौत्र अशोक का भी महामंत्री रहा था।[1]

1, बिन्दुसार के मन्त्री का उल्लेख करते हुए मंजुश्रीमूलकल्प मे कहा गया है कि उसका मंत्री—

"चाणक्य इति विख्यातः क्रोधसिद्धस्तु मानवः।
यमान्तका नाम वै क्रोधः सिद्धस्तस्य च दुर्मतेः ॥४५४॥
तेन क्रोधाभिभूतेन प्राणिनो जीविताद्धता।
कृत्वा तु पापकं तीव्रं त्रीणि राज्यानि वै तदा ॥४५५॥
दीर्घकालाभिजीवीसौ भविता द्विजकुत्सितः।
ततोऽसौ नारक दुःखं अनुभूयेह दुर्गतिः।
विविधा नारकां दुःखां अनिष्टां कर्मजां तदा ॥४५८॥

डा० जायसवाल का मत है—

चाणक्य को मंजुश्रीमूलकल्प के लेखक ने क्रोध-सिद्ध और यमराज तथा कुत्सित द्विज कहा है क्योंकि वह बौद्ध न था, लेकिन साथ ही उसे अहितकारी कार्यों को विनष्ट करने और हितकारी कार्यों को कार्यान्वित करनेवाला भी कहा है अतः स्पष्ट है कि एक राजनीतिज्ञ और महामात्य के रूप में ब्राह्मण चाणक्य के विरोधी अ-ब्राह्मण पंडित भी उसे अद्वितीय मानते थे।[2]

"Chanakya must have come down to the opening years of Asoka to be the Mantrin in three reigns. He would have thus maintained the unity of the Maurya policy for over 50 years in his person".—An Imperial History Of India p. 17.

2. बौद्ध-ग्रन्थकार ने क्रोधी ब्राह्मण चाणक्य को नरक तो भेजा, लेकिन उसकी सुनीति और सुशासन की प्रशंसा में यह भी कहा है कि 'वह अहित का निवारण करने और हित का सम्पादन करनेवाला था'—अहिता निवारणार्थाय हितार्थायोपवृंहने···९६६.

परिशिष्टपर्वण के अनुसार चाणक्य गोल्ल-विषय के एक ग्राम के ब्राह्मण चणक और उसकी पत्नी चणेश्वरी का लड़का था। जन्म के समय चाणक्य के मुख में सब दाँत पूरे थे। जैन-साधुओं ने इस बात को देखकर कहा था कि यह बालक राजा होगा। ब्राह्मण-पिता को यह जानकर दुःख हुआ क्योंकि राजा होने से उसे भय था कि उसका पुत्र नरक-भागी बनेगा। अतः ब्राह्मण चणक ने अपने बेटे के दाँत तुड़वा दिये थे। इस पर मुनियों ने तब यह घोषित किया था कि यह बालक भविष्य में प्रतिनिधि द्वारा राज्य करेगा—अष्टम सर्ग–१९३–१९९.

श्री वि० स्मिथ ने कौटिल्य की राजनीतिज्ञता और शासनयोग्यता की प्रशंसा करते हुए लिखा है—"All tradition agrees that the

लातिन इतिहासकार जस्टिन ने लिखा है कि चन्द्रगुप्त ने भारत को यूनानी दासता से तो मुक्त किया लेकिन उसने "Changed the name of freedom to that of bondage for he himself oppressed with servitude the very people which he had rescued from foreign domination." अत: जस्टिन के अनुसार चन्द्रगुप्त एक निरंकुश शासक था और उसने जिन भारतीयों को विदेशी दासता से मुक्त किया उनको पुन: अपनी दासता के नीचे दबा दिया था—लातिन लेखक का यह आरोप मन:कल्पित और सत्यता से असंबंधित है। उक्त वक्तव्य द्वारा संभवत: पश्चिमी-प्रभुत्व का अन्त करनेवाले के प्रति जस्टिन ने वस्तुत: अपना आक्रोश ही प्रकट किया है।[3] यूनानी लेखक मेगास्थनीज और कौटिल्य अर्थशास्त्र तथा प्राचीन भारतीय साहित्य से चन्द्रगुप्त के शासन का जो विवरण प्राप्त है उससे सिद्ध है कि चन्द्रगुप्त का शासन लोक-कल्याणात्मक था। अत: यह भी सिद्ध हो जाता है कि जस्टिन ने चन्द्रगुप्त के निरंकुश-शासन की जो बात कही है वह निरर्थक और पश्चिम की द्वेष-भावना से प्रेरित है। मुद्राराक्षस में चन्द्रगुप्त के सुखद शासन की प्रशंसा में कहा गया है कि शरद-निशा में उगनेवाले पूर्णचन्द्र से भी अधिक प्रजाजन चन्द्रगुप्त के सुशासन में आनन्द पाते हैं—

'शरदनिशासमुद्गतेनेव पूर्णिमाचन्द्रेण चन्द्रश्रियाधिकं नन्दन्ति प्रकृतय:।'—प्रथम अंक।

---

ship of state was steered with exceptional ability by his (Chandragupta's) Brahman minister."—The Oxford Hist. of India; IInd ed; p. 75.

3. डा० राजबली पांडे ने लिखा है—ये उल्लेखय यहाँ से बाहर ढकेले हुए विदेशियों के असन्तोष और निराशा को ही प्रकट करते हैं—भारतीय इतिहास की भूमिका; पृ० १३५.

मुद्राराक्षस में यह भी कहा गया है कि चन्द्रगुप्त का राज्य नन्दों के जैसा निन्दनीय नहीं था। नन्दों को तो केवल धन प्यारा था, लेकिन चन्द्रगुप्त जनता का अपरिक्लेश का अभिभाषी अथवा उनके सुख का आकांक्षी है—

चन्द्रगुप्तराज्यमिदं न नन्दराज्यम्। यतो नन्दस्यैवार्थरुचेरर्थ-संबन्धः प्रीतिमुत्पादयति। चन्द्रगुप्तस्य तु भवतामपरिक्लेश एव।
—प्रथम अंक।

मंजुश्रीमूलकल्प में अकण्टक राज्य करनेवाले चन्द्रगुप्त को 'सत्यसन्ध' (अभिषेक के समय दिये वचनों का पालन करनेवाला) और 'धर्मात्मा' महामति के विशेषणों से संबोधित किया गया है—

तस्य राज्ञोऽपर ख्यातः चन्द्रगुप्तो भविष्यति।
महायोगी (महाभोगी) सत्यसन्धश्च धर्मात्मा स महीपतिः॥४३९–४०॥

चन्द्रगुप्त का शासन कठोर था, यह सही है। लेकिन हमें स्मरण रखना चाहिए कि वह यवनों और नन्दों को उन्मूलित कर राजपद पर आसीन हुआ था और इसलिये देश में उसके अनेक शत्रु हो सकते थे जो केन्द्रीय-शासन में शैथिल्य उत्पन्न होने पर प्रतिक्रांति कर सकते थे। ऐसी स्थिति पैदा होने पर उत्तर-पश्चिमी सीमान्त के पार से यवन-आक्रमणकारी भी पुनः देश में घुस सकते थे। अतः आंतरिक सुव्यवस्था, शांति और बाह्य-सुरक्षा के हितार्थ लौहपुरुष चाणक्य की निष्पक्ष, सुदृढ़ और उपयुक्त दंडनीति को अपनाकर चन्द्रगुप्त का दृढ़ता से शासन करना, अत्याचार-पूर्ण निरंकुशता का स्वरूप नहीं माना जा सकता; वह तो युग और समय की ही माँग थी। चन्द्रगुप्त को बाहरी और भीतरी शत्रुओंको दबानेके लिये युद्ध करने में काफी व्यय भी उठाना पड़ा होगा जिस कारण संभव है उसे पहले से अधिक कर भी प्रजा पर लादने पड़े हों। युद्धों में बहुत रुपया व्यय हो गया था यह पातंजलि के उस कथन से भी लक्षित होता है जिसमें

उसने कहा है कि आवश्यकता पड़ने पर मौर्यों ने हिरण्यलाभ के लिए देवताओं की मूर्तियाँ बनाकर विक्रय किया।[4] किन्तु यह सब होते हुए भी मौर्य-शासन का ध्येय और लक्ष्य प्रजा का सुख, समृद्धि और अभिवृद्धि ही रहा।[5] अतः चन्द्रगुप्त का शासन भीतरी और बाहरी दुष्टजनों के लिए भले ही कठोर व कड़ा रहा हो जनता के लिए वह सर्वथा

---

4. पतंजलि—५, ३, ९२; Chandragupta And His Times; p. 76.

5. उपर्युक्त दण्ड के सम्बन्ध में कौटिल्य ने कहा है—

"This people (loka) consisting of castes and four order of relegious life, when governed by the king with his sceptre will keep to their respective paths, ever devotedly adhering to their respective duties and occuptations".

राजा के कर्त्तव्यों का निरूपण करते हुए कौटिल्य ने कहा है—"He shall......establish safty and security by being ever active......and endear himself to the people by bringing them in contact with wealth and doing good to them—Kautilya-Arthshastra; R. Shamshastri, chp. VII Bk I

अशोक के अभिलेखों से भी प्रकट है कि मौर्य-राजा जनता के पालन, हित और सुख के अभिलाषी थे अथवा उसके लिए कार्य करते थे (कलिंग शिलालेख, द्वितीय जौगुडा; ५वाँ और ६वाँ स्तम्भलेख)। अतः उनके शासन का शिलाधार व्यवहारसमता अथवा न्यायसमता थी और ध्येय जनपद का हित व सुख था—'जानपदस्य हितसुखाय; व्यवहारसमता च स्याद्दण्डसमता च'—चतुर्थ स्तम्भलेख।

कल्याणपूर्ण था, यह आगे उसकी सम्पूर्ण शासन-व्यवस्था के वर्णन से भी प्रकट है।[6]

---

6. श्री जे. एलन ने जस्टिन की समीक्षा करते हुए लिखा है—

'This (the verdict of Chandragupta's tyrannical rule by Justin) may mean no more than that he saw the necessity of ruling with a firm hand his vast empire, much of which would have slipped away from him on the slightest display of weakness; in his younger days he had seen too many kings lose their lives and thrones not to take every precaution against possible rivals and assassins—The shorter Cambridge History of India; p. 33.

कैम्ब्रिज हिस्ट्री का लेखक जस्टिन के मौर्य-शासन सम्बन्धी उल्लेख की आलोचना करता हुआ लिखता है—"According to Justin (XV.4) the rule of Chanrdagupta was oppressive; but the judgement is not supported by details or by Indian evidence. The consensus of Sanskrit writings on policy discoutenances excessive leniency, and insists upon the retributory function of the ruler, who in maintaining order and protecting weakness should not shrink from severity; while in time of need he is entitled to call upon his people to bear 'like strong bulls' a considerable burden of takation"—Vol I;p.473.

चन्द्रगुप्त के शासन के अनेक सुकार्यों का उल्लेख करते हुए श्री रायचौधरी कहते हैं कि शायद—'The judgement of the Latin

साम्राज्य का संगठन

चन्द्रगुप्त एक योग्य शासक था और उसे योग्यतम मन्त्री चाणक्य अथवा कौटिल्य का भी सहयोग प्राप्त था। इन दोनों महान् सम्राट और महामन्त्री ने सिकन्दर के आक्रमण के प्रतिफल से इस बात का प्रत्यक्ष अवलोकन और अनुभव किया कि भारत का अनेक राज्यों में बँटा-कटा रहना देश अथवा राष्ट्र के लिए नितांत भयावह और अकल्याणमूलक है। अतः कौटिल्य ने सार्वभौमिकता के प्राचीन चक्रवर्ती शासन का आदर्श उपस्थित किया और उसके अनुकरण पर चन्द्रगुप्त ने भारत के तत्कालीन अनेक छोटे-बड़े राज्यों व गणतन्त्रों को उखाड़ फेंका और उन्हें सीधे मौर्य-साम्राज्य में ग्रथित कर हिन्दूकुश और हिमालय से विन्ध्य के उस पार मैसूर तक तथा पश्चिम में सौराष्ट्र से लेकर पूरब में बंग (यूनानियों द्वारा उल्लेखित Gangaridae)[7] तक सारे देश को एक शासन में परिरब्ध

---

historian may have been based on the strict discipline that he (चन्द्रगुप्त) enforced, and the severity of the penal code which permitted mutilation—Age of The Nandas And Mauryas; pp. 157–158.

7. यूनानी लेखकों ने मगध के राजा (धननंद) को प्राच्य (Prasii) और गंगा प्रदेश (Gangaridai) का शासक कहा है। प्लिनी के अनुसार गंगा नदी का पूरा प्रदेश पाटलिपुत्र के राजाओं के अधीन था—Indian Antiquary, 1877, 329; Political History of Ancient India; Rayachaudhari; p; 256.

ह्वेनसांग के अनुसार अशोक के बनाये स्तूप, ताम्रलिपि, कर्णसुवर्ण (पश्चिमी बंगाल में) समतट (पूर्व बंगाल में) और पुण्ड्रवर्धन (उत्तरी बंगाल) में उसके समय वर्तमान थे—Watters; II: pp. 184–187.

कर दिया।[8] इस प्रकार चन्द्रगुप्त का शासन प्रमुखतया एक केन्द्रित राष्ट्रीय शासन था। यद्यपि, जैसा कि अशोक के पाँचवें और तेरहवें शिलाभिलेखों से प्रकट है कुछ प्रदेश अथवा जनपद ऐसे भी थे जहाँ के सामन्तराज अथवा गणशासक मौर्य अधिपति के अधीन होते हुए भी अपने राज्य के आन्तरिक शासन के लिये स्वतन्त्र थे जैसे—यवन, कम्बोज, गांधार, राष्ट्रिक नाभाक, पैठानिक, आन्ध्र, पुलिन्द, भोज, पितिनिक, अटवी ओर अपरन्ता के प्रदेश (पश्चिमी प्रदेश जिसमें शूर्पारक, नासिक आदि शामिल थे)। इन प्रान्तों के शासकों को आन्तरिक स्वतन्त्रता प्राप्त रहने पर भी केन्द्र के निर्देशों का पालन करना पड़ता था। अशोक के

---

8. कौटिल्य और चन्द्रगुप्त को प्रथम वास्तविक सार्वभौम-साम्राज्य का संस्थापक बतलाते हुए श्रीनीलकंठ शास्त्री लिखते है—'The ideal of the Chakravartin is for the first time brought down to earth from the cloud-land of religious myth and legend and the Chakravarti-Kshetram, the sphere of the emperor's rule, is clearly defined in the Arthashastra as the whole of India extending from the Himalayas to the Indian Ocean and a thousand Yojanas across The Mauryan epoch marks thus the definite triumph of the monarchical state against rival forms of political organization, particularly that of the tribal republic which became henceforth much rarer than before and practically died out in the course of the next few centuries'—Age Of The Nandas And Mauryas; pp. 172–173.

श्री रायचौधरी चौथी शताब्दी ई० पू० की दशा पर दृष्टिक्षेप करते हुए लिखते हैं कि भारत को तब ऐसे व्यक्ति की आवश्यकता थी जो नूतन

शिलालेखों से प्रकट है कि इन राज्यों का निरीक्षण करने के लिए 'धर्म महामात्र' नाम के अधिकारी उन देशों में भी भेजे थे।[9]

मगध-साम्राज्य को सुरक्षित रखकर उसकी वृद्धि कर सकता—'to deal effectively with the foreign menace,' to 'unify the innumerable fragments of distracted India.' और 'bring the ideal of the Chakravartin into the realm of practical politics, to inspire Indians with the zeal for mighty endeavour in various fields of activity and bring her politically and socially into close touch with the outer-world.' और इस आवश्यकता को चन्द्रगुप्त ने पूरा किया 'For nearly a quarter of a century he did bestride the Indian world like a colossus For generations the country had to follow in the lines laid down for her by Chandragupta'—Age Of The Nandas And Mauryas' pp. 132–133.

श्री रीज डेविस चन्द्रगुप्त की—एकराज्य साम्राज्य की—स्थापना की सफलता पर प्रकाश डालते हुए कहता है—"...for the first time in the history of India there is one authority from Afganistan across the continent and from the Himalayas down to the Central provinces"—Buddhist India; p 260.

9 श्री रैपसन (Rapson) ने उक्त देशों का उल्लेख करते हुए लिखा है कि वे 'Lay beyound Asoka's dominions, and were not his subjects, though regarded as Coming within

राजा सर्वोच्च अधिकारी

चन्द्रगुप्त सार्वभौम सम्राट था। वह प्रमुख न्यायाधीश अथवा दण्ड-धार था। वह दुष्टों को दण्ड और अच्छों को प्रसाद अथवा पुरस्कार देनेवाला (प्रत्यक्षतः हेडप्रसादाः)[10] था। सामाजिक व्यवस्था को बनाये रखना और सब जनों से उनके कर्त्तव्यों और कर्मों को कार्यान्वित कराना उसका प्रमुख कर्त्तव्य था।

चतुर्वर्णाश्रमो लोको राज्ञा दण्डेन पालितः।
स्वधर्मकर्माभिरतो वर्तते स्वेषु वेश्मसु ॥ अ०-अधि-१

दण्ड और शासन के साथ ही वह अर्थ अथवा कोष और सेना अथवा

---

his sphere of influenee—Cambridge History of India; I, pp. 514–515.

रैपसन का यह कथन 'अभिलेखों' के सामने नहीं टिकता। श्री राय चौधरी ने उसके निष्कर्ष की उपयुक्त आलोचना करते हुए कहा है कि '.....This surmise can hardly be acceptod in view of the fact that Asoka's Dharmamahamatras were employed amongst them "On the revision of (Sentences of) imprisonment or execution, in the reduction of penalties, or (the grant) of release—" (Rock Edict V). In the Rock Edict XIII they seem to be included within the Raja Vishaya or the kings's territory, and are distinguished from the realm border peoples, viz' the Greeks of the realm of Antiochos and the Tamil peoples of the South (Nicha)'—Political History of Ancient India p. 260.

10. Kautilya Arthshastra; chp. xIII; Bk. I.

दण्डशक्ति का भी सर्वोच्च स्वामी या अधिकारी था। कौटिल्य ने कहा है कि बाह्य और भीतरी कठिनाइयों को दबाने के लिए राजा को कोष और सेना अपने हाथ में रखनी चाहिए। आन्तरिक कठिनाइयों में कौटिल्य ने मन्त्रियों के विद्रोह को सबसे खतरनाक बतलाया है। भीतरी शत्रुओं और बाहरी राजाओं से अपने राज्य को सुरक्षित रखना राजा का प्रमुख कर्त्तव्य था।[11] जो मन्त्री, उच्चाधिकारी अथवा संघों के नायक राज्य की शान्ति और व्यवस्था के लिए खतरनाक समझे जाते थे उन्हें राज्य के हितार्थ राजा गुप्तरूप से खतम भी कर सकता था।[12]

शासन के प्रत्येक विभाग का राजा स्वयं निरीक्षण करता था। राज्य के प्रमुख अधिकारियों की नियुक्ति भी राजा स्वयं अथवा प्रधानमंत्री की सलाह से किया करता था। प्रधानमन्त्री, मन्त्री, अमात्य आदि सभी अधिकारी राजा द्वारा ही नियुक्त किये जाते थे। मन्त्री अथवा अमात्यों का कार्य, विभाग, स्थान और काल आदि का निर्णय भी राजा ही करता था। मन्त्रियों की सलाह से वह गूढ़पुरुषों की नियुक्ति भी स्वयं करता था।[13]

राज्य का हिसाब-किताब, नगर और जनपद के लोगों के कार्यों पर विचार, हिरण्य अथवा करग्रहण, विभिन्न विभागों के अध्यक्षों की नियुक्ति, मंत्रियों से पत्र-व्यवहार, गूढ़पुरुषों की गुप्त सूचनाओं का अध्ययन, सेना के विभिन्न अंगों का निरीक्षण और सेनापति के साथ सैन्य-संचालन अथवा सैनिक-कार्यों के सम्बन्ध में विचार-विमर्श आदि कार्य राजा को स्वयं ही करने होते थे।[14]

---

11. Ibid; chp II Bk. XIII and chp. XVI; Bk. I.
12. chp. I; Bk. V.
13. Ibid; chp. VIII; chp; IX; chp. XI. ff. Bk. I.
14. Ibid; chp. XIX; Bk. I.

देवताओं, श्रमण व पाषंडों, ब्राह्मणों व श्रोत्रियों, पशुओं, पुण्यस्थानों अथवा तीर्थस्थानों, बाल-वृद्धों, व्याधिग्रस्तों, अनाथों और स्त्रियों आदि के कार्यों के संपन्न कराने का राजा को स्वयं ध्यान रखना पड़ता था।[15]

राजा 'धर्मप्रवर्तक' माना जाता था क्योंकि सामाजिक और वर्ण-व्यवस्था का संचालन करनेवाला और लोगों को धर्मपथ पर आरूढ़ रखने वाला वही था—

चतुर्वर्णाश्रमस्यायं लोकस्याचाररक्षणात् ।
नश्यतां सर्वधर्माणां राजधर्मः प्रवर्तकः ॥ अ०—१. अधि. ३

अतः नीति-निर्धारण करने तथा जनपद के लोगों और अपने अधिकारियों के कर्त्तव्यों का नियमन करने और मार्गदर्शन के लिए राजा 'शासन' प्रेषित किया करता था।[16] चन्द्रगुप्त के पौत्र अशोक के अभि-

15. अ०—१९, अधि—१

16. chp. I; Bk III.

धर्मप्रवर्तक होने से राजा न्याय अथवा धर्म का स्रोत माना गया है। न्याय (Law) के कौटिल्य ने चार पैर बतलाये हैं—धर्म (Sacred law), व्यवहार (evidence), चरित्र (History) और राजशासन (edicts of the king)। राजा का परम कर्त्तव्य देश व समाज की सुरक्षा था। जो राजा रक्षा करने और सामाजिक-व्यवस्था बनाये रखने की सामर्थ्य नहीं रखता उसका दण्डधारण करना मिथ्या कहा गया है। जो राजा दण्ड का सही प्रयोग करता है और यथादोष दण्ड देता है चाहे अपराधी राजपुत्र हो या शत्रु वही लोक-परलोक की रक्षा करनेवाला कहा गया है—

दण्डो हि केवलो लोकं परं चेमं च रक्षति ।
राज्ञो पुत्रे च शत्रौ च यथादोषं समं धृतः ॥ अ०—१. अधि. ३.

इस व्याख्या से स्पष्ट है कि राजा मनचाहा धर्मानुशासन नहीं निकाल सकता था अथवा मनचाहा किसी को दण्ड नहीं दे सकता था—

लेख, जैसा कि कौटिल्य का निर्देश है जनता की धर्म-बुद्धि और अधिकारियों के मार्ग-निर्देशन के लिए ही प्रेषित किये गये थे। कौटिल्य के अनुसार राजा 'धर्मप्रवर्तक' था अथवा धर्म के संचालन में प्रमुख हाथ रखता था, यह बात अशोक के उन धर्मानुशासनों से भी प्रत्यक्ष है जो संघ में भेद रोकने और संघ अथवा विहार सम्बन्धी कार्यों को संचालित करने के लिए प्रेषित किये गये थे—जैसे प्रथम गौण-स्तम्भलेख सारनाथ; द्वितीय कौशाम्बी गौण-स्तम्भलेख; तृतीय स्तम्भलेख-साँची।

अर्थशास्त्र द्वारा निर्धारित दंडनीति का मौर्य-शासक पालन करते रहे यह मेगास्थनीज के विवरण और अशोक के अभिलेखों से प्रत्यक्ष है।

मेगास्थनीज के अनुसार चन्द्रगुप्त मौर्य तमाम दिन दरबार में राज्य-कार्य में व्यस्त रहा करता था और मालिश का समय हो जाने पर भी कार्य में बाधा नहीं पड़ने देता था।[17] अशोक के शिलालेखों के अनुसार

उसका धर्मानुशासन 'सत्ये स्थितो' होना चाहिए और दण्ड निष्पक्षतापूर्ण समानभाव युक्त और यथादोष दिया जाना चाहिए।

प्रकटतः राजा स्वयं धर्म-रत होकर दूसरों को धर्म-पथ पर लाने का कार्य करने के हेतु ही 'धर्मप्रवर्तक' कहा गया है; अतः उसका यह अर्थ नहीं था कि जो राजा कहे या करे वही धर्म है—प्रस्तुतः कौटिल्य ने राजा को ईश्वरीय (Divine) नहीं माना है और इसलिए यह भी नहीं माना गया है कि 'King can do no wrong.'

श्री रायचौधरी कहते हैं—'...thers was a body of ancient rules, 'Poranapakiti', which even the most masterful despot viewed with respect'—The Political History of Ancient India; p. 227.

17. Ancient India As Described In Classical Literature; p. 58.

राजा हर जगह और हर समय राज्य का कार्य किया करता था। वह अपने को जनता का पिता तथा उनका ऋणी मानता था। जनता का इस और दूसरे लोक में सुख पहुँचाना वह अपना राजधर्म समझता था। ब्राह्मण, श्रमण, वृद्ध, नौकर भृत्य आदि तथा पशु-पक्षियों आदि के प्रति उचित व्यवहार और अनुग्रह करना अशोक ने अपना परमधर्म और कर्म घोषित किया था। अतः उसने मनुष्यों के लिए ही नहीं पशुओं के लिए भी चिकित्सालय निर्मित करवाये थे।

मन्त्री-पुरोहित

कौटिल्य का कथन है कि राजत्व बिना सहाय के साध्य नहीं है जैसा कि एकचक्र से गाड़ी नहीं चला करती (सहायसाध्यं राजत्वं चक्रमेकं न वर्तते—अ० ७, अधि—१)। अतः शासन में सहायता के लिए राजा सचिव, मंत्री, पुरोहित व अमात्य आदि अधिकारियों को नियुक्त करता था। इन पदों पर स्वदेशीय, कुलीन, योग्य, दूरदर्शी, चतुर, सुभाषी, निडर, वीर, राजभक्त और शुद्ध चरित्र के व्यक्तियों को ही नियुक्त किया जाता था।[18]

वेद और उसके छः अंगों तथा अथर्ववेद में वर्णित कर्मकांड में निपुण ब्राह्मन को पुरोहित पद पर नियुक्त किया जाता था। पुरोहित का पद मंत्रियों में शायद सर्वश्रेष्ठ था। कौटिल्य ने कहा है कि राजा को पुरोहित का उसी प्रकार अनुसरण करना चाहिए जिस प्रकार शिष्य गुरु का, पुत्र पिता का और भृत्य स्वामी का अनुसरण किया करता है। कौटिल्य के अभियान में जो राजा ब्राह्मण, पुरोहित और मंत्रियों तथा शास्त्रों का अनुकरण करनेवाला है, वह अजेय होता है और बिना शस्त्रों के भी विजय लाभ कर सकता है। कौटिल्य के इस निर्देश से प्रकट है कि मौर्य-शासन शास्त्रों व स्मृतियों के सिद्धांतों पर आधारित अथवा शास्त्र-सम्मत था और

18. Ibid; chp. ix; Bk. I.

राजा स्वेच्छाचारी न होकर सामान्यतः मंत्रियों और पुरोहित के निर्देशनों पर कार्य किया करता था। इस दृष्टि से नीलकंठ शास्त्री के शब्दों में—"The throne looked for support to the Sacredotal power, and generally got it; this becomes clear from the relation in which Kautilya stands to Chandragupta, from the place of the Purohita in the state as the special adviser of the monarch with whom he conferred alone in a difficulty.[19]

मन्त्रि-परिषद

शासन संबंधी प्रत्येक आवश्यक कार्यों पर राजा मंत्रि-परिषद में विचार करता था। मंत्री-परिषद में विचार किये जाने वाले विषय गुप्त रखे जाते थे और इस बात का पूरा ध्यान रखा जाता था कि परिषद की मन्त्रणा का भेद कोई जान न सके। जब तक मंत्रणागृह पूर्णतया सुरक्षित न कर दिया जाता था राजा उसमें भाग लेने न जाता था।

मंत्रि-परिषद में तीन या चार मंत्री होते थे। कौटिल्य ने परिषद में चार से अधिक सदस्य न रखने का निर्देश दिया है, क्योंकि उसके अनुसार अधिक सदस्यों के कारण मंत्रणा को गुप्त रखना और साथ ही किसी निष्कर्ष पर पहुँचना कठिन हो जाता है। साथ ही, कौटिल्य ने अवसर और राज्य की आवश्यकतानुसार सदस्यों की संख्या बढ़ाने की अनुमति भी दी है। अतः परिषद के सदस्यों की संख्या आवश्यकतानुसार बढाई भी जा सकती थी। राजा परिषद के मन्त्री अथवा सदस्यों से अवसर और आवश्यकतानुसार अलग-अलग अथवा समवेत रूप से मंत्रणा किया करता था।

परिषद में विशेषतया निर्दिष्ट कार्यों को कार्यान्वित करने और सैन्य-बल को सम्पन्न करने, नियत कार्यों के लिए समय और स्थान का निर्णय

19. Age of The Nandas and Mauryas; p. 175.

करने, खतरों को दूर करने और (कार्यों में) पूर्ण सफलता प्राप्त करने के साधनों व उपायों पर मन्त्रणा की जाती थी।

कर्मणारम्भोपाय: पुरुषद्रव्यसम्पद् देशकालविभाग: विनिपातप्रतीकार: कार्यसिद्धिरिति पञ्चाङ्गो मन्त्र: ।

बहुत आवश्यक कार्यों (आत्ययिके कार्ये) के समय मन्त्री और मन्त्रि-परिषद दोनों से विचार-विनिमय होता था और बहुमत (भूयिष्ठा) के निर्णयानुसार निश्चय किया जाता था।[20] सामान्य स्थिति में राजा मन्त्रि-परिषद से प्रतिदिन विचार-विमर्श के लिए पत्र-व्यवहार भी किया करता था (पत्रसंप्रेषणेन मन्त्रयेत्)।[21]

अशोक के छठे लेख से मालूम होता है कि परिषद प्रभावशाली सभा थी और राजा की अलिखित अथवा मौखिक आज्ञाओं को कार्यान्वित करने से वह अस्वीकृति भी जतला सकती थी। उक्त शिलालेख में अशोक ने कहा है—'यदि कभी संयोगवश दान देनेवाले या विज्ञप्ति सुनानेवाले अधिकारियों को जो कोई आज्ञा मैं मौखिक दूं तथा अत्यन्त आवश्यकता पड़ने पर महामात्रों को जो अधिकार दिया जाय (मुझसे), यदि उसपर सन्देह तर्क-वितर्क, विमर्श (मतभेद) हो तो परिषद अविलम्ब कहीं भी सर्वत्र सब समय पर मुझे सूचित करे (उस विषय की मुझे सूचना दे)।' शिलालेख के इस कथन से प्रत्यक्ष है कि राजा कर्मचारियों को जो आज्ञा देता था, उसमें परिषद् की स्वीकृति रहती थी और मतभेद पैदा होने पर परिषद् राजा से मिलकर बातें स्पष्ट कर लिया करती थी। तीसरे शिलालेखानुसार परिषद को राज्य के ऊंचे अधिकारियों के कार्यों का

20. आत्ययिके कार्ये मन्त्रिणो मन्त्रिपरिषदं चाहूय ब्रूयात्। तत्र यद् भूयिष्ठा:···कौ-अर्थ-अ—१५-अधि-१

21 वही; और Kau Artha, by Shamshastri; chp, XV; Bk I.

निरीक्षण करने और उन्हें निर्देशन देने का भी अधिकार था—'परिषद भी युक्त का मेरे धर्मानुशासन के अर्थ और अभिप्राय के अनुसार जाँच करने की आज्ञा देगी'—तृतीय शिलाभिलेख।

मन्त्रि-परिषद की बैठक जिस भवन में होती थी, उसे 'मन्त्र-भूमि' कहते थे।

मेगास्थनीज ने चन्द्रगुप्त के सचिवों अथवा मन्त्रियों तथा अमात्य आदि उच्चाधिकारियों का सातवीं जाति के रूप में उल्लेख किया है—'The Sevenh Caste consists of the councillors and assessors of the state, the tribunals of Justice and the genral administration of public affairs'[22]

केन्द्रीय शासन-व्यवस्था

१. मन्त्री

२. पुरोहित

३. सेनापति

४. युवराज—राजकुमारों में जो योग्य और सुचरित्र होता था, उसे युवराजपद या सेनापति के पद पर आसीन किया जाता था—'आत्मसम्पन्नं सैनापत्ये यौवराज्ये वा स्थापयेत्–अ० १७–अधि. १. युवराज गवर्नर के पद पर भी नियुक्त किया जाता था। अशोक के अभिलेखानुसार दक्षिणी–प्रदेश का गवर्नर 'आर्यपुत्र' था जो शायद युवराज भी था। अन्य विशिष्ट अथवा मुख्य प्रान्तों के लिए भी राजघराने के कुमार ही गवर्नर नियुक्त किये जाते थे।

५. दौवारिक—गुप्तयुग में यह अधिकारी प्रतिहार और महाप्रतिहार कहलाता था। यह राज्य के प्रमुख अमात्यों अथवा अधिकारियों

---

22. Ancient India As Described In Classical Literature; p. 53.

में स्थान रखता था। प्रातःकाल राजा के शयन से उठने पर प्रासाद के चतुर्थ-कक्ष में मन्त्रियों और राजा के सम्बन्धियों के साथ दौवारिक भी राजा से भेंट करता था—(अ. २१–अधि १)। अवसर पड़ने पर वह राजप्रतिनिधि के रूप में उन कार्यों को भी सम्पादित करता था जो कार्य राजा के थे।[23]

६. अन्तर्वेशिक—अन्तःपुर का अधिकारी। अन्तःपुर की रक्षा-सेना उसी के अधीन होती थी—अ. २०–अधि. १

७. प्रशास्तृ—श्री शामशास्त्री के अनुसार वह मजिस्ट्रेट अथवा नगर का अधिकारी था। श्री डा० रामप्रसाद त्रिपाठी के अनुसार वह कारागार का प्रमुख अधिकारी अथवा Inspector general of Prisons था। श्री डा० नरेन्द्रनाथ लॉ के मत में यह वह अधिकारी था, जिसके निरीक्षण मे राज-शासन (Royal writs) लिखे और प्रेषित किये जाते थे।[24] श्री राधाकुमुद मुखर्जी के अनुसार वह युद्ध-सामग्रियों का अधिकारी था (officer in-charge of munitions)।[25]

८. समाहर्तृ—राजस्व-मन्त्री जो भूमि और व्यापार सम्बन्धी राजकर वसूल करने का अधिकारी था (the collector general)। भूमि की पैमाइश कराने और तत्सम्बन्धी कागज-पत्र तैयार कराने का कार्य उसी के निरीक्षण में होता था। गोप (५ से १० गाँव का अधिकारी) व स्थानिक (जिले का अधिकारी) आदि गाँव और जिले के अधिकारी उसके नीचे कार्य करते थे। समाहर्ता के निर्देशानुसार उक्त अधिकारियों को अपने क्षेत्र के गाँवों की भूमि की पैमाइश, सीमा का निर्धारण, बाग-

23. Indian Historieal Quarterly vol v; 1929, p. 444.

24. Ibid; 443.

25' Chandragupta And His Times; p, 86.

बगीचे और सार्वजनिक कार्यों—जैसे देवमन्दिर, सिंचाई के लिए नहरें, श्मसानभूमि, सत्र (भोजन के क्षेत्र); प्याऊ (प्रप); तीर्थ स्थान की देखरेख और चारागाह् (व्रज) आदि का प्रबन्ध करना होता था। गाँव में होनेवाले क्रय-विक्रय, दान, भूमिकर आदि का हिसाब भी उन्हें रखना होता था। गाँव के मकानों और निवासियों की वर्ण और वर्गानुसार गणना भी वे ही तैयार करते थे। प्रत्येक घर में रहनेवाले वृद्ध और युवा आदि की संख्या और उनके चरित्र, आजीव, आय व व्यय का भी वे हिसाब रखते थे।

समाहर्ता उक्त अधिकारियों द्वारा की गयी गणना की सत्यता जाँचने तथा व्यापार-सम्बन्धी जाँच के लिए गूढ़ पुरुषों अथवा गुप्तचरों को नियुक्त करता था।[26] गणनाधिकारी अक्षपटलाध्यक्ष (Superintendent of Accounts) भी शायद उसी के अधीन कार्य करनेवाला अधिकारी था– Chp. VII Bk. II)।

ऐसे समयों में जब राज्य को अधिक धन व अन्न की जरूरत होती थी तो समाहर्ता कृषकों से ग्रीष्म में भी फसल उत्पन्न कराता था— (समाहर्तृ पुरुषा ग्रीष्मे कर्षकाणामुद्वापं कारयेयुः–अ. २; अधि–५)।

वह सम्भवतया प्रदेष्टा की तरह न्याय का अमात्य भी था। इस रूप में वह विभिन्न सरकारी विभागों व उनके अध्यक्षों का नियमन करता था—(अ. ६; अधि. ४)।[27]

---

26. Chp, xxxv, BR. I pp. 158–159.

27. श्री शामशास्त्री ने समाहर्तृ प्रदेष्टारः पूर्वमध्यक्षाणामध्यक्ष-पुरुषाणां च नियमनं कुर्युः—का अर्थ करते हुए प्रदेष्टा का समाहर्ता द्वारा नियुक्त किया जाना अर्थ लगाया है जो सही नहीं है। उक्त वाक्य में दोनों का समान रूप से उल्लेख है। अतः श्री नरेन्द्रनाथ लॉ का कहना सही है कि—It was the practice in the Kantak-sodhana

९. सन्निधातृ—यह कोष का अमात्य था। नये व पुराने रत्न, घटिया व बढ़िया कच्चा माल, हिरण्य (सुवर्ण मुद्राएँ), पण्य, आयुध आदि उसी के द्वारा एकत्र होता था। राजस्व में शुद्ध मुद्राएँ ही अंगीकार की जाती थीं और खोटे हिरण्य को प्रचलन से रोकने के लिये छेद दिया जाता था। खोटी मुद्राएँ देनेवालों को वह दंड भी देता था। कोशगृह, पण्यगृह (व्यापारियों के लिए), कोष्ठागार, कुप्यगृह (वन की उपज के लिए), आयुधागार, बन्धनागार आदि का निर्माण उसी के निरीक्षण मे होता था।[28] अतः यह सही लगता है कि उक्त विभागों के अध्यक्ष उसी की देखरेख और नियन्त्रण में कार्य करते थे।[29]

१०. प्रदेष्टा—यह न्याय व शासन सम्बन्धी कार्यों का अमात्य (अधिकारी) था। शान्ति बनाये रखने के लिए उसे सुरक्षा भंग करने वाली घटनाओं अथवा चेष्टाओं का शोधन करना होता था—अ० १, अधि० ४। विभिन्न विभागों के अध्यक्षों और उनके पुरुषों के कार्यों का भी वह निरीक्षण व नियमन करता था—अध्याय–९ अधि. ४। श्री शामशास्त्री ने उसे वर्तमान कमिश्नर के अनुरूप बतलाया है।

---

court that three Pradestris or three Amatyas would try cases. As Amatya (high official) the Samahartri could sit as one of these judges in the court for trying cases This inference obtains confirmation from the opening passage of Bk. IV, chp. 9. of the Kautilya where the Samhartri and the Pradestris are asked to maintain discipline in the various departments of government. Indian Historical Quarterly, vol v, 1929–448.

28. अ. ५–अधि–२.

29. Indian Historical Quarterly, vol V, 1929, p. 444,

११. नायक—कौटिल्य ने दसवें अधिकरण के प्रथम अध्याय के प्रारम्भ में 'स्कन्धावार' के निर्माणकर्ताओं में नायक का नाम दिया है और दूसरे अध्याय में सेना के अभियान में सबसे आगे चलनेवालों में 'नायक' का उल्लेख किया है—'पुरस्तान्नायकः'—अतः मालूम होता है कि वह सेना का एक उच्चाधिकारी अथवा दलीय-सेनानायक था। श्री शामशास्त्री के अनुसार वह chief constable था; अर्थात् पुलिस का मुख्याधिकारी जिसे मुगलकाल में कोतवाल कहते थे।

१२. पौर-व्यवहारिक—न्यायाधिकारी-अमात्य। यह सम्भवतया अशोक के अभिलेख में उल्लेखित नगरव्यवहारिक है जिसका कार्य नगर का शासन अथवा न्याय-सम्बन्धी कार्य करना था—(कलिंग-शिलालेख प्रथम शैली)। श्री शामशास्त्री के अनुसार यह 'Superintendents of transactions' था—

१३. कर्मान्तिक—आकर (Mines) और कर्मान्त (Manufacture) सम्बन्धी कार्यों का अमात्य अथवा प्राकृतिक साधनों (खान की उपज) और उद्योगधन्धों का मन्त्री। अर्थशास्त्र के अ. १२, अधि. २ में जो आकराध्यक्ष, लोहाध्यक्ष (Superintendent of metals); लक्षणाध्यक्ष (Superintendent of mint); खन्याध्यक्ष (Superintendent of mines) आदि का वर्णन है, वे सब शायद कर्मान्तिक के ही अधीन कार्य करते थे।

१४. मन्त्रिपरिषद्—अध्यक्ष।

१५. दण्डपाल—संभवतया पुलिस विभाग का प्रमुख अधिकारी अथवा अमात्य। श्री डा० राजबली पाण्डे के अनुसार सेना के लिए सामग्री जुटानेवाला मन्त्री।[30]

१६. दुर्गपाल—सैनिक दुर्गों का अधिकारी अथवा सुरक्षा-मन्त्री।

१७. अन्तपाल—सीमान्त-रक्षक अधिकारी। उसका काम राज्य

---

30. भारतीय इतिहास की भूमिका; पृष्ठ—१३६.

के सीमान्तों में दुर्ग स्थापित करना और राज्य के प्रवेश-मार्गों की देख-रेख करना था—२६—[31] जो सार्थिक अथवा व्यापारी बिना राजमुद्रा या राजाज्ञा के शस्त्रावरण से युक्त होकर यात्रा करते थे, अंतपाल उनके शस्त्र-अस्त्रों को छीन लेता था। अ०—३, अधि. ५।

१८. आटविक—जंगल-विभाग का मन्त्री या अमात्य।

उक्त अट्ठारह तीर्थों में दौवारिक और अन्तर्वेशिक राजभवन से सम्बन्धित उच्चाधिकारी थे। पहला प्रतिहार के रूप में राजा के निकट रहा करता था; और दूसरा अन्तःपुर का प्रबन्धक और रक्षक था। राजभवन के निजी अधिकारियों में वे ही रखे जाते थे जिनके पिता-पितामह राजपरिवार से सम्बन्धित रहे हों; या जो राजा के प्रति अनुरक्त हों, शिक्षित हों और जिन्होंने राज्य के लिये अच्छे कार्य किये हों। विदेशीय मूल के लोग राजा के निजी सेवकों और अन्तःपुर के सैन्य में भर्ती नहीं किये जाते थे।[32] इन उच्च-पदस्थ अमात्यों के अतिरिक्त राजा के और भी अनेक निजी सेवक होते थे जैसे—

१. कञ्चुकी (राजा की पोशाक पेश करनेवाला)

२. उष्णीषि (राजा को शिर का वस्त्र पेश करनेवाला)

३. महानासिक (प्रधान रसोइया—जो अनेक प्रकार के स्वादिष्ट व्यञ्जन तैयार करता था)।

४. राजभिषज और विष-परीक्षक (ये हमेशा राजा के पास रहते थे)।[33]

५. सूद (सूप या मिष्ठान्न बनानेवाले); अरालिक (भोजन बनानेवाले); स्नापक (स्नान करानेवाले); संवाहक (अंगमर्दन करनेवाले),

---

31. Chp II Bk I.

32 कौ. अर्थ. अ. २१, अधि-१.

33. Kau. Artha. chp. XXI; BK. I.

आस्तरक (बिस्तर लगानेवाले); कल्पक (नाई); प्रसादक (प्रसाधन पेश करनेवाले); नट (अभिनय करनेवाले); नर्तक (नृत्य करनेवाले); गायक (संगीतज्ञ); वाग्जीवन (विदूषक); कुशीलव (संगीतज्ञ) और वादक (बाजे बजानेवाले)[34]; तथा रजक (कपड़े धोनेवाले) और मालाकार आदि ।[35] इन सेवकों में बहुत से कार्यों के लिए केवल गणिकाएँ अथवा स्त्री-परिचारिकाएँ ही नियुक्त की जाती थी जैसा कि 'अर्थशास्त्र' के प्रथम अधिकरण के इक्कीसवें अध्याय के उल्लेख तथा यूनानी लेखकों के वर्णन से प्रकट है ।

अन्य अधिकारी

अमात्यों, महामात्रों अथवा मंत्रियों और विभिन्न विभागों के अध्यक्षों के अलावा बहुत से अन्य बड़े-छोटे अधिकारी भी थे जैसे—श्रेणीमुख्य, कार्तान्तिक (भविष्यवक्ता); नैमित्तिक (शकुनों को जाननेवाला), मौहूर्तिक (ज्योतिषी); पौराणिक; सूत (गाथा बाँचनेवाला); मागध (चारण); कारुशिल्पिन्; कुशीलव (संगीतज्ञ); चतुष्पद-द्विपद परिचारक; आर्ययुक्त (राजा के साथी); आरोहक (हाथी का महावत); माणवक (जासूस); दूत (संवाद अथवा पत्र ले जानेवाले); शत व सहस्र-वर्ग (Communities) के अध्यक्ष[36] तथा युक्त (विभागीय अधिकारी) (Officer); उपयुक्त (क्लर्क); तत्पुरुष (भृत्य)[37]; लेखक (जो राजा की आज्ञाओं अथवा शासनों को लिखता था । किसी सरकारी पुरुष को दंड अथवा पुरस्कार देने के लिए प्रेषित अनुशासन 'आज्ञालेख' कहलाते थे)[38]; निधायक (खजांची); निबन्धक (हिसाब

34. Kau. Artha; chp. XII; Bk. I.
35. Ibid; chp. XXI; Bk. I.
36. अ. ३, अधि-५;
37. chp. v; Bk II.
38. chp. x; Bk. II.

निर्धारित करनेवाला); प्रतिग्राहक (ग्रहण करनेवाला), दापक (दिलानेवाला); दायक (देनेवाला) आदि। अन्तिम पाँच अधिकारी कोष-विभाग से सम्बन्धित थे।

राज्य के अधिकारियों को सामान्यत: मुद्राओं में वेतन दिया जाता था। लेकिन धन की कमी होने पर कुप्य (वन की उपज), पशु व क्षेत्र (खेती के लिए) और अल्प-हिरण्य (मुद्राओं) में वेतन चुकाया जाता था। वेतन इतना होता था जिससे कि वेतनभोगी अच्छी तरह जीवन-यापन कर सके। कौटिल्य का निर्देश था कि राजा को विद्या और कर्मानुसार अपने कर्मचारियों का वेतन बढ़ाते रहना चाहिए। जो अधिकारी राज-कर्म करते हुए मर जाता था उसके पुत्र, दारा को वेतन व जीविका दी जाती थी—'कर्मसु मृतानां पुत्रदारा भक्तवेतनं लभेरन्।' इसके अलावा मृत-राजकर्मचारियों से सम्बन्धित बालकों, वृद्धों, व्याधिग्रस्तों के प्रति राजा की ओर से अनुग्रह बरता जाता था।[39]

वेतन का प्रकार

ऋत्विगाचार्य, मन्त्री, पुरोहित, सेनापति, युवराज, राजमाता और राजमहिषी को ४८,००० पण मिलता था।

दौवारिक, अन्तर्वेशिक, प्रशास्तृ, समाहर्तृ और सन्निधाता को २४,००० पण मिलता था। पौरव्यावहारिक, कार्मान्तिक, मन्त्रिपरिषद के सदस्यों, राज्यपाल (गवर्नर) और अन्तपाल आदि को १२,००० पण मिलता था।

प्रदेष्टा, श्रेणीमुख्य आदि को ८,००० पण।

द्रव्य-हस्ति-वनपाल (लकड़ी और हाथियों के जंगलों के अध्यक्ष) को ४,००० पण।

---

39. chp. III; Bk v.

कार्तान्तिक, नैमित्तिक, मौहूर्तिक, पौराणिक, सूत, मागध और सब विभागों के अध्यक्षों को १००० पण।

कारुशिल्पियों को १२० पण।

माणवक को ५०० से १००० पण तक। परिचारकों अथवा भृत्यों को ६० पण और संदेशवाहक दूतों को १० योजन तक के लिए १० पण और १०० योजन तक के लिए २० पण।[40]

विभिन्न अधिकारियों के जो वेतन उल्लेखित हैं, उन्हें श्री शामशास्त्री ने वार्षिक कहा है। किन्तु श्री नरेन्द्रनाथ लॉ के मत में उक्त वेतन-क्रम वार्षिक नहीं मासिक है। श्री लॉ ने अपने मत के पक्ष में जो प्रमाण दिया है वह संगत और मान्य लगता है।[41]

नगर-शासन-व्यवस्था

नागरक—यह नगर का प्रमुख अधिकारी था। उसका कार्य नगर-सम्बन्धी चिन्ता अथवा देख-रेख करना था। उसके नीचे 'गोप' और 'स्थानिक' आदि अधिकारी थे। गोप दस, बीस व चालिस कुलों अथवा

---

40. Ibid.

41. According to the direction given in the Kautilya (Bk. v; chp III), '60 panas = 1 adhaka of the staple food-grains' (Such as rice or wheet), the salaries of 60 Panas can purchase only 32 seers, or at most 2 mans of the staple food-grain. This can hardly by the living wage of a man for a month not to speak of a year, whereas the Kautilya says that the amounts mentioned are such as can keep the employees contented and above temptation to do harm to their master. Hence all the amounts stated as salaries are for a month and not for a year.' The Indian Historical Quarterly; vol. v; 1929; p. 683.

घरों का हिसाब रखता था। वह प्रत्येक घर में रहनेवाले व्यक्तियों (स्त्री-पुरुषों) की जाति, गोत्र, नाम, कर्म (पेशा) और आय-व्यय का चिट्ठा तैयार करता था। इसी तरह दुर्ग अथवा नगर के चतुर्थ भाग का लेखा-जोखा तैयार करने का कार्य स्थानिक का था।

धार्मिक-संस्थाओं के प्रबन्धकों को उन सब पाषंडों और पथिकों की सूचना गोप व स्थानिक को देनी पड़ती थी, जो उनके यहाँ आते थे।

इसी तरह शिल्पिय और व्यापारियों, होटलवालों (खाद्य पदार्थ के बेचनेवाले) और वेश्याओं (रूपजीवा) को भी आने-जानेवाले समान कर्मवालों की सूचना देनी होती थी और वे अपने पास उन्हें ही टिका सकती थीं जिन्हें वे अच्छी तरह से जानती हों। इसी तरह वैद्यों को भी गुप्तरूप से इलाज कराने वालों की सूचना देनी होती थी।

प्रत्येक घर के स्वामी को भी अपने यहाँ आने-जानेवाले परदेशी व्यक्तियों की गोप या स्थानिक को सूचना भेजनी होती थी।

संदिग्ध व्यक्तियों पर कड़ी निगाह रखी जाती थी।

नगर के अधिकारियों को अग्नि के सुप्रयोग पर भी ध्यान रखना पड़ता था। ग्रीष्म में दिन के मध्यकाल में कोई आग नहीं जला सकता था पर घरों के स्वामी मकान के बाहर खाना बना सकते थे। प्रत्येक गृहस्वामी को घर के पास घटी (पानी के बर्त्तन), कुम्भ, द्रोण (पानी के लिए लकड़ी की बनी नांद जो घर के द्वार पर रखी जाती थी), सीढ़ी, परशा, शूप, अंकुश, कचग्रहणी (घास-चारा को हटाने के लिए), और एकदृती (चर्म का थैला) आदि रखना आवश्यक था अन्यथा वह दण्ड का भागी होता था। प्रत्येक गृहस्वामी के लिये रात्रि में अपने द्वार पर रहना आवश्यक था। तृणों से मकान नहीं छाने दिये जाते थे; और अग्नि से काम लेनेवाले जैसे—लोहार, सुनार आदि को एकसाथ सरकार द्वारा नियत स्थान में ही रहना होता था।

नगर के प्रबन्धकों को नगर की बड़ी सड़कों, चतुष्पदों और राजभवन के सामने पानी के सहस्रों घड़े हर समय तैयार रखने होते थे (आग के प्रति इतनी सतर्कता बरतने का कारण उस समय नगर व दुर्ग आदि के निर्माण में पत्थर की जगह लकड़ी का विशेष प्रयोग किया जाता था)।

किसी घर में आग लगने पर यदि पड़ोसी बुझाने में मदद नहीं देता था तो वह दण्ड का भागी होता था। राजमार्ग तथा अन्य सड़को पर कूड़ा-करकट और पानी बहाने व कीचड़ करनेवालों, नगर में मृत बिल्ली व दूसरे जानवरों आदि की लाश फेंकनेवालों और तीर्थ-स्थानों, पानी के कुण्डों, देवमन्दिरों और राजभवन आदि भ्रष्ट करनेवालों को दण्ड दिया जाता था।

रात पड़ने के ६ नालिक (२½ घण्टे) बाद और रात खुलने के ६ नालिक पूर्व कोई नगर में घूम-फिर नहीं सकता था अन्यथा वह दण्ड का भागी होता था। निषिद्ध समय की सूचना देने के लिए 'तूर्य' से घोष किया जाता था। तूर्य का घोष होने के बाद यदि कोई राज-भवन व दुर्ग के पास घूमता-फिरता मिलता था तो उसे कड़ा दण्ड दिया जाता था।

निषिद्ध समय के भीतर वे ही लोग बाहर जा सकते थे जिनको अनिवार्यत: कार्यवश बाहर जाना जरूरी था जैसे सूतिका, चिकित्सक, मृतक को श्मसान ले जानेवाले, अग्नि बुझाने जाने वाले; अथवा नागरक से मिलनेवाले या हाथ में प्रदीप के साथ चलनेवाले या जिनके पास राज-मुद्रा (Pass) होती थी।

रात्रि को नगर में पहरा देने के लिए—'यामरक्षक' नियुक्त थे। यदि वे जिन्हें रोकना नहीं चाहिए उन्हें रोकते और जिन्हें रोकना चाहिए उन्हें छोड़ देते तो उन्हें दण्ड दिया जाता था।

रात में होनेवाली नगर की सभी दोषपूर्ण चेतन-अचेतन घटनाओं की सूचना नागरक को राजा को देनी होती थी। अपने कार्यों मे

लापरवाही (प्रमाद) करने पर वह दण्ड का भागी होता था।

नागरक को प्रतिदिन उदक-स्थानों (पानी के स्थान), मार्गों, भूमिच्छिन्नपथों (गुप्त-पथ) दुर्गों, दुर्ग की दीवारों और रक्षा के अन्य साधनों का निरीक्षण करना होता था।

लोगों की खोई, विस्मृत या छूटी हुई वस्तुएँ उपलब्ध होने पर नागरक उन्हें अपनी सुरक्षा में ले लेता था। नागरक को नगर के बंधनागार का भी शायद प्रबन्ध करना होता था।[42]

नागरक के शासन-प्रबन्ध और उसके कार्यों के विवरण का स्वरूप मेगास्थनीज अथवा स्ट्राबो द्वारा उल्लेखित नगर-अध्यक्षों (City magistrates) और उनकी अध्यक्षता में उपसमितियों के प्रबन्ध-कार्यों व शासन-कर्म से बहुत साम्य रखता है। यूनानी लेखकों के विभिन्न समितियों के मजिस्ट्रेट कौटिल्य-अर्थशास्त्र के विभिन्न विभागीय अध्यक्षों के अनुरूप प्रतीत होते हैं। अर्थशास्त्र (अ० ९. अधि. २) में कौटिल्य ने अनेक अनित्य (अस्थायी) विभागीय अध्यक्षों को नियुक्त करने का भी निर्देश दे रखा है—बहुमुख्यमनित्यं चाधिकरणं स्थापयेत्—

मेगास्थनीज ने तीन प्रकार के उच्चाधिकारियों का उल्लेख किया है :—

(१) जिले के अध्यक्ष या[43] अधिकारी (Agronomoi) ।

(२) नगर के अध्यक्ष (astynomoi) ।

(३) सेना के अध्यक्ष ।

---

42 Kau. Artha chp XXXVI; Bk II, The Indian Historical Quarterly; vol. v; p. 625.

43. माइक्रेण्डेल ने उन्हें बाजार (Market) के अधिकारी कहा है—Ancient India; p, 96 and India As Described In Classical Literature; p. 53.)।

पहले प्रकार के अधिकारियों के कर्म थे—(१) नदियों का निरीक्षण और नहरों की देख-भाल तथा सिंचाई का प्रबन्ध और भूमि की पैमाइश उन्हें इस बात का भी ध्यान रखना होता था कि नहरों से सबको समान रूप से पानी मिलता रहे; (२) आखेटकों (राजकीय आखेटकों से अभिप्राय)[44] का निरीक्षण और उन्हें दण्ड व प्रसाद प्रदान करना; (३) कर वसूल करना; और भूमि व कृषि से सम्बन्धित उद्योगों जैसे—लकड़ी के काम, लोहार के काम और खनिज-उद्योगों का निरीक्षण और उनसे कर वसूली—[45] तथा (४) सार्वजनिक कार्यों, जैसे—मार्गों का निर्माण और प्रत्येक दस स्टेडिया (एक योजना का छठा भाग)[46] पर दूरी अंकित करने और दूसरे स्थानों को जानेवाले रास्तों को जतलाने के लिए मार्गों में मील के पत्थर लगवाने का प्रबन्ध करना।

नगर का प्रबन्ध व शासन करनेवाले अध्यक्ष (City magistrates) मेगास्थनीज ने लिखा है—पाँच-पाँच सदस्यों की ६ उप-समितियों में विभाजित थे। प्रत्येक समिति के कार्यों का जो विवरण मेगास्थनीज ने दिया है वह नीचे दिया जाता है :—

(१) "पहली समिति के सदस्यों का कार्य औद्योगिक कलाओं (उद्योग-धन्धों) से सम्बद्ध सभी बातों की देख-भाल करना है।

---

44. Buddhist India; Rhys Devids; p; 264.

45. Ibid. Political History Of Ancient India; p 232.

46. श्री डेविस के अनुसार—'Ten stad a is 2022½ yards This is, within a few yards, the sixth part of a Yojana, the common Indian measure of length at that time—Ibid; 265.

(२) दूसरी समितिवाले विदेश से आये लोगों के आतिथ्य का प्रबन्ध करती है। उनके लिए वे रहने का प्रबन्ध करते हैं, और उनकी गति-विधि व रहने के तरीकों आदि की—उन व्यक्तियों द्वारा जो उन आगन्तुकों की सेवा के लिए रखे जाते हैं, देख-रेख करवाते हैं। देश से विदा होने पर मार्ग में उनकी सुरक्षा का भी वे प्रबन्ध करते हैं; और किसी विदेशी व्यक्ति के मर जाने पर उसका धनमाल उसके सम्बन्धियों को भिजवा देते हैं। यदि कोई बीमार पड़ता है तो वे उसकी सेवा-परिचर्या का प्रबन्ध करते हैं, और मर जाने पर उसके अन्तिम संस्कार का प्रबन्ध करते हैं।

(३) तीसरी समिति के सदस्यों के जिम्मे इस बात की जाँच-पड़-ताल है कि नगर में कब और कैसे जन्म तथा मृत्यु हुई है। यह केवल कर लगाने के विचार से नहीं किया जाता बल्कि इसलिए भी कि उच्च तथा निम्न वर्ग में होनेवाले जन्म तथा मृत्यु की घटनाओं से सरकार भिज्ञ रहे।

(४) चौथी समिति वाणिज्य-व्यापार की देख-भाल करती है। इसके सदस्यों का काम माप और तौल की जाँच करना तथा इस बात की देख-रेख रखना है कि मौसम के अनुसार होनेवाली फसलें खुलेआम जन-विज्ञप्ति के साथ बेची जाती हैं। बिना द्विगुणित कर दिए किसी को एक तरह की वस्तु से अधिक बेचने की आज्ञा नहीं मिलती।

(५) पाँचवीं समिति कारखानों व उद्योगों द्वारा तैयार वस्तुओं की देख-रेख करती है, जिन्हें जनता को सूचित करके बेचा जाता है। नवीन वस्तुओं को पुरानी से अलग कर बेचा जाता है और दोनों को एक साथ मिलाकर विक्रय करने पर दंड दिया जाता है।

(६) आखिरी समिति उन सदस्यों की है जो क्रय हुए माल पर दशांश राजस्व वसूल करते हैं। राजस्व न चुकाने पर मृत्युदण्ड दिया जाता है।

ये ही सब कार्य हैं जो पृथक् रूप में ये समितियाँ किया करती हैं। सामूहिक रूप में उनका काम, अपने विभागों के निर्दिष्ट कार्यों के अलावा जन-हित के कार्यों जैसे सार्वजनिक इमारतों की मरम्मत, मूल्यों का नियन्त्रण तथा बाजारों, बन्दरगाहों और देव-मन्दिरों की देख-रेख करना है।[47]

न्यायविभाग—दो प्रकार की अदालतें

न्याय-विभाग दो भागों में बँटा था—

१. कण्टकशोधन—यह फौजदारी-सम्बन्धी अभियोगों का निर्णय करने और शांति व सुरक्षा भंग करनेवाले अपराधी व्यक्तियों को दबाने व दण्ड देने का कार्य करती थी।

२. धर्मस्थीय—यह दीवानी अदालत थी जो सामान्य प्रकार के अभियोगों का निर्णय करती थी।

कण्टकशोधन अदालत

इसमें तीन प्रदेष्टा अथवा तीन अमात्य न्याय करने के लिये बैठते थे। घृणित प्रकार के अपराधियों को दण्ड देकर देश को उनके द्वारा पीड़ा पहुँचाया जाना रोकना—यही कण्टक-शोधन कर्म था। अत: उन व्यापारियों, शिल्पियों (कारू), कुशीलवों (गायकों), भिक्षुओं, विदूषकों और अन्यान्य निठल्ले लोग जो चोर हैं, लेकिन चोर नाम से कहे नहीं जाते, उनका पता लगाकर उन्हें दण्डित करना प्रदेष्टाओं का मुख्य कर्त्तव्य था।[48]

---

47. Ancient India; pp. 87–88. India As Described In_Classical Literature; p. 53.

48. एवं चोरानचोराख्यान् वणिक्कारुकुशीलवान्।
भिक्षुकान् कुहकांश्चान्यान् वारयेद् देशपीडनात्॥
कौ० अर्थ० अ० १; अधि० ४.

कौटिल्य ने १३ तरह के हिंसक अपराधियों का अ. ४, अधि. ४ में विवरण दिया है जिन्हें उसने 'गूढ़जीव' कहा है (अर्थात् जो अवैध तरीकों से जीविका कमाते हैं) । ऐसे अपराधियों को प्रवास अथवा अपराधानुसार अन्य दण्ड दिया जाता था ।[49]

अपराधियों का पता लगाने के लिए गुप्तचर (गूढ़पुरुष) नियुक्त किये जाते थे । गुप्तचर राजकीय अधिकारियों और न्याय के अमात्यों व प्रदेष्टा आदि के कार्यों और व्यवहारों पर भी निगाह रखते थे और यदि कोई अधिकारी ग्रामाध्यक्ष, धर्मस्थ अथवा प्रदेष्टा घूस लेते पाया जाता था तो वह दण्ड का भागी होता था ।[50]

अपराधी से उसकी जाति, देश, गोत्र, वृत्ति या पेशा, निवास. आदि के संबंध में पूछताछ की जाती थी । यदि उस पर अपराधी होने की शंका होती तो उसके किए अपराध को जानने के लिए उसे पीड़ित (कर्मपातः) भी किया जाता था ।

कर्मपात के चार प्रकार थे

(१) षड्दण्ड, (२) सप्तकशा (कोड़े), (३) द्वावुपरिनिबन्धौ (ऊपर से लटकाने के दो प्रकार) और (४) उदक नालिका (पानी की नालिका) । इसके अलावा जघन्य अपराधियों (परं पापकर्मणि) को और भी १८ प्रकार की कड़ी यातनाएँ दी जाती थीं, जैसे अंगुली की पोर जलाना, हाथ-पैर इस तरह बाँधना कि वह वृश्चिक जैसा मालूम दे, तेल पिलाकर दिन भर उसे तपाना और शिशिर की रात्रि में घास पर सुलाना आदि ।

---

49. आरब्धारस्तु हिंसाया गूढ़जीवास्त्रयोदश ।
प्रवास्या निष्क्रयार्थं वा दद्युर्दोषविशेषतः ॥
कौ. अर्थ. अ. ४; अधि ४.

50. Kau. Artha-Shamshastri; Chp. IV; Bk. 4.

शंकितक (अपराध की जिसपर शंका होती थी) को यदि अपराध होने के तीन दिन तक नहीं पकड़ा जाता था तो उसके बाद उसे अपराधी नही माना जाता था ।[51]

राज्याधिकारियों का नियमन

समाहर्तृ और प्रदेष्टा को विभिन्न अध्यक्षों और उनके पुरुषों (सहयोगी कर्मचारी) के कार्यों का नियमन (जाँच-पड़ताल) करना होता था । प्रदेष्टा व धर्मस्थ (न्याय का अमात्य व न्यायाधीश) यदि गलत तरीके से कार्य करते थे जैसे निर्णय देने में देर करना या वादी-प्रतिवादी में किसी का पक्ष लेना या निर्णीत मुकदमों को फिर से चालू करना तो उन्हें अर्थदण्ड दिया जाता था । झूठा अर्थ-दण्ड देने पर वे (धर्मस्थ-प्रदेष्टा) राजा द्वारा दण्डित किये जाते थे ।

न्यायालय के लेखक यदि गलत बयान लिखते थे तो उन्हें दण्ड मिलता था ।

बन्धनागाराध्यक्ष यदि किसी को बिना कारण (संरुद्धकमनाख्याय चारयत) हवालात में बन्द करता तो वह दण्डित किया जाता था । यदि कोई अधिकारी अपराधी को जेल से छोड़ या छुड़वा देता था तो उसे मृत्यु-दण्ड दिया जाता था और उसकी सारी जायदाद छीन ली जाती थी ।

धर्मस्थीय—दीवानी अदालत

दीवानी अदालत में तीन धर्मस्था (धर्म-शास्त्र के ज्ञाता) और तीन अमात्य न्याय-व्यवहार के लिए बैठते थे । धर्मस्थीय व कण्टक-शोधक अदालतों के लिए अमात्य-पद पर वे ही नियुक्त किये जाते थे जो धर्म-प्रलोभन द्वारा शुद्ध-चरित्र साबित हुए हों (अर्थात् वे अमात्य जो गुप्तचरों द्वारा राजा के विरुद्ध यह कह कर भड़काये जाते थे कि राजा अधार्मिक

51. Kau. Artha, Chp. VIII; Bk IV.

है और हमें उसे हटा देना चाहिए—जो अमात्य इस बात में न आकर राजभक्त बना रहता था उन्हें 'धर्म-प्रलोभन' से परे समझा जाता था)।[52]

जनता की सुभीता के लिए राज्य के विभिन्न भागों में 'धर्मस्थीय' स्थापित थे; जैसे—संग्रहण (१० गाँवों के मध्य का नगर, द्रोणमुख (४०० गाँव के मध्य में), स्थानीय (८०० गाँवों के मध्य में) तथा जन-पद-सन्धि (जहाँ पर दो जनपद अथवा जिले मिलते थे) के नगरों में ।[53]

धर्मस्थीय में व्यवहार (दो व्यक्ति अथवा दो दल जो परस्पर किसी बात के लिए इकरार करते हैं); विवाह और मोक्ष, दाय विभाग (पितृ-द्रव्य का विभाजन); वास्तु (मकान सम्बन्धी मामले); वास्तु विक्रय, खेत, ऋण, सिंचाई का पानी अथवा नहर, चारागाह, सड़कों-पंथों, उपनिधि (धरोहर); दास व कर्मकर (मजदूर), क्रय-विक्रय, हिंसा (चोट पहुँचाना; लेकिन जिस हिंसा से हत्या हो जाय, उसका निर्णय कण्टकशोधन में पेश होता था)[54]— Age of The Nandas And Mauryas; p. 186.) मानहानि और जुआ आदि के मामले निर्णय के लिये आते थे ।

न्यायकर्ता को निर्णय देने के लिए चार बातों पर ध्यान रखना होता था—(१) धर्म (धर्मशास्त्र) (२) व्यवहार (गवाही) (३) चरित्र (लोक इतिहास व संस्था) और (४) शासन (राजाज्ञा-न्याय) ।[55]

---

52 Ibid; Chp. x,Bk. I.

53. Ibid; Chp. I; Bk. III; and Chp. I, Bk II.

54. Ibid; BK. III.

55. धर्मश्च व्यवहारश्च चरित्रं राजशासनम् ।

...विवादार्थश्चतुष्पादः सत्ये स्थितो धर्मो व्यवहारस्तु साक्षिषु ।
चरित्रं संग्रहे पुंसां राजमाज्ञा तु शासनम् ॥ अ० १. अधि–३.

राजा की शक्ति को दृढ़ करने और प्रजा में शान्ति तथा क्षेम बनाये रखने में कौटिल्य की यह न्याय-व्यवस्था बहुत सफल हुई होगी, यह उसकी अदालतों के संगठन और उनके कार्यों आदि के विवरण से स्पष्टतया प्रकट है। कौटिल्य ने कहा है कि न्याय और शासन का ध्येय सामाजिक-व्यवस्था को स्थिर रखना और लोक की रक्षा करना है, लेकिन जो न्याय के साथ प्रजा की रक्षा नहीं करता वह दंड को व्यर्थ ही धारण करता है। अत: जो राजा निष्पक्षता से दण्ड देता व न्याय से शासन करता है वह लोक और परलोक दोनों का रक्षक बनता है तथा सम्पूर्ण पृथ्वी को विजय करता है—चतुरन्तां महीं जयेत्'—कौ० अर्थ. अ. १, अधि—३. फलत: न्याय की सुव्यवस्था और शासन की सुदृढ़ता के हितार्थ राजा दण्ड द्वारा प्रथम अधिकारियों का शोधन करता था और शोधे हुए शुद्ध-चरित्र के अधिकारियों द्वारा पौर और जनपद के लोगों का नियमन कराता था।[56]

बन्दियों की मुक्ति

प्रतिदिन या पाँच रात्रि पर एक बार जेल से उन बन्दियों को मुक्त कर दिया जाता था जिन्होंने कार्य किया हो, या काय-दण्ड (कोड़े की सजा) पाया हो या जिन्होंने अनुग्रह के लिए हिरण्य प्रदान किया हो।

राजा के जन्म दिवस पर तथा पूर्णिमा के दिन बाल, वृद्ध, व्याधि-ग्रस्त और अनाथ बन्दियों को भी बन्धनागार से मुक्त कर दिया जाता था। नये देशों की विजय तथा युवराज का अभिषेक व राजा का पुत्र होने के अवसरों पर भी बन्दी मुक्त किये जाते थे।[57]

नगर के बन्धनागारों के बन्दियों के कार्यों आदि की जाँच करने का अधिकारी शायद नागरक ही था और वही बन्धनागाराध्यक्ष को बन्दियों

56. Kau. Arth, Chp. IX; BK. I.

57. Kau. Artha. chp. XXXVI; BK. II

को मुक्ति का आदेश प्रेषित करता था क्योंकि कौटिल्य ने वन्दियों की मुक्ति सम्बन्धी कर्म का उल्लेख नागरक के कर्मों के साथ किया है। नागरक स्वयं शायद समाहर्तृ और प्रदेष्टा के निरीक्षण में कार्य करता था, जैसा कि अर्थशास्त्र के चौथे अधिकरण के नवें अध्याय से प्रतीत होता है।

राज्य की आय-व्यय

कौटिल्य ने कहा है कि सम्पूर्ण कार्य 'कोष' पर निर्भर करते है इसलिए राजा को सबसे अधिक कोष बढ़ाने पर ध्यान रखना चाहिये—
कोशपूर्वाः सर्वारम्भाः। तस्मात् पूर्वं कोशमवेक्षेत। अ. ८ अधि–२।

कोष की वृद्धि के लिए अनेक प्रकार के करादि लगे थे। दुर्गों, राष्ट्रों (जनपदों-भूमि), खनि, सेतु (पुष्प-फल की वाटिकाएँ), वन, व्रज (मवेशियों) और वणिक पथों (जल और स्थल के व्यापार मार्ग), शुल्क (व्यापारी माल से चुंगी), दण्ड (जुर्माना) आदि तथा मूल (धान्यफल आदि के विक्रय से लब्ध धन), भाग (उपज का $\frac{1}{6}$ हिस्सा-षड्भाग)[58], परिघ (आतरद्रव्य श्री मेअर के अनुसार (Gate duty), क्लृप्तम् (गाँवों से प्रतिनियत हिरण्य–धान्य आदि कर–Fixed Taxes).[59] रूपिक (लवण के विक्रय से होने वाला) और अत्ययश्च (धर्मस्थीय और कण्टकशोधन के न्यायाधीशों द्वारा वसूल किया गया अपराध दण्ड-द्रव्य) आदि आय के मुख्य साधन थे जिन्हें अर्थ-शास्त्र में आय का शरीर (आयशरीरम्) और आय का मुख (आयमुखम्) कहा गया है।[60]

इनके अलावा सेनाभक्त (सेना के लिए जनता से लिया जानेवाला राशन—'स्नेहतण्डुल-लवणादि), बलि (धार्मिक कार्यों के लिए कर), कर (सामन्तों और अधीनस्थ राजाओं से),—औपायनिक (राजा को

---

58. कौ. अर्थ. गणपति शास्त्री; अ. ६. अधि. २.
59. अ. १५. अधि. २. में शायद उसे ही पिण्डकर कहा गया है।
60. कौ. अर्थ. महामहोपाध्याय गणपति शास्त्री; अ. ६, अधि. २.

दी गयी भेंट), कौष्ठेयक (राज्य द्वारा स्थापित तड़ाग, सर आदि के पास की भूमिवालों से लिया जानेवाला कर) आदि कर भी थे जिन्हें 'राष्ट्र' के नाम से कहा जाता था।[61]

राज्य की आय मुख्यतः इन विषयों पर व्यय होती थी—देवपितृपूजा, दान, अन्तःपुर, महानस (राजकीय भोजनशाला), दूतकर्म, कोष्ठागार, आयुधागार, पण्यगृह (व्यापारियों के लिए), कुप्यगृह (कच्चे माल के लिए), कर्मान्त (उद्योगशालाओं), विष्टि: (बिना वेतन वाले भृत्य), पदाति, अश्व, रथ और हस्ति सेना, गोमण्डल (गायों), चिड़ियाघर (जिसमें पशु, मृग, पक्षी और व्याल आदि रखे जाते थे), लकड़ी (काष्ठ) और तृण (घास)—इन सबको अर्थशास्त्र में 'व्ययशरीर' कहा गया है।[62]

अर्थाभाव के कारण अल्पकोश को भरने के लिए राजा आवश्यकतानुसार अतिरिक्त कर लगाकर भी धन एकत्र कर सकता था। चन्द्रगुप्त ने अनेक युद्ध लड़े थे जिस कारण उसका राजकोष क्षीण हो चला था, जैसा कि पतञ्जलि के उस उल्लेख से प्रकट है जिसमें उसने मौर्यों द्वारा हिरण्य के लिए देवमूर्तियों को बेचने की बात कही है। हो सकता है कि 'अल्पकोष' के कारण चन्द्रगुप्त ने नियमतः 'अतिरिक्त' कर भी वसूल किया हो यद्यपि पतञ्जलि के 'देवमूर्ति-विक्रय' के कथन से, ऐसा भी अनुमान होता है कि प्रजा से 'अतिरिक्त' धन वसूल न करने की इच्छा से ही उसने 'देवमूर्तियों' के विक्रय को इच्छित अतिरिक्त 'आय' का साधन बनाया था ताकि नन्दों की तरह मौर्य भी 'धनलोलुप' नाम से कुप्रसिद्धि न प्राप्त करें। यदि प्रथम मौर्य ने 'अतिरिक्त' करों द्वारा अर्थ-संचय किया होता (चाहे वह नियमानुसार ही था) तो मुद्राराक्षस नाटक में चन्द्रगुप्त को अर्थ में रुचि रखनेवाले नन्दों से भिन्न और जनता का परिक्लेश हरन-

---

61 वही; अ. १५. अधि, २,

62. वही; अ. ६. अधि. २.

वाला न कहा गया होता [नन्दस्यैवार्थरुचेरसम्बन्धः प्रीतिमुत्पादयति—चन्द्रगुप्तस्य तु भवतामपरिक्लेश एव—प्रथम अंक]।

पुलिस और गुप्तचर विभाग

पुलिस के सिपाहियों को 'रक्षिन्' (रक्षा करनेवाला) और गुप्तचरों को 'गूढ़पुरुष' कहा जाता था। लोगों के धन-माल की रक्षा, देश में शान्ति बनाये रखना, अपराधियों पर निगाह रखना और उन्हें पकड़ना आदि कार्य पुलिस के जिम्मे थे। रात्रि मे भी नगर की देख-रेख और जन-सुरक्षा के लिए रात्रि-पुलिस अथवा ग्राम-रक्षक नियत रहते थे।[63]

प्रजा के लोगों, अधिकारीवर्ग और अधिकरणों, शत्रुओं के भेदियों आदि की गतिविधि पर निगाह रखने और जो कुछ जानकारी उपलब्ध हो उसकी सूचना राजा को पहुँचाने का कार्य 'गूढ़पुरुषों' का था। कौटिल्य ने कहा है कि शत्रु, मित्र, मध्यम और उदासीन प्रकार के राजाओं तथा अट्ठारह तीर्थों की गति-विधि जानने के लिए गुप्तचरों को संचालित करना चाहिए—

एव शत्रौ मित्रे च मध्यमे चावपेच्चरान्।
उदासीने च तेषां तीर्थेष्वष्टादशास्वपि॥

विश्वसनीय शुद्ध-अमात्यों की मंत्रणानुसार गुप्तचरों की राजा स्वयं नियुक्ति करता था।

गूढ़पुरुषों के दो प्रकार थे

१. संस्था—अर्थात् वे गुप्तचर जो एक स्थान में रहकर काम करते थे। इस विभाग में काम करनेवाले गुप्तचरों में पाँच प्रकार के गूढ़पुरुषों का नाम दिया गया है—कापटिक; उदास्थित; गृहपतिक; वैदेहक और तापस (इनका विषद् वर्णन अर्थशास्त्र के अ. १२, अधि. १ में किया गया है।

63. कौ. अर्थ. अ. ३६, अधि–१.

२. सञ्चारा—इस विभाग के गुप्तचर देश-विदेश में भ्रमण करते फिरते थे। उनके नाम-प्रकार थे—सत्री, तीक्ष्ण, रस, और परिव्राजिका या भिक्षुकी (मुण्डा-वृषल्यो—सिर मुण्डाई स्त्रियाँ व वेश्याएँ)। स्त्री-गुप्तचरों में कुशल स्त्रियाँ और दासियाँ अथवा वेश्याएँ भी होती थीं।[64]

गुप्तचरों को सही सूचनाएँ भेजनी होती थी। विभिन्न विभागों के गुप्तचरों द्वारा भेजी गयी सूचनाएँ जब समान होती थीं तब ही उस पर कार्य किया जाता था। यदि किसी गुप्तचर की भेजी सूचना गलत निकलती थी तो उसे गुप्तरूप से दण्ड दिया जाता या हटा दिया जाता था।[65]

मेगास्थनीजगुप्तचर और दण्ड-व्यवस्था

मेगास्थनीज के आधार पर स्ट्रावो ने भारत की छठी जाति के रूप में निरीक्षकों (overseers) अथवा इन्सपेक्टरों (Inspectors) का उल्लेख किया है जिनका काम राज्य की सभी घटनाओं पर दृष्टि रखना और गुप्तरूप से उनकी सूचना राजा को पहुँचाना था। नगर के निरीक्षक अपने कार्य में नगर-विलासिनियों अथवा वेश्याओं से मदद लेते थे और स्कन्धावार के निरीक्षक सैन्य-दल के साथ जानेवाले गणिकाओं (अर्थशास्त्र, अ. ३. अधि. ५ के अनुसार सैनिकों की गतिविधि पर निगाह रखने के लिए गुप्तचरों में वेश्याएँ भी शिविर में रहती थीं) से सहायता लेते थे।[66] स्ट्रावो ने लिखा है कि उक्त पदों पर बहुत योग्य और विश्वसनीय व्यक्ति ही रखे जाते थे।

---

64. कौ. अर्थ. अ. ११–१२, अधि–१.

65. वही अ. १२.

66. The sixth caste consists of the Inspectors. To them is entrusted the superintendence of all that goes on, and of making reports privately to the king. The city inspectors employ as their coadjutors the courte-

स्ट्राबो द्वारा उल्लेखित इन्सपेक्टर अथवा ओवरसीयर गुप्तचर-विभाग के अधिकारी थे इसमें सन्देह नहीं किया जा सकता।

मेगास्थनीज ने उस समय की दंड-व्यवस्था का उल्लेख करते हुए लिखा है कि झूठी गवाही देने पर अङ्ग-भङ्ग की सजा दी जाती थी। जो कोई किसी दूसरे के अंग को भंग करता था उसके बदले में समान अंग तथा हाथ भी काट दिया जाता था। अगर कोई किसी शिल्पी अथवा कारीगर का हाथ व आँख नष्ट कर देता तो उसे प्राणदंड दिया जाता था।[67]

अर्थशास्त्र से प्रतीत होता है कि दंड इतनी कठोरता से नहीं दिया जाता था जितना कि यूनानी लेखकों के विवरण से प्रतीत होता है। कौटिल्य ने कहा है कि तीक्ष्ण दंड और मृदुल दंड दोनों अवांछनीय हैं, इसलिए दण्ड अपराध के अनुरूप होना चाहिए—न अधिक न अल्प (तीक्ष्णदण्डो हि भूतानामुद्वेजनीयः। मृदुदण्डः परिभूयते। यथार्हदण्डः पूज्यः—अ. ४, अधि. १)। अतः अर्थशास्त्र के अनुसार जघन्य अपराधों को छोड़कर (अ. ६, अधि. ४) हल्के अपराधों के लिये सामान्यतया 'अर्थ-दण्ड' ही अधिक दिया जाता था जो तीन प्रकार का कहा गया है—

(१) पूर्व साहस दण्ड—४८ से ९६ पण का अर्थ-दण्ड।
(२) मध्यम साहस दण्ड—२०० से ५०० पण।

---

sans of the city, and the Inspectors of the camp, the courtesans who followed the army. The best and most trustworthy men are appointed to fill these offices' —India As Described In Classical Literature; p. 53.

67. Ibid, pp. 57-58.

(३) उत्तम साहस दण्ड—५०० से १००० पण।[68]

अर्थशास्त्र के चौथे अधिकरण के दसवें अध्याय में अनेक ऐसे बड़े अपराधों का वर्णन है जिनके लिए मुख्यत: अंग-भंग और मृत्यु-दण्ड देना लिखा है लेकिन उन्हें भी अर्थ-दण्ड में बदल दिया जा सकता था।

चन्द्रगुप्त के यथार्हदंड (यथा-अपराध दण्ड) और सुव्यवस्था ही का परिणाम था कि उसके युग में चोरी आदि अपराध की घटनाएं न्यूनतम स्तर को पहुँच गयी थीं। स्ट्राबो लिखता है कि मेगास्थनीज के अनुसार सन्ड्राकोटस (चन्द्रगुप्त) के स्कन्धावार अथवा पुर में जहाँ चार लाख आदमी रहते थे, किसी भी दिन २०० ड्रेक्म (Drachma—रजत की मुद्रा जो एक फ्रैंक = ९३/४ पेन्स) से अधिक की चोरी का होना नहीं सुना गया।[69]

इसी के सन्दर्भ में मेगास्थनीज ने यह भी कहा है कि भारतीयों के पास लिखित कानून नहीं हैं, क्योंकि वे लेखन-कला से अभिज्ञ हैं, और सारे काम स्मृति से ही करते है। किन्तु मेगास्थनीज का यह कथन अचरज पूर्ण है। उसने दूसरे स्थल पर अध्यक्षों (Magistrates) का वर्णन करते हुए मार्गों में दूरी व विभिन्न मार्गों की दिशाएँ जतलाने के लिए मील का पत्थर लगाने का स्वयं उल्लेख किया है जो स्वत: इस बात का प्रमाण है कि उस समय लेखन-प्रणाली प्रचलित थी।[70]

---

68. कौ. अर्थ. अ. १७. अधि. ३.

69. Ancient India Described In Classical Literature; p. 55

70. Ibid. कैम्ब्रिज हिस्ट्री का लेखक मेगास्थनीज के मील के पत्थर और लेखन-कला के उल्लेख पर मत प्रकट करता हुआ कहता है—'There was a milestone, indicating distances'—this is the passage which proves that Magasthenes did not mean to assert a general ignorance of the art of writing in India'—Camb Hist. Vol. I; p. 418,

वैदेशिक नीति--दौत्य सम्बन्ध

भारत की वैदेशिक नीति सदा से अनाक्रमण, शान्ति और सह-अस्तित्व की रही है। मेगास्थनीज के आधार पर एरियन ने लिखा है कि 'न्याय अथवा धर्म (justice) की भावना से प्रेरित होकर भारतीयों ने अपने देश की सीमा से बाहर कभी आक्रमण नहीं किया है।'[71] चन्द्रगुप्त ने सेल्यूकस पर विजय पाने के बाद जो मेल-जोल की नीति अपनायी थी उसका उसके उत्तराधिकारियों ने भी अनुकरण किया। फलत: प्रथम मौर्य के बाद उसके बेटे बिन्दुसार और पौत्र अशोक ने भी सीरिया आदि के यूनानी राजाओं से मैत्री और दौत्य-सम्बन्ध कायम रखा और शक्ति रखते हुए भी कभी हिन्दूकुश को लांघकर सीमान्त यूनानी प्रदेशों की ओर बढ़ने की इच्छा की न प्रयास!

शक्तिशाली महान् अशोक ने तो स्पष्ट रूप से अपने सीमान्त राज्यों को शासन प्रेषित कर यह जतला दिया था कि सीमान्त के राज्य उसकी शक्ति से संत्रस्त और भय-पीड़ित न रहें क्योंकि 'उसका 'अन्ता-राष्ट्रों के प्रति केवल सद्भाव है और उससे उन्हें 'सुख' की ही प्राप्ति होगी' (गौण-शिलालेख द्वितीय; कलिंग व जौगुडा)।

अन्तर्देशीय नीति

बाहरी देशों के प्रति मौर्यों ने यद्यपि अनाक्रमणात्मक नीति अपनायी, लेकिन देश के भीतरी राज्यों के संदर्भ में 'विजय' और 'उन्मूलन' की नीति का अनुकरण किया गया। एकछत्र राज्य स्थापित करने, देश को एक राजनैतिक सूत्र में बाँधने और राजनैतिक दृष्टि से भारत को एक देश अथवा एक राष्ट्र का रूप प्रदान करने के लिए जनपदीय—तराइयों का उन्मूलन राष्ट्रहित की दिशा में प्रथम और मुख्य कदम था।

---

71. Ancient India; p. 204.

इसीलिये कौटिल्य ने अर्थशास्त्र में विजेता राजा को, जो साम्राज्य स्थापित करना चाहता है, शत्रु राजाओं को दबाने के लिए षाड्गुण्य (६ प्रकार की नीति सन्धि, विग्रह (युद्ध), आसन (उदासीनता), यान (अभियान), संश्रय (मैत्री), द्वैधभाव (एक के साथ सन्धि और दूसरे के साथ विग्रह) नीति का अनुकरण करने को कहा है। इन नीतियों का यहाँ पर विस्तृत विवरण देना अनावश्यक है; इतना कहना यथेष्ठ होगा कि उक्त नीतियों का ध्येय कमजोर राजा को पहले दबाना, ताकतवर से कुछ समय के लिए सन्धि कर लेना और कमजोर पडने पर उसे भी दबा देना, पड़ोसी कमजोर राजा के पड़ोसी से मित्रता करके अपने पड़ोसी शत्रु पर आक्रमण करना और इस प्रकार सम्पूर्ण प्रादेशिक राज्यों को दबाकर अंततः एक 'भारतीय-साम्राज्य' के स्वप्न को साकार करना था ![72]

शत्रु-राजाओं को दबाने और उनकी शक्ति क्षीण करने के लिए मन्त्रयुद्ध अथवा कूट-उपायों से भी काम लिया जाता था, जैसे शत्रु-देश के राजा के यहाँ संचारा गुप्तचरों–तीक्ष्ण, रसद आदि को नियुक्त करना, बन्धकीपोषकों (वेश्याओं को रखने वाले) से शत्रु के सेना-मुख्यों में परमरूपवती युवतियों द्वारा उन्माद पैदा करना; तीक्ष्ण गुप्त-चरों द्वारा शत्रु-राजा के मन्त्री को राजत्व प्राप्ति के लिए उकसाना और भिक्षुकी गुप्तचर द्वारा मन्त्री की पत्नी को रानी होने का भविष्य बतलाना, शत्रु राजा के मन में शंका पैदा करना;[73] सेनामुख्यों, मन्त्रियों और राज्य के अधिकारियों को भूमि और सोने से प्रलोभित

---

72. Kau. Arth. chap. I; Bk V11
पूर्ण विवरण के लिए देखिए—
Kau. Arth. Chap. III; Bk. VII

73. Kau Arth. Chap. II. III. Bk XII

कर अपनी ओर आकृष्ट करना आदि (सेनामुख्यप्रकृतिपुरुषान् वा भूम्या हिरण्येन वा लोभयित्वा—अ. ३, अधि. १२)। शत्रु राजा के पास 'विजिगीषु' (विजय का इच्छुक राजा) संवाद आदि पहुंचाने के लिए 'दूत' नियुक्त करता था। इस पद पर वे ही रखे जाते थे जो पहले मन्त्री रहे हों। शत्रु के अधिष्ठान में पहुंचने पर दूत की निर्भीकता के साथ अपने प्राणों पर खेलकर वहाँ के राजा से अपने राजा का पूरा 'शासन' कहना होता था। सामान्यतः दूत 'अवध्य' थे क्योंकि वे दूसरे के वचनों को बोलते थे जो कि उनका 'दूतधर्म' था।

शत्रु-देश में निवास करते हुए 'दूत' गुप्तरूप से वहाँ के राजा के अधिकारियों से मित्रता भी पैदा करता था, और शत्रु के सैनिक-स्थानों, युद्ध-सामग्रियों, दुर्ग और राष्ट्र के प्रमाण (कद और विस्तार) आदि का पता लगाता रहता था[74] ताकि शत्रु की शक्ति और उसके छिद्रों (कमजोरियों) का अनुमान किया जा सके।

प्रान्त—स्थानीय और ग्राम

मौर्य साम्राज्य अत्यन्त विस्तृत था, इसलिए शासन की सुभीता के लिए उसे प्रान्तों, जनपदों (विषय-जिला-स्थानीय) और ग्रामों मे बाँट दिया गया था। चन्द्रगुप्त के समय प्रान्तों की संख्या कितनी थी इसका विवरण नहीं मिलता।

महाक्षत्रप रुद्रदामन् के जूनागढ़ अभिलेख (१५० ई० सन्) से मालूम होता है कि चन्द्रगुप्त के समय में 'सौराष्ट्र' मौर्य साम्राज्य का एक प्रान्त था, जिसका राष्ट्रीय (गवर्नर) वैश्य पुष्पगुप्त था।[75]

---

74. Ibid; Chap. XVI, Bk. I

75. श्री रायचौधरी के मत में सौराष्ट्र एक स्वतन्त्र-संघ-राज्य था और पुष्यगुप्त उसका राष्ट्रीय (Imperial High Commissioner) था—Political History Of Ancient India; pp. 236-237.

सुदर्शन झील का निर्माण उसी ने करवाया था। जिससे सिंचाई के लिए नहरों को पानी मिलता था। अशोक के समय में उसके राष्ट्रीय यवनराज तुषास्प ने झील में और भी सुधार किये थे।[76] ये उल्लेख इस बात के प्रमाण हैं कि सार्वजनिक-हित कार्यों पर राज्य के दूरस्थ प्रान्तों में भी बहुत ध्यान रखा जाता था। अत: नीलकंठ शास्त्री ने बहुत ठीक कहा है कि—'This is solid testimony to the continuous attention given by Mauryan emperors to large works of public utility and to the effictency of their bureaucracy .. '[77]

अशोक के अभिलेखों और दिव्यावदान व महावंश आदि बौद्ध-ग्रन्थों से मौर्यों के नीचे लिखे चार प्रान्तों के नाम मिलते हैं—

१. गान्धार—(उत्तरापथ); इसकी राजधानी तक्षशिला थी। दिव्यावदान के अनुसार चन्द्रगुप्त के बेटे बिन्दुसार के समय वहाँ विद्रोह हुआ था लेकिन अशोक ने उसे दबा दिया था।

सिल्यूकस के साथ हुई सन्धि के अनुसार बिलोचिस्तान, मकरान, काबुल व अफगानिस्तान को मिलाकर उत्तरापथ से आगे एक और प्रान्त भी मौर्य साम्राज्य में शामिल रहा होगा, जिसकी राजधानी शायद कपिशा थी[78]।

२. अवन्ति—इसकी राजधानी उज्जैन थी (महावंश १३ वाँ अध्याय)।

३. कलिंग—इसकी राजजानी तोषाली थी—लेकिन चन्द्रगुप्त के समय में यह एक स्वतन्त्र अविजित राज्य था।

---

76. Epigraphia Indica; vol. VIII; p. 42.

77. The Age Of The Nandas And Mauryas; pp. 182–183.

78. भारतीय इतिहास की भूमिका, पृ०—१३७.

४. दक्षिणापथ—इसकी राजधानी सुवर्णगिरी थी।

५. गृहप्रान्त—(प्राच्य और मध्यदेश के प्रदेश इसमें शामिल थे।) इसका शासन महामात्रों के सहयोग से सीधे सम्राट् द्वारा होता था।

राज्य के मुख्य प्रान्तों के लिए कुमार व युवराज (आर्यपुत्र) राष्ट्रपाल अथवा गवर्नर नियुक्त किये जाते थे।

स्थानीय शासन

प्रान्तों को अनेक छोटे-छोटे भागों में बाँट दिया गया था—(१) स्थानीय (इसमें ८०० गाँव होते थे); (२) द्रोणमुख (४०० गाँव का); (३) खारवटिक (२०० गाँव का); (४) संग्रहण (१० गाँव का)।[79] शासन की अन्तिम इकाई ग्राम थे।

ग्राम एक प्रकार से छोटे-छोटे अर्द्ध-स्वतन्त्र प्रजातन्त्र थे। ग्रामों के आर्थिक और सैनिक आदि शासन के लिए सरकारी पुरुष नियुक्त रहते थे; लेकिन सरकार के निरीक्षण में ग्रामो के बहुत से विवाद व कलह ग्रामिक (ग्राम-मुखिया) व ग्रामवृद्धों की सभा स्वयं तय कर लिया करती थी। उदाहरण के लिए जब किसी दो ग्राम के बीच सीमा के लिए विवाद उठता था तो पाँच व दस गाँव के ग्रामवृद्ध मिलकर उसका निपटारा करते थे; इसी तरह खेतों की सीमा का विवाद ग्राम के वृद्ध तय करते थे।[80] जब कभी ग्रामिक को पूरे गाँव के कार्य से कहीं जाना पड़ता था तो गाँव के लोग क्रमशः उसके साथ जाते थे।[81]

ग्राम के कृषकों को अपनी जमीन बेचने और बन्धक रखने का अधिकार था लेकिन इस प्रकार का व्यवहार वे 'कर' देने वालों से ही कर सकते थे—करदाः करदेष्वाधानविक्रयं वा कुर्युः—अ. १०

---

79. Kau. Arth. Chp. I; Bk. II.

80. Kau. Arth. Chp. IX; Bk. III.

81. Ibid; Chp X

अधि. ३। यह वृत्त मेगास्थनीज के इस कथन को कि सारी भूमि राजा की है और कृषकों को मजदूरीस्वरूप उपज का ¼ दिया जाता है, गलत प्रमाणित कर देता है।[83] शायद मेगास्थनीज का अभिप्राय राजा की निजी भूमि से रहा होगा।

ग्रामों में खेती की सिंचाई के लिए—सेतु, तड़ाग, वापी और नदी से काम लिया जाता था। नहरों में पानी पहुँचाने के लिये वातशक्ति (wind Power) और बैलों का प्रयोग किया जाता था। तड़ाग, नदी व वात-शक्ति आदि से प्लावित होनेवाले क्षेत्रों व बाग-बगीचों की उपज का एक भाग राज्य को मिलता था।

सिंचाई के साधनों को नुकसान पहुँचाने पर दण्ड दिया जाता था।[83] सिंचाई के प्रबंध पर राजा बहुत ध्यान रखता था। इसके लिए सेतु (जैसी गिरनार की सुदर्शन झील) बनाये जाते थे जिसमें नदियों आदि से पानी एकत्र किया जाता था। स्वयं सेतु बनानेवाले ग्रामिकों को राजा की ओर से अनुग्रह-स्वरूप साधन दिए जाते थे। जो ग्रामवासी सेतु बाँधने में सहयोग नहीं देता था उसे सिंचाई का लाभ नहीं मिलता था।

नये गाँव बसाने तथा अन्य आवश्यक अवसरों वा संकटकाल (दुर्भिक्ष के समय राजा तकावी के रूप में बीज और अन्न देता था)[84] में राजा ग्रामिकों को कर से मुक्ति देता था। जो ग्रामिक सरलता से कर चुकाया करते थे उन्हें राज्य की ओर से धान्य, पशु और हिरण्य की मदद दी जाती थी।

---

82. Ancient India As Described In Classical Literature p. 48.

83. Ibid; chp IX, Bk. III.

84. दुर्भिक्षे राजा बीजभक्तोपग्रहं कृत्वानुग्रहं कुर्यात्।

अ०— ३, अधि. ४.

जो कृषक स्वयं खेती नहीं करते थे उनकी भूमि छीन कर दूसरों को दे दी जाती थी।

बढ़ी हुई आबादी को फैलाने व बसाने के लिए राजा नये ग्रामों का निर्माण कराता था।[85]

ग्रामवासियों और सरकार के ग्राम-अध्यक्षों के कार्यों और चरित्र की देख-रेख के लिए गुप्तचर नियत रहते थे।[86] गाँवों और जिलों के अन्य अधिकारियों में गोप और स्थानीय मुख्य थे जो समाहर्तृ के निरीक्षण में कार्य करते थे। इनके कार्यों का समाहर्तृ के साथ उल्लेख किया जा चुका है।

ग्रामों के बहुत से प्रकार थे—१—परिहारक (इस नाम के गाँव 'कर' मुक्त थे); २—आयुधीय (जो गाँव सैनिक देते थे); ३—ऐसे गाँव जो धान्य, पशु, हिरण्य अथवा कुप्य (कच्चा माल) में कर चुकाते थे और ४—जो गाँव विष्टि (मुक्तसेवा—free labour), मक्खन और घी-दूध-दही आदि में कर चुकाते थे।[87]

जन-कल्याण राज्य

चन्द्रगुप्त के शासन का उपरोक्त विवरण उसके सुप्रबन्ध और सुव्यवस्था का ही नहीं उसकी जन-कल्याणात्मक नीति का भी परिचायक है। यह बात कौटिल्य के उस निर्देश से और भी स्पष्ट हो जाती है जिसमें उसने कहा है कि बाल (अनाथ बालकों), वृद्धों, व्याधिग्रस्त, अपंगों, अनाथों, अनाथ गर्भवती स्त्रियों और उनके बच्चों का प्रतिपालन राजा अथवा राज्य की ओर से होना चाहिए।

इसी तरह ग्रामवृद्धों को भी गाँव के अनाथ बच्चों की भूमि व द्रव्य आदि का उनके वयस्क होने तक देख-रेख करनी होती थी।[88]

---

85 Ibid; Chp I Bk II.

86. Ibid; Chp. IV. Bk IV.

87. Ibid; Chp. xxxv; Bk II.

88. Ibid. chp. I; Bk. II

संक्षेप में कौटिल्य ने राजा को 'पिता' के समान अनाथ-दुखियों पर सर्वदा अनुग्रह करने का निर्देश दिया है;[89] जिसका मौर्य सम्राटों ने अक्षरश: पालन किया जैसा कि अशोक के इन स्नेह और अनुग्रहयुक्त वचनों से प्रकट है—'सवमुनि सा मे पजा' (सर्वे मनुष्याः मम प्रजा—गौणस्तम्भ—लेख द्वितीय; जौगुडा)।

---

89. सर्वत्र चोपहतान पितेवानुगृह्णीयात्—अ० ३, अधि. ४.

अध्याय—५

सैनिक-व्यवस्था

चन्द्रगुप्त ने यूनानियों को बाहर खदेड़ा था; नन्दों को उन्मूलित किया था और सिल्यूकस को पराजित कर भारत की सीमा उसकी सीमा से मिला दी थी। इस प्रकार हिन्दूकुश और हिमालय से लेकर पश्चिम में सौराष्ट्र व पूरब में बंग तक का प्रदेश और दक्षिण में कम-से-कम उत्तरी-मैसूर तक का प्रदेश मौर्यसम्राट् ने अपने एकछत्र शासन में आबद्ध कर दिया था। अर्थशास्त्र में कहा गया है कि हिमालय से समुद्रान्त तक एक हजार योजन विस्तार का देश चक्रवर्ती (चन्द्रगुप्त से अभिप्राय है) का क्षेत्र (चक्रवर्तिक्षेत्रम्) है (अ० १, अधि. ९)। निःसंदेह इस महान् क्षेत्र की दिग्विजय बिना एक विशाल, सुसंगठित, सुशिक्षित, सुसंयमित और सुसंचालित सेना के संभव नहीं थी। अर्थशास्त्र में कौटिल्य ने कोष और दण्ड को बहुत महत्त्व दिया है—क्योंकि कोष से ही दण्ड अथवा सेना खड़ी की जा सकती है और सेना की शक्ति से ही राजा साम्राज्य का विस्तार करता हुआ देश को बाहरी और भीतरी शत्रुओं से सुरक्षित रख सकता है। अतः कोष और सेना दोनों को कौटिल्य ने दो आप्तपुरुषों (कुलीन, राजवंश के कुमार व विश्वसनीय व्यक्ति) की अधिष्ठता में एक ही स्थान—दुर्ग चाहे सीमान्त में रखने का आदेश दिया है।[1]

---

1. 'आप्तपुरुषाधिष्ठितौ दुर्गप्रत्यन्तस्थौ वा कोशदण्डावेकस्थौ कारयेत्—अ. ६. अधि. ५.

एकछत्र सार्वभौम सम्राट के लिए यह भी आवश्यक था कि उसे सेना के लिए सामन्तों, मुखियों और प्रान्तीय शासकों पर निर्भर न रहना पड़े, क्योंकि विक्षिप्त सैन्य को समय पर एकत्र करना कठिन पड़ता है। अत: कौटिल्य ने विक्षिप्त-सैन्य से अवश-स्थित सेना (standing army) को अधिक उपयुक्त बतलाया है—क्योंकि 'अवश' को तो 'वश' किया जा सकता है, लेकिन यत्र-तत्र विक्षिप्त सेना को एकत्र करना कठिन होता है—

अवश्यसैन्यं श्रेयः। अवश्यं हि शक्यं सामादिभिर्वश्यं कर्तुं, नेतरत् कार्यव्यासक्तं प्रतिसंहर्तुम्—अ. ९. अधि. ७.।

चन्द्रगुप्त ने अपने आचार्य के उक्त निर्देशों का पूर्णतया अनुकरण किया था; क्योंकि यूनानी और लातिन लेखकों से हमें मालूम है कि उसकी स्थित-सेना बहुत सुगठित और विशाल थी। प्लिनी के अनुसार चन्द्रगुप्त की सेना में ६ लाख पैदल, तीस हजार अश्व और नौ हजार हाथी थे।[2] एरियन ने एक दूसरे स्थल पर पैदलों की संख्या साठ हजार और हाथियों की आठ हजार दी है।[3] प्लूटार्क ने पैदलों की सैन्य संख्या ६ लाख दी है।[4]

प्लिनी व एरियन ने 'रथों' व पोतों (नाव-सेना) का उल्लेख नहीं किया है जो कि मौर्य-सेना के दो प्रभावशाली अंग थे। रथों की संख्या नन्दों के समय में नौ हजार थी, अत: अनुमान किया गया है कि मौर्य-सेना में भी कम-से-कम उतने रथ थे।[5]

---

2. Ancient India; p. 139.
3. Ibid; p. 156
4. Plutarchs Lives; p. 490
5. Chandragupta And His Times; p. 165

इस विशाल सेना का प्रबन्ध कितना सुव्यवस्थित और संगठन व शिक्षण कितना सुसंचालित था यह मेगास्थनीज और अर्थशास्त्र के विवरण से प्रकट हो जायगा।

मेगास्थनीज-वर्णित सैन्य व्यवस्था

मेगास्थनीज ने मौर्य-सेना के ६ अंगों (षडांग) का उल्लेख किया है, जिनका प्रबन्ध ३० सदस्यों की एक महासमिति के सुपुर्द था जो ५-५ सदस्यों की ६ उपसमितियों में विभाजित थी। सेना के विभिन्न अंगों का कार्य पृथक्-पृथक् समितियों द्वारा संचालित होता था—

पहली समिति (विभाग)—जल सेना का प्रबन्ध करती थी।

दूसरी समिति (विभाग)—सेना की आवश्यक सामग्रियों, सैनिकों के लिए रसद और पशुओं के लिए चारा आदि का प्रबन्ध करती थी। इस विभाग में रणभेरी और वाद्यों को बजानेवाले तथा घोड़ों के साईस और शिल्पी आदि भी शामिल थे।

तीसरी समिति (विभाग)—पैदल सेना के लिए थी।

चौथी समिति (विभाग)—अश्व सेना के लिए थी।

पाँचवीं समिति (विभाग)—रथ सेना के लिए थी।

छठी समिति (विभाग)—हस्तिसेना का प्रबन्ध करती थी।

मेगास्थनीज का यह विवरण कौटिल्य से साम्य रखता है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र के अनुसार भी सेना के प्रत्येक विभाग का पृथक् अध्यक्ष होता था जैसे पत्याध्यक्ष (पैदल सेना का अध्यक्ष); अश्वाध्यक्ष (अश्व सेना का अध्यक्ष); रथाध्यक्ष (रथ-सेना का अध्यक्ष), हस्त्यध्यक्ष (हस्ति सेना का अध्यक्ष) और नवाध्यक्ष।

अर्थशास्त्र में सेना को सामान पहुँचाने और सैनिक आवश्यकताओं को पूरा करनेवालों का एक अलग विभाग दिया है। यह विभाग 'विष्टि-कर्म' करनेवाला कहलाता था। इस विभाग के शिल्पी, मजदूर व भृत्य आदि शिविर, मार्ग, सेतू व कूप का प्रबन्ध करते, नदियों का निरीक्षण

करते तथा सैनिक-यन्त्र, आयुध, अथवा अस्त्र-शस्त्र व खाद्य-सामग्री आदि सेना को पहुँचाया करते थे। युद्ध में घायल हुए सैनिकों को उनके शस्त्र-अस्त्रों सहित युद्ध क्षेत्र से हटा ले जाने का काम भी 'विष्टि-विभाग' के सुपुर्द था।[6]

कौटिल्य अर्थशास्त्र के अनुसार सेना के साथ वर्तमान 'रेडक्रास' रूप का एक चिकित्सा-विभाग भी रहता था। इस विभाग में चिकित्सक और सेवा करनेवाली स्त्रियाँ नियुक्त थीं। चिकित्सक लोग सेना के पृष्ठ-भाग मे शस्त्र (Surgical Instruments), यन्त्र (Apparatus), दवाइयाँ, स्नेह (healing Oils) और पट्टी बांधने के वस्त्रों को लिए तैनात रहते थे और स्त्री-परिचारिकाएँ पका हुआ अन्न और पेय लिए सैनिको की सेवा के लिए प्रस्तुत रहती थीं। साथ ही वे सैनिकों को लड़ने के लिए उत्साहित भी किया करते थे।[7]

पैदल सेना के ६ वर्ग

कौटिल्य के अनुसार पैदल सेना ६ वर्गों से बनी थी।[8]

1. मौल—राजा की निजी पैतृक सेना।

२. भृत—पैसा लेकर लड़नेवाली किराये की सेना।

३. श्रेणी—युद्ध अथवा शस्त्रों से आजीविका कमानेवाले सैनिको अथवा सैनिक जातियों, क्षत्रियों के संघ या श्रेणियों की सेना। इनमे कौटिल्य ने मुख्यत: उदाहरण-स्वरूप काम्बोज और सुराष्ट्र की क्षत्रिय श्रेणियों के नाम दिये हैं।[9] राज्य के अन्तर्गत भी कुछ गाँव ऐसे थे जहाँ सैनिक पेशे के लोग ही बसते थे और जो राजा को करों के बदले 'सैनिक' दिया करते थे। इन गाँवों को 'अर्थशास्त्र' में 'आयुधीय' कहा गया है।[10]

---

6 Kauti Arth Bk. X; Chp. IV.
7 Ibid, Chp, iii.
8 Ibid; Bk ix; Chp. 2.
9 Ibid, Book X chp. I
10. Ibid, Book II. chp xxxv.

४. मित्र-बल—मित्र-राज्य की सेना।

५. अमित्र-बल—शत्रु राज्य से भर्ती की गयी सेना।

६. अटवी-बल—अटवी-प्रदेशों में रहनेवाली जंगली-जाति के लोगों की सेना।

सेना के उक्त ६ वर्गों में क्रमानुसार प्रथम उल्लेखित-वर्ग की सेना उसके बाद वाले वर्ग से बढ़िया मानी गयी है (पूर्व-पूर्व चैषां श्रेयः)।

सेना की परिभाषा करते हुए कौटिल्य ने उस मौल अथवा स्थित सेना को सर्वश्रेष्ठ बतलाया है—जो पैतृक हो (पिता-पितामह से चली आनेवाली), वैश्य हो (अनुवर्तिनी हो), पुष्ट हो, तुष्ट हो, कहीं भी प्रयाण करने को तैयार रहे, प्रवास के दुःख और कठिनाइयों को सहन करनेवाली हो, बहुसमर परिचित हो, सब विधियों से युद्ध करने और आयुधविद्या में प्रवीण हो, राजा की वृद्धि में वृद्धि, और उसके क्षय में क्षय समझनेवाली हो, अभेद्य हो अर्थात् शत्रुओं को भेद न प्रकट करनेवाली हो तथा क्षत्रिय-प्रचुर (अधिक क्षत्रिय उसमें हों) हो (अ. ९. अधि. ६)।

सेना व वर्ण

सेना में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र चारों वर्ण के लोग भर्ती किये जा सकते थे; किन्तु कौटिल्य ने क्षत्रियों की सेना को ही सबसे श्रेष्ठ बतलाया है। कौटिल्य ने ब्राह्मणों की सेना को अच्छा नहीं कहा है क्योंकि उसका कहना है कि शत्रु विनय और प्रार्थना के द्वारा ब्राह्मण-सेना पर काबू पा सकता है। अतः कौटिल्य ने क्षत्रियों के बाद ब्राह्मण-सेना के बजाय भारी संख्या वाली वैश्यों और शूद्रों की सेना को स्थान दिया है।[11]

सेना के अधिकारी

चतुरंग सेना के प्रत्येक अंग के १० सदस्यों के ऊपर एक सैनिक अधिकारी होता था जिसे पदिक कहते थे। राधाकुमुद मुखर्जी ने बतलाया

---

11. Ibid; Bk. IX. Chp. II.

है कि एक पदिक के नीचे १० हाथी, १० रथ, ५० अश्वारोही और २०० पदाति होते थे।[12]

प्रत्येक दस पदिकों अर्थात् १०० हाथी, ५०० अश्वारोही और २,००० पैदल, अथवा १०० रथ और उतने ही अश्वारोही और पैदल के ऊपर एक सैनिक अधिकारी होता था जिसे सेनापति कहते थे।

दस सेनापतियों के ऊपर का अधिकारी 'नायक' कहलाता था।[13]

महासेनापति अथवा महानायक का पद पुरोहित, मंत्री युवराज और महारानी के समकक्ष होता था। उसे माहवार ४८,००० पण तनख्वाह मिलती थी। नायक को १२,००० पण मासिक मिलता था। उसके नीचे 'सेना-मुख्य' होता था। उसे ८,००० पण मासिक मिलता था। 'मुख्यों' के बाद सेना के विभिन्न अंग के अध्यक्ष होते थे जिन्हें ४,००० पण मासिक मिलता था।

शिक्षित सैनिकों को ५०० पण मासिक मिलता था।

राजा की सेवा करते हुए जो सैनिक मर जाते थे उनके बच्चों और स्त्रियों को राज्य की तरफ से जीवन-निर्वाहक वेतन दिया जाता था।[14]

महासेनापति

महासेनापति वही हो सकता था जो सब प्रकार के आयुधों का प्रयोग करना और चतुरंगबल (हाथी, घोड़े, रथ और पैदल) को ठीक से संचालित करने में दक्ष होता था। उसमें आवश्यकतानुसार सेना को आगे बढ़ाने व पीछे हटाने की योग्यता अपेक्षित थी (आयोगमायोगं च)। उसे यह ज्ञान होना भी जरूरी था कि युद्ध के लिये उसकी सेना को किस

---

12. Chandragupta Maurya And His Times; p. 169.

13. Kau. Artha; Bk. X; Chp VI.

14. Ibid; Bk. V. Chp. III.

प्रकार की भूमि लाभदायक होगी, यान के लिए कौन-सा समय उपयुक्त होगा, शत्रु का बल कितना है, शत्रु-दल की एकता कैसे भंग की जा सकती है, दुर्गोपर कैसे सफलतापूर्वक आक्रमण किया जाय और कब पूर्ण रूप से धावा बोल देना चाहिए। उसे तूर्य, ध्वज अथवा पताकाओं के नाम पर सेना के व्यूहों (Regiments) का नाम रखना होता था। उसे सेना के 'संयम' पर शिविर में रहने और यान करने के समय ही नहीं, अपितु युद्ध में रत रहने पर भी पूरा ध्यान रखना पड़ता था।[15]

नायक

महासेनापति के बाद सेना का दूसरा बड़ा अधिकारी शायद 'नायक था। उसके नीचे दस सेनापति होते थे। वह अपनी सेना का मुखिया होता था।[16] अभियान के समय मार्ग में उपयुक्त स्थल पर सेना के लिए स्कन्धावार बनाने का कार्य उसी की देख-रेख में किया जाता था।[17]

नायक के बाद पैदल, घोड़े, हाथी और रथ सेना के 'मुख्य' और उनके बाद चतुरंग सेना के 'अध्यक्ष' होते थे। 'मुख्यों' को अध्यक्षों से दूना वेतन मिलता था। श्री राधाकुमुद मुखर्जी के अनुसार सेना के मुख्य और अध्यक्ष शायद रण-क्षेत्र के अधिकारी न होकर केवल कार्यवाहक अधिकारी थे।[18] किन्तु कौटिल्य ने घोड़े, रथ, हाथी अथवा पैदल सेना के 'अध्यक्षों' के कार्यों का जो विवरण दिया है उससे यह प्रतीत होता है कि सेना के शिक्षण और संचालन का उन्हें पूरा ज्ञान रहता था, और इसलिए हम उन्हें केवल सैनिक कार्यालय के अधिकारी नहीं कह सकते। उदाहरण के लिए रथाध्यक्ष को रथ सैनिकों की हर प्रकार की कुशलता

15. Ibid; Bk. II. Chp. XXX II.
16. Ibid; Chp. VI; Bk. X.
17. Ibid; Chp. I; Bk, X.
18. Chandragupta And His Times; pp 169–170.

जैसे तीर चलाने, गदा फेंकने, युद्ध के आवरण धारण करने, रथ चलाने, रथ में बैठकर युद्ध करने तथा रथ के घोड़ों को काबू में रखने की क्षमता आदि जाँच करनी होती थी।

इसी तरह पैदल सेना के अध्यक्ष का भी सेना और युद्ध के सब प्रकारों और संचालन आदि से विज्ञ होना आवश्यक था (Kau. Artha. Chp. xxxiii; Bk. ii.)।

चतुरंग सेना के प्रत्येक विभाग के लिये कई अधिकारी रखे जाते थे ताकि अधिकारी वर्ग एक दूसरे के भय से विद्रोह बनकर शत्रु के दल में न मिल सकें (Bk. III Chp IV)।

रथ, हाथी और घोड़े

मेगास्थनीज ने बतलाया है कि "युद्ध को जाते समय रथों को बैल खींचते हैं और घोड़ों को अलग रस्सी से पकड़कर ले जाया जाता है ताकि उनके पैर दुखने न पावें और युद्ध के लिए उनका जोश ठंडा न पड़ जावे।

रथी (रथवान्) के साथ उसके पार्श्व में दो योद्धा रथ में बैठते हैं।

हाथियों को लगाम नहीं लगायी जाती। युद्ध के हाथी पर चार सवार बैठते हैं—तीन धनुर्धर सैनिक और एक महावत। धनुर्धरों में दो सैनिक पार्श्व (बंगलों) से और एक पृष्ठ-भाग (पीछे) से तीर चलाता है। हाथी और घोड़ों के लिए राजकीय शालाएँ और हथियारों के लिए राजकीय शस्त्रागार बने होते हैं। प्रत्येक सैनिक को अपने अस्त्र-शस्त्र 'शस्त्रागार' को और हाथी घोड़े राजकीय शालाओं को वापस लौटा देने होते हैं।"[19]

महाकाव्य काल तक रथ और अश्व भारतीय सेना के प्रमुख अंग थे। लेकिन चौथी शताब्दी ई० पू० में पहुँचकर हाथी और घोड़े सेना

19. Ancient India; pp. 88–89–90.

के प्रमुख अंग बन गये । इन दो में भी हाथियों का स्थान प्रथम था । कौटिल्य का कहना है कि युद्धों में राजा की विजय मुख्यत: हाथियो पर निर्भर करती है ।[20] इस कथन की पुष्टि करते हुए मेगास्थनीज ने भी लिखा है कि हाथी और घोड़े भारतीय सेना के प्रमुख अंग थे । भारतीय राजाओं की शक्ति हाथियों तथा अश्वों की संख्या पर निर्भर करती थी । अत: युद्धोपयोगी होने के कारण हाथी और घोड़े राजकीय सम्पत्ति समझे जाते थे और प्रजावर्ग में से कोई उन्हें निजी उपयोग के लिए नहीं रख सकता था ।[21] चन्द्रगुप्त के समय जैसा कि कौटिल्य-अर्थशास्त्र से प्रकट है, हाथियो की सुरक्षा और पोषण पर बहुत ध्यान रखा जाता था और इसलिये हाथी के मारनेवाले को मृत्यु-दण्ड तक दिया जाता था ।[22]

युद्ध के हाथियों को सात प्रकार की सैनिक शिक्षा दी जाती थी; जैसे उपस्थान (ड्रिल करना); संवर्त्तन (मुड़ना); संयान (आगे बढना; वधावध (मारना व कुचलना); हस्तियुद्ध (दूसरे हाथियो से लडना); और नारायण (दुर्ग और नगरों पर आक्रमण करना) तथा संग्राम (युद्ध करना) ।

हाथियों की देख-रेख और प्रबन्ध के लिए एक विभाग स्थापित था जिसका अधिकारी हस्त्याक्ष कहलाता था । हाथियों के जगलो की सुरक्षा, जंगली हाथियों को पकड़ना, हाथियों के लिए गजशाला का निर्माण, उनकी सैनिक शिक्षा का प्रबन्ध, उनके खाने-पीने का प्रबन्ध और बीमार पड़ने पर उनकी चिकित्सा का प्रबन्ध आदि कार्य हस्त्याध्यक्ष को ही करने होते थे ।[23]

---

20. कौ. अर्थ. २—अधि. २.
21. Ancient India; p. 90.
22. कौटिल्य अर्थशास्त्र—अधि. २; अ. २.
23. कौटिल्य अर्थशास्त्र, अधि—२, अ. ३१—३२.

कलिंग, अंग, करुश, प्राच्य देश के हाथी सबसे उत्तम; दशारण और अपरन्ता (पश्चिमी भारत) के मध्यम और सौराष्ट्र तथा पंचजन अथवा पंचनद (पंजाब) के निकृष्ट श्रेणी के समझे जाते थे।[24] एलियन के अनुसार सबसे उत्तम-महाकाय हाथी प्राच्य-प्रदेश और तक्षशिला के होते थे (Ancient India; p. 118)।

हाथियों की तरह युद्ध के घोड़ों को भी नियमित रूप से सैनिक-शिक्षा दी जाती थी। उन्हें वलग्न (वृत्ताकार चलना); नीचैर्गत (आहिस्ता चलना); लंघन (लांघना); धोरण (चौकड़ी भरना), नारोष्ट्र (संकेतों को समझना) आदि सैनिक कर्म सिखलाये जाते थे।

घोड़ों की देख-भाल, क्रय-विक्रय और पालन-पोषण आदि के लिए भी एक पृथक् विभाग था जिसका अधिकारी 'अश्वाध्यक्ष' कहलाता था। उसे घोड़ों का, उनकी जाति, वर्ण, गुण, लक्षण आदि के अनुसार रजिस्टर तैयार करना पड़ता था। घोड़ों के रहने के लिये अश्वशाला और उनके खाने-पीने का प्रबन्ध तथा बीमार पड़ने पर चिकित्सा का प्रबन्ध आदि अश्वाध्यक्ष ही करता था।

घोड़ों में काम्बोज (अफगानिस्तान); सिन्धु; आरट्ट (पंजाब) और वनायु (अरेबिया) के घोड़े सबसे उत्तम; बाह्लीक (बलख-बैक्ट्रिया), पापेय, (अज्ञात); सौवीर (सिन्धु के मुहाने का प्रदेश), तैतल (अज्ञात) के मध्यम और अन्य साधारण श्रेणी के समझे जाते थे।[25]

---

24. अधि. २, अ. २.

25. अधि. २, अ०. ३०, हाथी और घोड़े "...being Animals of great use in arms and war-fare were held in the highest esteem by the Indians" AELIAN; cxxv.

पदातियों, घोड़ों, रथों और हाथियों को रोज प्रातः सैनिक शिक्षा दी जाती थी। इस अवसर पर राजा भी उपस्थित रहता था और सैनिकों के कार्य का निरीक्षण करता था।[26]

युद्ध के अस्त्र-शस्त्र

यूनानी लेखकों और कौटिल्य अर्थशास्त्र से मौर्यंयुगीन सामरिक अस्त्र-शस्त्रों के बारे में हमें यथेष्ट जानकारी प्राप्त होती है। यूनानी लेखकों के अनुसार धनुष-बाण, कुन्तप, शूल, सौनिया और प्रास आदि मुख्य युद्धास्त्र थे।

ऐरियन लिखता है—"पैदल सैनिक धनुष लिए होते हैं जो धारण करनेवाले के कद के बराबर लम्बे होते हैं। इसे (धनुष) वे भूमि पर टिका कर बायें पैर से दबा देते हैं और फिर (धनुष की) डोर को काफी पीछे तक तानकर बाण छोड़ते हैं। बाण लगभग तीन गज लम्बा होता है। भारतीय धनुर्धर के निशाने को कोई भी वस्तु ढाल अथवा कवच रोक नहीं सकता। बाएँ हाथ में वे बैल के कमाये-चर्म का फलक (Buckler) लिए रहते हैं।

पैदल सैनिकों में कुछ धनुष के बदले प्रास अथवा शूल (javelins) लिए होते हैं, किन्तु तलवार सभी के बँधी होती है। तलवार का फल चौड़ा होता है, लेकिन लम्बाई में तीन हाथ (Cubits) से अधिक नहीं होती। उसका प्रयोग तुमुल युद्ध में (जो उन्हें बलात् अथवा अनिच्छा से करना पड़ता है) किया जाता है और तब वे वेग से वार करने के लिए उसे दोनों हाथों से चलाते हैं।

अश्वारोहियों के पास सौनिया (Saunia) नाम के प्रासों के जैसे प्रास अथवा शूल होते हैं, लेकिन उनके फलक पदातियों के फलकों से छोटे होते हैं।"[27]

---

26 अधि. ५, अ० ३.

27. Ancient India; McCrindle pp. 220–21.

मौर्य-कालीन युद्धास्त्रों का विशद विवरण कौटिल्य अर्थशास्त्र से मिलता है। अर्थशास्त्र में अनेक प्रकार के यन्त्रों व अस्त्र-शस्त्रों का उल्लेख है जो सम्भवतया उस समय विशेष रूप से प्रचलित थे। नीचे हम संक्षेप में उनका वर्णन करेंगे।

स्थिर-यन्त्र

सर्वतोभद्रजा (पत्थर चलाने का एक वृहत् यन्त्र); बहुमुख (किले के ऊपर बनी अट्टालिका जो चर्म से ढँकी होती थी और जिसका मुख चारों और होता था; इसमें बैठकर अनेक धनुर्धर सब तरफ बाण चला सकते थे।); संघाति (अट्टालिका तथा दुर्ग के दूसरे हिस्सों पर आग लगाने के लिए एक लम्बा डंडा); विश्वासघाती (दुर्ग के बाहर की खाई पर स्थित शहतीर जो उस पर चलनेवाले आक्रमणकारी शत्रुओं को मारने के लिए यन्त्र की तरह गिरा दी जाती थी); यानक (चक्र पर आरूढ़ दण्ड जो शत्रु पर फेंका जाता था), पर्जन्यक (अग्नि बुझाने का उदक-यन्त्र अथवा पानी का यन्त्र) आदि युद्ध के स्थिर यन्त्र थे क्योंकि उन्हें एक स्थान से दूसरे स्थान को हटाया नहीं जा सकता था।[28]

चलयन्त्र

पञ्चालिक (यह दारु अथवा लकड़ी का फलक होता था जिस पर तीक्ष्ण मुख बने रहते थे। इसे दुर्ग के बाहर पानी की खाई में शत्रु का बढ़ाव रोकने के लिए छोड़ा जाता था), देवदंड (यह कीलोंवाला एक महास्तम्भ (डंडा) था जिसे दुर्ग की दीवार (प्राकार) के ऊपर रखा जाता था), सूकारिका (यह चर्म का आवरण या थैला था, जिसमें रूई या ऊन भरी रहती थी। इनसे अट्टालिकाओं व पथों आदि

28. Kau. Artha., Chp. XVIII; Bk, II.

को आच्छादित किया जाता था ताकि शत्रु द्वारा फेंके जानेवाले पत्थरादि उन्हें नुकसान न पहुंचा सकें, मुसलयष्टि खादिर या लकड़ी के बने शूल, हस्तिवारक (दो या तीन मुखोंवाला एक भारी लौह-दण्ड जिससे हमला करनेवाले हाथियों को पीछे हटाया जाता था), मुद्‌गर, गदा (भारी और लम्बा लौह दंड), स्पृक्तला (नुकीले कंटकोंवाली गदा), कुद्दाल, अस्फोटिमा (स्तम्भयुक्त चर्म का थैला जिससे स्फोट (आवाज) किया जाता था), उद्‌घाटिम् (अट्टालिकाओं को गिराने के लिये), शतघ्नी (कीलों वाला स्थूल, दीर्घ महास्तम्भ जो प्राकार के ऊपर रखा जाता था) और त्रिशूल आदि।[29]

हलमुखानि आयुध

शक्ति (यह चार हाथ का लोहे का आयुध था जिसका आकार करवीर पत्र के और मूठ गोस्तन के जैसा होता था), प्रास (२४ अंगुल अथवा २४ इञ्च का और दो मूठ का (द्विपीठवाला), कुन्त (बीच में लकड़ी और बाकी लोहे का और ७, ६ या ५ हाथ लम्बा), भिण्डिपाल (त्रिकण्टकयुक्त दण्ड), शूल (एक मुख और भारी सिरा-वाला दण्ड), तोमर (इसका सिरा शर की आकृतिवाला था और चार-पाँच हाथ दीर्घ होता था), कणय (लौहदण्ड जिसके दोनों सिरे कण्टकाकार थे और २०, २२, २४ इञ्च तक लम्बा होता था), कर्पण (यह हाथ से फेंका जानेवाला शर था—इसे प्राचीन काल का Hand granade कह सकते हैं), आदि तीक्ष्ण-अग्र के हलमुखानि शस्त्र थे।

धनुष-प्रत्यंचा-शर

कौटिल्य ने धनुषों के चार प्रकार दिये हैं—कार्मुक, कोदण्ड द्रूण और धनुष। ये क्रमशः ताल (ताड़), चाप (बाँस), दारु (लकड़ी) और शार्ङ्ग (हड्डी या सींग) से बनाये जाते थे। धनुष की डोरी

29. Ibid

(ज्या—प्रत्यंचा) शण और वेणु (बाँस) की छाल गवेधु व स्नायु आदि से बनायी जाती थी।

शर (वाण) भी कई प्रकार के थे—जैसे; वेणु, शर, शलाका दण्डासन और नाराच। वाण के मुख लोहे, हड्डी या लकड़ी से अत्यन्त नुकीले अथवा तीक्ष्ण बनाये जाते थे ताकि वे छेदन-भेदन और प्रहार कर सकें।

अन्य आयुध

निस्त्रिंश (तलवार जिसका अग्र भाग वक्र (टेढ़ा) होता था), मण्डलाग्र (तलवार—सीधी लेकिन अग्र-भाग वृत्ताकार होता था), असिमष्टि (तेज और दीर्घ आकृति की तलवार)। इन सबको खड्ग कहा जाता था। परशु, कुठार और पट्टस (परशु के समान लेकिन उभय-अन्त त्रिशूल के जैसा) आदि क्षुर (उस्तरा) जैसे हथियार थे। यन्त्र-पाषाण (पत्थरों को फेंकनेवाला यन्त्र), गोष्पण पाषाण (गोष्पण नाम के दण्ड से फेके जानेवाले पाषाण) और मुष्ठिपाषाण (हाथ से फेंकने योग्य पत्थर) आदि अन्य आयुध थे।[30]

आग्नेयास्त्र

कौटिल्य ने आक्रमण के समय शत्रु के दुर्गों को जलाने के लिए अग्नि के बाणों और ऐसी पक्षियों जिनकी पूँछों में 'अग्नियोग' किया गया हो, का प्रयोग करने का उल्लेख किया है। अग्नियोग करने की विधि पर अर्थशास्त्र में बहुत-सी बातें बतायी गयी हैं।[31] आग्नेयास्त्रों के इस उल्लेख से श्री गुस्टाव ओपर्ट का कथन कि बारूद का प्रथम आविष्कार भारत में हुआ और यहीं से बाद में उसका ज्ञान एशिया-

---

30. Chp. XVIII; Bk. II.
31. Ghp. IV. Bk. XIII.

अफ्रिका और यूरोप में फैला, सही प्रतीत होता है।[32]

रक्षात्मक-अस्त्र अथवा आवरणानि

लोहजालिका (सिर से पैर तक पहिनने का लौह वस्त्र), लोह-कवच (बाहुरहित वक्ष और पीठ के लिए), लौहपट्ट (बाहुरहित लौहकोट या वस्त्र) और सूत्रक (कमर और पुट्ठों के लिए) तथा शिरस्त्राण, कण्ठत्राण, कूर्पास (गर्दन के लिए), कंचुक (घुटनों तक का लौह-वस्त्र), नागोदरिका (दस्ताने—करांगुलित्राणम्), चर्म (चर्मफलक = ढाल), तालमूल (लकड़ी की ढाल), अप्रतिहत (हाथियों को भगाने का आयुध) आदि रक्षास्त्र थे जिन्हें आवरणानि कहा जाता था।

उपकरणानि

हाथी, रथों और घोड़ों को सजाने के अलंकार—आभूषण तथा घोड़ों को हाँकने की कशा और हस्तियों के अंकुश आदि को उपकरणानि कहा जाता था।[33]

आयुधागाराध्यक्ष

सब प्रकार के आयुधों आदि के बनवाने का कार्य आयुधागाराध्यक्ष का था।[34]

दुर्ग के प्राकार (Parapets) के मध्य में जहाँ अनेक तरह के भवन आदि बनते थे वहीं रण के हथियारों—आयुधों आदि को रखने के लिए गहरी और विस्तृत कुल्या (नहरें) बनायी जाती थीं।[35]

---

32. On The weapons, Army Olganisation And Political Maxims of the Hindus Gustava Oppert; Chp. III.

33. Chp XVIII; Bk. ii.

34. Ibid.

35. Ibid; Chp. iii.

अस्त्र-शस्त्रों को नियमित रूप से साफ किया व धूप में सुखाया जाता था। उनके रखने के स्थान भी बदलते-बदलते रहते थे। उनकी नियमित रूप से गणना की जाती थी और उनकी जाति, रूप, लक्षण, प्रमाण, प्राप्ति-स्थान, मूल्य आदि का पूरा ब्यौरा रखा जाता था।

आयुधागाराध्यक्ष को आयुधों सम्बन्धी माँग (इच्छा) और पूर्ति (संचय), उनके प्रयोग, उपयोग, दोष, क्षय और व्यय आदि की पूरी जानकारी रखनी होती थी।[36]

दुर्ग अथवा पुर की रक्षा के लिए कुप्याध्यक्ष (जंगलों का अध्यक्ष) को जीवनोपयोगी सामग्री के साथ-साथ आयुध-यन्त्र आदि सामरिक-सामान भी तैयार करना होता था।[37] संभवतया वह आयुधागाराध्यक्ष के नियन्त्रण व निर्देशन में ही कार्य करता होगा क्योंकि आयुधों का मुख्य अधिकारी आयुधागाराध्यक्ष ही था जिस कारण उसे 'आयुधेश्वर' भी कहा गया है।[38]

मन्त्र-युद्ध और कूट-युद्ध

प्रकाश युद्ध (खुली लड़ाई—open fight) से पहले मन्त्र-युद्ध और कूट-युद्ध से काम लिया जाता था। मन्त्र-युद्ध द्वारा विजेता राजा अन्य राजाओं से मिलकर युद्ध छेड़ने को प्रस्तुत शत्रु-राजा को युद्ध से विरत करने का प्रयत्न करता था। अतः मन्त्र-युद्ध से अभिप्राय शत्रु राजा को बहकाना और 'विजेता' के हित में पड़नेवाली सलाह देना था; लेकिन यदि वह बहकावे में नहीं आता तो कूट-युद्ध द्वारा काम लिया जाता था अर्थात् गुप्तरूप से उसके यहाँ गूढ़पुरुष भेजे जाते थे जो हर तरह से शत्रु के पक्ष को नुकसान पहुँचाकर उसका धनबल क्षीण कर देते थे। उदाहरणार्थ 'विजेता' के गुप्तचर शत्रु की प्रजा को

36. Ibid; Chp XVIII.

37. Ibid; Chp, XVII.

38. Ibid. Ch. XVIII; Bk. II.

शत्रु-देश के शून्यपाल और समाहर्तृ के विरुद्ध उकसाकर उन्हें मरवा डालते थे। शत्रुराजा के पौरवासियों में शत्रु के आक्रमण अथवा खतरे की अफवाह फैलाकर गुप्तचर अन्तःपुर, पुर के द्वार तथा द्रव्य-धान्य के भण्डारों पर उनके रक्षकों को मारकर आग लगा देते थे।[39]

मन्त्र-युद्ध अथवा कूट-युद्ध द्वारा विजेता राजा साम और दाम से शत्रु की प्रजा को अपनी ओर आकृष्ट करता था। शत्रु के दुर्ग, राष्ट्र और स्कन्धावार में गुप्तचरों को घुसाकर, शस्त्र, विष या अग्नि के प्रयोग से उनपर अधिकार कर लेता था। जंगली लोगों (अटवियों) के द्वारा भी शत्रु-राज्य को घात-नुकसान पहुँचाया जाता था आदि।[40]

इसी तरह विजेता-राजा संघों में भेद डालकर और उन्हें दंडित कर अपने वश में करता था। संघ नाम से अर्थशास्त्र में काम्बोज, सुराष्ट्र, क्षत्रियश्रेणी, लिच्छवि, वृजिक, मल्लक, मद्रक, कुकुर, पांचाल आदि का उल्लेख है। ये संघ चन्द्रगुप्त द्वारा विजित कर लिए गये थे, यह अनुमान किया जा सकता है। पश्चिम का सुराष्ट्र मौर्य-प्रान्त था—विहार तथा पंजाब के संघों का मौर्ययुग में लोप हो गया था। श्री डेविस के अनुसार—The free clans and the great kingdom of Kosala have been absorved by it (Magdha)—Buddhist India; p. 260.

संघों में भेद डालने के लिए अनेक तरह के संचारागुप्तचर (सत्री, तीक्ष्ण, कार्तान्तिक आदि) और स्त्रीगुप्तचर (विधवा, वेश्या, नर्तकी, गायिका आदि) प्रयोग में लाये जाते थे।[41]

---

39. Ibid; Chp. II; Bk. XII.

40. Ibid; Chp I.

41. Ibid; Chp I. Bk. XI.

इस प्रकार मंत्र-युद्ध और कूट-युद्ध द्वारा शत्रु को क्षीण करके और आन्तरिक खतरों को दबाने के बाद शक्तिशाली विजेता राजा प्रकाश युद्ध के लिए अभियान करता था।[42]

सेना का अभियान

अभियान से पूर्व राशन और चारा आदि का पूरा प्रबन्ध कर लिया जाता था। मार्ग में पड़नेवाले गाँवों और जंगलों की सूची तैयार कर ली जाती थी और यह अन्दाज लगा लिया जाता था कि उनसे कितना चारा और राशन आदि सामग्री उपलब्ध हो सकेगी? राशन-चारा आवश्यकता से दूना एकत्र किया जाता था ताकि संकटकाल में वह काम आ सके· सेना के लिए आवश्यक सामग्री पहुँचाने का पृथक् प्रबन्ध था लेकिन नियत प्रबन्ध के अभाव में सेना को स्वयं भी सामग्री ले जानी पड़ती थी।

अभियान इस प्रकार आयोजित किया जाता था—सबसे आगे नायक, मध्य में रानियाँ आदि और राजा, पार्श्व में अश्व और बाहुत्सार (राजा के अंगरक्षक) अन्त में हस्ति, वन्य-जीवन से परिचित सेना सब तरफ, इनके बाद अन्य दल और सैन्य-सामग्री ले जानेवाले और सबसे पीछे सेनापति रहता था।[43]

स्कन्धावार अथवा शिविर-स्थापना

अभियान के बाद सेना स्कन्धावार में पड़ाव डालती थी। स्कन्धावार के निर्माण के लिए वास्तु-विशारद उपयुक्त भूमि चुनता था और नायक, वधिक (शिल्पी), और मौहूर्तिक शिविर के योग्य भूमि नाप लेते थे। स्कन्धावार में कम से कम ४ द्वार, ६ मार्ग, ९ संस्थान (विभाजन) होने आवश्यक थे। शिविर की रक्षा के लिए चारों ओर खाई, प्राकार,

---

42. 'बलविशिष्टः कृतोपजापः प्रतिविहितर्तुः स्वभूम्यां प्रकाशयुद्ध-मुपेयात्—अ. ३. अधि. १०.

43. Ibid; Chp. II, Bk. x.

दीवार, द्वार और अट्टालिकाएँ बना दी जाती थीं। राजा का स्थान शिविर या निवेश के मध्य में उत्तर ओर होता था। राज के पश्चिम ओर अन्तः-पुर और उसके अन्त में अन्तर्वेशिक-सैन्य का निवास होता था। राजा के भवन के आगे देवस्थान, उसके दक्षिण तरफ अर्थ-कोष विभाग के अधि-करण और बाईं तरफ राजा की सवारी के हाथी-घोड़ों का स्थान होता था। इसके बाद सौ धनुष (१ धनुष = १२० अं०) की दूरी पर चार विभाजन अथवा संस्थान बने होते थे। इन में से प्रथम में मंत्री-पुरोहित का निवास, उसके दक्षिण तरफ कोष्ठागार तथा महानस (पाकशाला) और बाईं तरफ कुप्य (कच्चामाल) और आयुधागार के लिए स्थान होते थे। दूसरे संस्थान में मौल तथा अश्व व रथ सेना तथा सेनापति का स्थान होता था। तीसरे संस्थान में हस्ति और श्रेणियों की सेना तथा कण्टकशोधनाध्यक्ष अथवा प्रशास्ता का निवेश होता था। चौथे में हस्ति व श्रेणियों की सेना, मजदूरवर्ग (विष्टि:), नायक, अरिमित्र-सेना आदि का निवेश होता था। शिविर के महापथ अथवा राजपथ पर वणिकों व रूपाजीविकाओं (वेश्याओं) का निवेश होता था और शिविर के बाहर व्याध लोग (लुब्धक), अग्नि और तूर्य सहित कुत्तों को रखनेवाले (ये लोग शत्रुसेना का आवागमन ज्ञात करने पर तूर्य से आवाज करके और अग्नि प्रज्वलित करके राजा को उसकी सूचना देते थे)[44], तथा गुप्तचर और रक्षिक पुरुषों (संतरियों) का निवेश होता था।

राजा की सुरक्षा के लिए रक्षिकपुरुषों के १८ दल होते थे जो बारी-बारी से पहरा देते थे।

शिविर में परस्पर झगड़ना, सुरा पीना, जुआ खेलना (द्यूत), समाज (कौतुक मनाना) करना निषिद्ध था।

---

44. कौ. अर्थ. महामहोपाध्याय गणपतिशास्त्री, अ. १. अधि. १०. पृ. १०५.

शिविर में आने-जाने के लिए राजकीय-मुद्रा (आज्ञा-पत्र) दिखानी होती थी।

शिविर का शून्यपाल सेनापति के व्यवहार और सेना के अनुशासन पर निगाह रखता था।[45]

सेना को उत्साहित करना

प्रकाशयुद्ध (खुला युद्ध) छेड़ने से पूर्व राजा सम्पूर्ण सेना को संग्राम का निर्दिष्ट स्थान और समय बताकर उनके समक्ष अभिभाषण करता हुआ यह कहता था—'आप और मैं दोनों वेतन-भोगी हैं। इस राज्य का आपको और हमें साथ-साथ भोग करना है। अतः आपको मेरे बताये शत्रु का हनन करना है।' यह भाषण इस बात को प्रकट करता है कि मौर्यराजा प्रजा को राज्य का सहस्वामी व सह-अधिकारी मानते थे। इस प्रकार के भावों की अभिव्यक्ति निश्चिय ही जन-मन में एकदेशीयता अथवा राष्ट्रीयता को उद्दीपन करनेवाली थी। राजा का मन्त्री भी सैनिकों को उत्साहित करता हुआ उन्हें यह बतलाता था कि यज्ञ और दान से जो पुण्य होता है वही पुण्य शूरों को रण में लड़ने और वीरगति प्राप्त करने से मिलता है।

---

45. Kau. Artha. Chp. I, Bk. X.

एलियन के अनुसार राजा (चन्द्रगुप्त से अभिप्राय) के रक्षकों में २४ हाथी भी तैनात रहते थे। वह लिखता है—'Four and twenty Elephants are constantly kept as guards of the king's person and they receive each other in turn just like other guards. They are trained likewise not to fall asleep when on guard, for they are tutored even to do this by the skill of the Indians—'C. XXII' India As Described In Classical Literature, p. 142.

ज्योतिषी व भविष्यवक्ता आदि भी अपनी सेना का व्यूह अभेद्य और अपने राजा की शक्ति को अजेय घोषित कर योद्धाओं को उत्साहित किया करते थे।

अन्त में सेनापति योद्धाओं को अर्थ व मान से प्रतिष्ठित करके उनके सामने यह घोषणा प्रचारित करता था—कि शत्रु राजा का वध करने पर एक हजार पण, सेनापति व युवराज का वध करने पर पाँच सौ, प्रवीर-मुख्य (वीरों का मुखिया) का वध करने पर दस हजार, हाथी व रथ का वध करने पर पाँच हजार, अश्व को मारने पर एक हजार, पैदलों के मुखिया के वध पर एक सौ, और एक सैनिक के मारने पर बीस पण पुरस्कार में दिये जायेंगे।

सैन्यस्थापना, संचालन और व्यूहरचना

सेना को स्कन्धावार से ५०० धनुष की दूरी पर युद्ध के लिए स्थापित किया जाता था। सेना के मुख्य या प्रधान-भाग को विभक्त कर लाभप्रद स्थान में शत्रु की निगाहों से हटाकर अलग कर दिया जाता था और बाकी सेना संग्राम के लिये सेनापति और नायक द्वारा व्यूहित कर दी जाती थी। मुख्य सेना के एक भाग को सुरक्षित रखने का अभिप्राय निःसन्देह यही था कि उसे ऐसे आवश्यक अवसर पर काम में लाया जाय जब रणक्षेत्र में लड़नेवाली सेना थकने पर हो या जब भागते हुए शत्रुदल का पीछा करने की आवश्यकता पड़े। मध्ययुग के राजपूत राजा सामान्यतः अपने पूरे सैन्यबल को एक साथ ही रण में झोंके देते थे और थकने या शैथिल्य उत्पन्न होने या शत्रु के भागने के अवसरों पर सेना में नवी बल संचारित करने के लिए उनके पास कोई सुरक्षित सेना उपयोग के लिए न रहती थी। दूसरी तरफ उनके तुर्क-शत्रु हमेशा सुरक्षित दल छिपा कर रखा करते थे और आड़े मौकों व संकटकाल में ही उसे काम में लाते थे। फलतः युद्ध करनेवाली सेना के थकने या कमजोर पड़ने पर सुरक्षित

दल तुरन्त उनकी मदद को पहुँच जाता था और समान रूप से थके हुए शत्रुओं पर तेजी से झपटकर उन्हें दबा देता था। अतः तुर्कों की विजय और राजपूतों की हार के लिए 'सुरक्षित दल' का होना और न होना भी एक मुख्य कारण रहा है। भारत को कदाचित् ही पराजय का दुर्भाग्य सहन करना पड़ता यदि वह अपने प्राचीन ज्ञान को भूला न दिये होता और परिवर्तित युग के नूतन परिवर्तनों के प्रति सदा सजग व सतर्क रहा होता।

सेना को स्थापित करते समय दो पैदल सैनिकों के बीच १४ अंगुल, दो अश्वों के बीच ४२, दो रथों के बीच ५६, और दो हाथियों के बीच ११२ से २२४ अंगुल की दूरी रखी जाती थी, ताकि युद्ध के समय सब बिना एक दूसरे से उलझे स्वच्छंदता से लड़-भिड़ सकें।

धनुषधारियों के बीच की दो पंक्तियों के मध्य में पाँच धनुष का अन्तराल रखा जाता था। अश्वसेना की पंक्तियों में तीन धनुष और रथ व हस्तियों की पंक्ति में पाँच धनुष का अन्तराल दिया जाता था।

पक्ष (wings) कक्ष, (Flanks) और उर (मध्य) के बीच जो पाँच धनुष जगह छोड़ी जाती थी उसे 'अनिक सन्धि' कहते थे।

एक अश्व के प्रतिरोध के लिए तीन योद्धा, एक रथ व एक हाथी के लिए पन्द्रह योद्धा या पाँच अश्व काम में लाये जाते थे। एक अश्व, एक रथ और एक हाथी के लिए पन्द्रह परिचारक अथवा पादगोप नियत रहते थे।

पुष्ट मौलसेना तथा विशेष गुणों (कुल, जाति, बल, यौवन, धैर्य, वेग तथा वयस्क होनेपर भी पराक्रमशील, सहिष्णु, कुशल और सुशिक्षित) से युक्त अश्व और हस्ति-सेना सर्वश्रेष्ठ मानी जाती थी। इस सेना के पदातियों, अश्वों और हाथियों का एक तिहाई भाग मध्य में और दो तिहाई पक्ष-कक्ष में रखा जाता था। अथवा मुख्य सेना को अग्रभाग मे रखकर कक्ष-पक्ष को भी समान रूप से सुदृढ़ कर दिया जाता था अथवा

मुख्य सेना का एक तिहाई पृष्ठ भाग में और कमजोर दल मध्य में स्थापित किया जाता था। इस प्रकार का 'व्यूह' शत्रु-दल का सफलता से प्रतिरोध कर सकता था। व्यूह रचना के बाद पक्ष, कक्ष और उर (मध्य) से सेना के एक या दो अंगों को लेकर शत्रु पर आक्रमण कर दिया जाता था और शेष सेना से शत्रु को बन्दी बनाने का प्रयत्न किया जाता था।[46] धन और जन का चाहे कितना ही व्यय-क्षय क्यों न हो शत्रु को बिना नष्ट किये न छोड़ा जाता था।[47] व्यूह अनेक प्रकार से रचे जाते थे जिनका अर्थशास्त्र के दसवें अधिकरण के छठे अध्याय में पूरा विवरण दिया हुआ है। सेनापति द्वारा तूर्य, ध्वज, पताका व शंख आदि के चिह्नों पर प्रत्यक व्यूह का पृथक नाम (संज्ञा) रखा जाता था।[46]

विजेता के कर्त्तव्य

विजय के पश्चात् 'विजिगीषु' (विजेता राजा) अपने मित्र-राजाओं को शत्रु-देश की लूट में पूरी तरह भाग देकर उन्हें परितुष्ट करता था और स्वयं लूट का न्यूनांश ग्रहण करता था ताकि राज-मण्डल के मित्र-राजा उसके पक्ष में बने रहें।[49]

विजेताराजा पराजित अथवा मृत-शत्रु की भूमि, द्रव्य, स्त्री और बच्चों पर अधिकार नहीं करता था। पराजित राजाओं के राज्य को या तो उन्मूलित कर दिया जाता था या उनको पुनः राज्य देकर अपना अनुवर्ति-सामन्त बना दिया जाता था।[50]

---

46. Ibid; Chp v; Bk. x.
47. Ibid; Chp. XIII. Bk. VII.

पृथ्वीराज ने अदूरदर्शिता से प्रथम-युद्ध में काबू में आये शत्रु-मोहम्मद गोरी को छोड़ दिया था जो दूसरी बार उसीका काल बना और फलत हमारे देश में शत्रु ने अपना निवेश स्थापित कर दिया।

48 Ibid; Chp. XXXIII; Bk. II.
49. Ibid; Chp. v; Bk. VII.
50 Ibid; Chp. XVI. Bk. VII.

विजेताराजा विजय के बाद शत्रु देश के अधिकारियों और देश, ग्राम व जाति के मुखियों को उपहार और सत्कार से सम्मानित करता था और प्रजा को करों से मुक्ति देता था। शत्रु-देश की धार्मिक भावनाओं और देवस्थानों की विजेता पूजा करता था। पण्डितों, धार्मिकों और शूर-पुरुषों को वह भूमि व द्रव्य देकर सम्मानित करता था। शत्रु-देश के सब बन्दियों को मुक्त कर दिया जाता था और दीन-अनाथ-व्याधिग्रस्तों पर अनुग्रह किया जाता था।[51] भारत के धर्म-विजयी राजाओं ने इसी तरह कर्त्तव्य पालन किया था, यह समुद्रगुप्त की प्रयाग-प्रशस्ति के उल्लेखों से भी प्रकट है। समुद्रगुप्त ने पराजित शत्रुओं की निजी भूमि और वैभव को लौटाने के लिए एक पृथक् विभाग ही स्थापित किया था जिसके अधिकारी 'पुरुष' थे।

मौर्य-सैनिक व्यवस्था का उपरोक्त विवरण उस युग के सैनिक शासन की विशिष्टता कुशलता एवं दक्षता का प्रत्यक्ष प्रमाण उपस्थित करता है जिसके बहुत से सिद्धान्त और प्रयोग आज के लिए भी नूतन और नवीन प्रतीत होते हैं।

---

51. Ibid; Chp. V; Bk. XIII.

अध्याय—६

सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक अवस्था

सात जातियाँ

मेगास्थनीज तथा अन्य यूनानी लेखकों ने ई० पू० चौथी शताब्दी की सामाजिक, धार्मिक व आर्थिक आदि अवस्था पर बहुत कुछ प्रकाश डाला है। स्ट्राबो लिखता है 'मेगास्थनीज के अनुसार भारत की आबादी सात जातियों में बँटी हुई थी।' भारत की सात जातियों का उल्लेख डायोडोरस और एरियन ने भी किया है।[1]

यवन इतिहासकारों द्वारा उल्लेखित सात जातियाँ इस प्रकार हैं— (१) दार्शनिक (२) कृषक (३) गोप और शिकारी (४) मजदूर (५) क्षत्रिय (६) अध्यक्ष और (७) मन्त्री तथा सभासद।

दार्शनिक

यह जाति सर्व-प्रमुख थी, किन्तु संख्या में सबसे कम थी। यज्ञ आदि धार्मिक कृत्य इसी जाति के लोग करते थे।

राजा प्रत्येक नये वर्ष के प्रारम्भ में, राजभवन के पास एक "महासभा" बुलाता था, जिसमें तमाम दार्शनिकों को आमन्त्रित किया जाता था। इस अवसर पर, यदि किसी दार्शनिक ने कोई हितकारिणी

---

1. Ancient India As Described In Classical Litarature, p. 47. Ancient India; p. 209.

पुस्तक लिखी हो, या कृषि-कर्म और मवेशियों के उत्पादन और वृद्धि का कोई नया तरीका निकाला हो अथवा देश के लिए कोई भी उपयोगी बात मालूम की हो तो उसका सार्वजनिक रूप से एलान किया जाता था।

यदि किसी के विचार तीन बार तक गलत प्रमाणित होते तो उसे राजाज्ञानुसार जीवन भर मौन रहना पड़ता था; किन्तु जिनके विचार सही निकलते थे, उनके सारे कर और राजस्व माफ कर दिए जाते थे।[2]

ब्रह्मविद्या का सम्पूर्ण अधिकार उन्हीं को था, और अन्य जातिवालों को उसमें दखल नहीं देने दिया जाता था।

दार्शनिक नंगे रहा करते थे। जाड़े में वे धूप-सेवन के लिये खुली जगहों में पेड़ों के नीचे रहा करते थे। वे पेड़ नियार्कस के अनुसार इतने बड़े होते थे कि उनकी छाया में १०,००० आदमी तक एक साथ शरण पा सकते थे।

खाने के लिये दार्शनिक-वर्ग मौसमी फलों, पेड़ों की जड़ों व छाल आदि पर निर्भर रहा करते थे।[3]

कृषक

आबादी की सबसे बड़ी संख्या इन्हीं लोगों की थी। ये लोग बहुत सुशील और विनम्र थे। सामरिक कार्यों से उन्हें मुक्त रखा जाता था और वे निर्भयता व शान्ति के साथ खेती किया करते थे। नगरों के कोलाहल में वे शामिल नहीं होते थे।

युद्धों के समय, जब कि देश के कुछ लोग शत्रुओं के साथ प्राणों की बाजी लगाकर लड़ते रहते थे, कृषक लोग समर में रत सैनिकों की सुरक्षा में निर्विघ्न खेतों में काम करते रहते थे।

---

2 Ancient India As Described In Classical Literature; pp 47–48,

3. Ancient India; Indika of Arrian, XI, p. 210.

भूमि पर राजा का अधिकार था, और कृषकों को मजदूरी के तौर पर फसल का चतुर्थांश मिलता था।[4]

गोप और शिकारी

इस वर्ग के लोगों का काम पशुपालन तथा शिकार था। जानवरों को बेचना या उधार देना इन्हीं का काम था। खेती को नष्ट करने वाले जंगली जन्तुओं को मारकर फसल की रक्षा करने के लिए उन्हें राजा से अन्न का कुछ भाग मिला करता था। ये लोग खेतों में रहते थे और उनका जीवन एक स्थान पर नहीं बीतता था।[5]

मजदूर वर्ग

चौथी जाति व्यवसाय करने वालों, पण्यद्रव्य का विक्रय करने वालों, तथा शारीरिक श्रम करने वालों की थी। इनमें से कुछ राजस्व देते और राज्य की कुछ निर्धारित सेवाएं करते थे। किन्तु राजा के लिए शस्त्रास्त्र तथा पोत बनाने वाले शिल्पियों को राज्य की ओर से मजदूरी और खाद्य सामग्री मिला करती थी।[6]

क्षत्रिय

पाँचवीं जाति लड़ने वालों की थी। ये लोग, मेगास्थनीज लिखता है, "जिस समय समर-कार्य पर नहीं होते थे, अपना समय आलस्य और

---

4. Ancient India As Descrbed In classical Literature; p. 48 मेगास्थनीज का यह कथन संभवतया 'राजकीय' भूमि के लिए काम करनेवाले कृषकों से अभिप्राय रखता है। इसका पहले उल्लेख किया जा चुका है। अर्थशास्त्र के अनुसार सीताध्यक्ष राजा की भूमि (स्वभूमौ) के लिए दासों, कर्मकरों (मजदूर) और दण्डप्रतिकर्तृयों (कैदियों) से काम लेता था। अ. २४–अधि. २।

5. Ibid, p. 48; Ancient India; p. 84.

6. Ibid; p. 53, Ibid, p. 85.

मदिरापान में व्यतीत करते थे। इनका सारा खर्च राजा वहन करता था, इसलिये अवसर पड़ने पर वे समर के लिए हमेशा प्रस्तुत रहते थे, क्योंकि अपने शरीर के सिवा उनके पास अपना कुछ नहीं होता था।"[7]

क्षत्रिय योद्धाओं के बारे में, ऐरियन ने लिखा है कि कृषकों के बाद उन्हीं की संख्या अधिक थी। वे स्वच्छन्द तथा आनन्द का जीवन बिताते थे—"दूसरे ही उनके हथियार बनाते थे, दूसरे ही उन्हें घोड़े दिया करते थे। शिविरों में उनके घोड़ों की देखभाल, शस्त्रों की सफाई और रथों को सुसज्जित करने आदि के लिए भी दूसरे ही लोग होते थे। सारथी का काम करने के लियें भी दूसरे ही हुआ करते थे। जब तक उन्हें युद्ध करना पडता था वे युद्ध करते थे, और युद्ध का अन्त होने पर पुन: आमोद-प्रमोद में रत हो जाते थे। राज्य से उनको इतनी ज्यादा तनखाह मिलती थी कि अपने अलावा वे दूसरों का भी सुगमता से पालन कर सकते थे।"[8]

छठी जाति-अध्यक्ष—(Inspectors या overseers) का पहले उल्लेख हो चुका है।

सातवीं जाति मंत्री और सभासद—Ministers and Councillors) इनका भी उल्लेख हो चुका है।

मेगास्थनीज का जाति-विभाजन भारतीय वर्ण विभाग से मेल नहीं खाता। इससे मालूम होता है कि उसे भारतीय जाति-व्यवस्था का सही पता नहीं था, लेकिन उसके जातियों के उल्लेख से इतना अवश्य मालूम हो जाता है कि उसके समय में भारत में कौन-कौन मुख्य पेशे थे और किन-किन विभिन्न क्षेत्रों में कार्य होता था।[9]

---

7. Ibid; p. 85.

8 Ancient India, Mc Crindle, p. 211.

9. "Megasthenes may have got his number seven from some Indian informant, or he may have simply

जातीय नियम

मेगास्थनीज लिखता है कि प्रत्येक व्यक्ति को "अपनी जाति के अलावा दूसरी जाति में विवाह करने या अपने पेशे के अलावा दूसरा काम करने की आज्ञा न थी। केवल दार्शनिकवर्ग के लिए ये प्रतिबन्ध लागू न थे।"[10]

एरियन ने भी लिखा है कि "देश का आचार व नियम अन्तर्जातीय विवाह की आज्ञा नहीं देता—उदाहरण के लिए कृषक, व्यवसायी वर्ग से शादी नहीं कर सकता, न व्यवसायी वर्ग का व्यक्ति कृषक पत्नी रख सकता है।

जातीय नियम के अनुसार कोई दो प्रकार के कर्म (पेशा) नहीं कर सकता तथा अपनी जाति छोड़कर दूसरी जाति में नहीं मिल सकता। उदाहरणस्वरूप कोई कृषक, गोप नहीं हो सकता और गोप शिल्पी (artisan) नहीं बन सकता; केवल दार्शनिक किसी भी जाति से हो सकता है।[11]

---

ascertained the fact that the people was divided into functional castes which did not intermarry, and then have made his own list of various occupations......But his seven classes may truly reflect the various activities which a Greek resident at Patliputra could see going on round about him in the third century B c,—Camb. Hist. of India, vol I, p. 409.

10. Ancient India As Described In Classical Literature; p. 53.

11. Ancient India; pp. 212-213.

यवनलेखकों के ये कथन भारतीय धर्मशास्त्र के अनुरूप हैं। धर्मशास्त्रों के अनुसार एक जाति के व्यक्ति का दूसरी में मिलना या अपना 'कर्म' छोड़कर दूसरे का ग्रहण करना, अधर्म बतलाया गया है; और इसलिए राजा को जातीय-मिश्रण रोकने और वर्ण-व्यवस्था को बनाए रखने का निर्देश दिया गया है।[12]

विवाह-प्रथा

मेगास्थनीज अथवा स्ट्राबो ने लिखा है—'भारतीय कई स्त्रियों से विवाह करते हैं जिन्हें वे उनके माता-पिताओं से बैलों की जोड़ी के बदले में खरीदते हैं। कुछ विवाह वे अनुवर्तिनी सहधर्मिणियाँ प्राप्त करने के निमित्त और कुछ आमोद-प्रमोद तथा वर को सन्तान से पूर्ण करने के लिए करते हैं।"[13] बहु-विवाह प्रथा के कारणों पर प्रकाश डालते हुए मेगास्थनीज ने लिखा है कि भारतीयों में चूँकि दास-प्रथा नहीं थी, इसलिये वे अपनी सेवा-परिचर्या के लिए अधिक बच्चे चाहते थे, और इसीलिए कई पत्नियाँ रखते थे।[14]

कौटिल्य अर्थशास्त्र से भी मालूम होता है कि दो गाय के बदले में लड़कियाँ ब्याही जाती थीं। ऐसे विवाह 'आर्ष' विवाह कहे जाते थे।

---

12. Sacred Books of the East; ed. by Maxmullar; vol. I; General Index; M. winternitz–p 141.

13. Ancient India As Described In Classical Literature, p. 57. Ancient India, p. 71 ऐरिस्टोबुलस ने तक्षशिला में गरीब आदमियों द्वारा बाजारों में लड़कियों के बेचे जाने का जिक्र किया है—"Those who are unable to bestow their daughters in marriage, expose them for sale in the market-place in the flower of their age..." India As Described In Classical Literature p. 69.

14. Ancient India; pp. 99-100.

अर्थशास्त्र में विवाह के अन्य प्रकार भी दिए हैं, जैसे—(१) ब्राह्मण विवाह, जिसमें माता-पिता लड़की को दानरूप में देते हैं; (२) गान्धर्व—प्रेमी-प्रेमिका स्वतः विवाह करते हैं; (३) आसुर—शुल्क अथवा धन्य-द्रव्य लेकर लड़की देना; (४) राक्षस—लड़की को भगा ले जाना; (५) पैशाच—सोई अवस्था में लड़की का हरण कर ले जाना। आर्ष समेत पहले तीन विवाह परम्परागत होने से धर्मयुक्त कहे गये हैं जो पिता की स्वीकृति होने पर सम्पन्न हो सकते थे। बाकी विवाहों में माता और पिता दोनों की स्वीकृति आवश्यक थी (अ. २—अधि. ३)।

स्ट्राबो और कौटिल्य द्वारा उल्लेखित गाय-बैल अथवा मूल्य या शुल्क देकर लड़की का विवाह करने की प्रथा शायद नीचे व निर्धन वर्ग के लोगों तक ही सीमित थी।

बहु-विवाह

मेगास्थनीज का बहु-विवाह का कथन सही है क्योंकि भारतीय-धर्मशास्त्र के निर्देशानुसार ब्राह्मण ३, क्षत्रिय २, और वैश्य व शूद्र को एक विवाह करने का शास्त्र-सम्मत अधिकार प्राप्त था। लेकिन इस अधिकार का उपयोग स्वच्छन्दता से नहीं किया जा सकता था। कौटिल्य के अनुसार सन्तान के लिए पुरुष एक से अधिक विवाह तो कर सकता था, लेकिन ऐसा तभी हो सकता था जब या तो उसकी पहली स्त्री के बच्चे न हों, वन्ध्या हो या उससे केवल कन्यायें ही होती हों (कन्या प्रसविनीम्)। इस नियम का उल्लंघन कर दूसरा विवाह करने वाले को अपनी पहली पत्नी को शुल्क, स्त्री-धन (वृत्ति = दो हजार कर्षापण जो स्त्रीके नामपर आजीविकाके लिए रखा जाता था और आबद्ध = भूषणादि) तथा मुआवजे के रूप में कुछ द्रव्य देना पड़ता था और राज्य को भी अर्थ-दण्ड के रूप में २४ पण देने पड़ते थे। (अ. २—अधि. ३)। कुछ परिस्थितियों में स्त्री को भी पति को त्याग देने का अधिकार प्राप्त था। अर्थशास्त्र के अनुसार यदि पति नीच व बुरे चरित्र का हो, बहुत समय

से परदेश में रह रहा हो, राजद्रोही हो, स्त्री के प्राण हरने वाला हो और क्लीव (नामर्द) हो तो स्त्री उसे त्याग सकती थी (अ. ३-अधि. ३)।

स्वयंवर

एरियन लिखता है कि "वे (भारतीय) बिना दहेज लिएदिए ही विवाह करते हैं। शादी के योग्य होने पर लड़कियों को उनके पिता जनता के समक्ष लाते हैं, और वे (लड़कियाँ) कुश्ती, दौड़ अथवा अन्य प्रकार के पौरुषों में विजयी होनेवाले का वरण करती हैं।"[15] डाओडोरस ने भी लिखा है कि भारतीय युवक और युवतियाँ प्राचीन रीत्यानुसार अपनी पसन्द से स्वयं विवाह-सूत्र में बँधते थे लेकिन जब नाबालिग विवाह-सम्बन्ध स्वयं करते थे तो उनके निर्णय दोषपूर्ण होने से वैवाहिक जीवन दुःखपूर्ण हो जाता था।[16] ओनिसिक्रट्स ने कैथियनों (कठों) का उल्लेख करते हुए कहा है कि उनमें स्त्री-पुरुष स्वयं अपना साथी चुना करते थे। ये उद्धरण स्वयंवर-प्रथा के प्रचलन के साक्षी हैं।[17]

बाल-विवाह

एरियन और डाओडोरस आदि यूनानी लेखकों के अनुसार लड़की की शादी सयानी होने पर ही की जाती थी। कौटिल्य अर्थशास्त्र के अनुसार विवाह के समय लड़की की आयु १२ वर्ष और लड़के की १६ वर्ष की होनी आवश्यक थी।[18] मेगास्थनीज ने "पांड्य-प्रदेश" की लड़कियों का ७ वर्ष की उम्र में ही विवाह होने का उल्लेख किया है। उसके इस कथन के आधार पर कतिपय विद्वान् उस काल में भी मध्य-

---

15. Ancient India, M. C. Crindle, 222.

16. Ancient India As Described In Classical Literature p. 202

17. Ibid, p. 38.

18. Kau. Arth. Chp. iii. Bk. ii.

युग की भाँति भारत में बाल-विवाह की प्रथा का होना स्वीकार करते हैं।

किन्तु मेगास्थनीज का उक्त उल्लेख मनगढ़न्त है। दक्षिण भारत वह स्वयं कभी नहीं गया था। वहाँ के सम्बन्ध का उसका ज्ञान उस गाथा पर निर्भर था, जिसके अनुसार पांड्य-स्त्रियों को हिराक्लिस से ७वें वर्ष शिशु-जनन का वरदान मिला था।[19] अतः केवल गाथा के आधार पर कोई निष्कर्ष निकालना उपयुक्त नहीं है।

पर्दे की प्रथा

मौर्य-युग में स्त्रियों में पर्दे का प्रचलन नहीं था। एरियन आदि यूनानी लेखकों के अनुसार सयानी लड़कियाँ अपने पिताओं द्वारा जन-समाज के समक्ष वरण के लिए लायी जाती थीं। मेगास्थनीज के अनुसार कतिपय स्त्रियाँ भी दार्शनिकों के पास रहकर दर्शन का अध्ययन किया करती थीं।[20] अर्थशास्त्र में स्त्री परिचारिकाओं, भिक्षुकी और स्त्री-गुप्तचरों का वर्णन है। ये उल्लेख मौर्ययुग में पर्दा-प्रथा न होने के प्रमाण हैं।

कौटिल्य ने सूत्राध्यक्ष (वस्त्र का अध्यक्ष) को निर्देश दिया है कि वे स्त्रियाँ जो घर से बाहर नहीं निकलतीं (अनिष्कासिन्यः) यदि वे वृत्ति चाहें तो उनके लिए सूत्र बनाने का कार्य घर पर ही दे देना चाहिए (अ. २३. अधि. २)। इसमें आये 'अनिष्कासिनी' से कतिपय विद्वान् पर्दे का होना अनुमान करते हैं। लेकिन इस शब्द से पर्दा-प्रथा का भाव निकालना संगत नहीं प्रतीत होता। कौटिल्य के कथन का तो इतना ही आशय मालूम होता है कि कुलीन घरकी स्त्रियाँ सामान्यतया घर से बाहर जाकर मजदूरी का काम नहीं करती थीं; अतः विपत्ति में फँसने पर 'वृत्ति'

19. Ancient India; p. 202.

20 Ancient India; p. 103.

की इच्छुक उन स्त्रियों को प्रतिष्ठापूर्वक घर पर ही काम दे दिया जाना चाहिये। कौटिल्य तथा धर्मशास्त्र के अन्यान्य प्रणेताओं ने स्त्रियों को पर्दे में रखने का कहीं भी निर्देश नहीं किया है। यही कारण है कि स्त्रियाँ वैदिकयुग में सामाजिक और धार्मिक उत्सवों में स्वच्छन्दतापूर्वक भाग लेती थीं। महाभारत-काल और बौद्ध-युग में भी स्त्रियाँ स्वच्छन्दता से काम करती थीं और अवगुण्ठन में छिप कर घरों में बन्द न रहा करती थीं। प्राचीन भारतीय चित्रों, मूर्ति के शिल्पों व संस्कृत साहित्य में स्त्रियों में पर्दे के रिवाज का प्रचलन कहीं नहीं दर्शाया गया है।[21]

जौहर और सती-प्रथा

यूनानी लेखक कर्टियस ने लिखा है कि अग्रश्रेणियों (Agalassians = अग्रश्रेणी) ने अपने दुर्ग की रक्षा के लिए वीरता से सिकन्दर का प्रतिरोध किया था लेकिन जब विजय की आशा जाती रही तो उन्होंने अपने घरों में आग लगा दी और सभी पुरुष व स्त्री-बच्चे दहकती आग में कूद कर जल मरे। अग्रश्रेणियों का यह बलिदान मध्ययुगीन राजपूतों की जौहर-प्रथा का स्मरण कराता है जो शायद भारतीय इतिहास में जौहर का प्रथम उदाहरण है।[22]

यूनानी लेखकों ने भारत की कुछ एक जातियों में 'सती-प्रथा' के प्रचलन का भी उल्लेख किया है। ओनिसिक्रिटस (onesikritos) के अनुसार कठों में मृत-पति के साथ स्त्रियाँ भी चिता में जल जाया करती थीं।[23]

---

21. देखिए : The Position of women in Hindu Civilization. Dr. A. S. Altekar. pp. 197-98, 202ff.

22. Invasion Of India By Alexnder. p. 232.

23. Ancient India As Described In Classical Literature, p. 38.

अरिस्टोबुलस (Aristboulos) ने लिखा है कि तक्षशिला वाले कई पत्नियाँ रखते थे और पति के मरने पर स्त्रियाँ भी सहर्ष उसके साथ जल मरती थीं; लेकिन जो स्त्रियाँ शव के साथ जलने से इन्कार करती थीं वे अपमानित होती थीं।[24]

डायोडोरस के अनुसार गर्भवती अथवा बच्चोंवाली स्त्री के लिए सती होने का नियम नहीं था; लेकिन जो सती नहीं होना चाहती थीं उन्हें जीवन भर विधवा का जीवन व्यतीत करना पड़ता था और पापकर्मी समझे जाने से वे धार्मिक-कार्यों व अन्य उत्सवों आदि में भाग नहीं ले सकती थीं। उसने भारतीय सेनापति केटिअस (Keteus) का उल्लेख करते हुए कहा है कि जब यूमेनिज (Eumenes) की तरफ से लड़ता हुआ वह मार डाला गया तो उसकी दो पत्नियों में इस बात के लिए झगड़ा हुआ कि शव के साथ चिता में कौन बैठेगा, क्योंकि नियमानुसार मृत व्यक्ति की स्त्रियों में से एक ही जो जेष्ठ हो, सती हो सकती थी। केटिअस की जेठी पत्नी तब गर्भवती थी अतः छोटी को ही उसके शव के साथ जलने का गौरव मिला।[25]

यूनानी लेखकों के विवरण से प्रतीत होता है कि सती-प्रथा का प्रचलन कतिपय जातियों तक ही सीमित था और मध्ययुग की तरह ई० पू० चौथी शताब्दी में उसका सर्वदेशीय चलन नहीं हुआ था। श्री डा० अल्तेकर ने सही प्रकट किया है कि सती-प्रथा का वैदिकयुग तथा उसके बाद के युगों में भी प्रचलन नहीं मिलता। महाभारत में 'माद्री' के सती होने का उल्लेख है, लेकिन उसका कारण धार्मिक न होकर व्यक्तिगत था।[26]

---

24. Ibid, p. 69.

25. Ibid; pp. 202–203.

26. The Position of women in Ancient India, pp. 140–141

बौद्ध-युग में भी सती-प्रथा का प्रचलन नहीं मिलता। यदि यह प्रथा उस समय प्रचलित होती तो बुद्ध और अहिंसा के परम पुजारी महावीर इस प्रथा के विरुद्ध अवश्य आवाज उठाये होते और उसकी निन्दा किये बिना न रहते। धर्म के मूल स्रोत वेद और धर्मशास्त्रों में सती-प्रथा का निषेध है।

मेगास्थनीज के समकालीन कौटिल्य ने अर्थशास्त्र में उन विधवा स्त्रियों को, जो अपने मृत-पति के नाम पर रहकर पवित्र-जीवन व्यतीत करती थीं 'धर्मकामा' (पति के परलोक हित की कामना करनेवाली) कहा है और उसे वृत्ति, आभरण और शुल्क पाने की अधिकारिणी बतलाया है जो धर्मकामा विधवा बिना सन्तान की होती थी उसकी जायदाद अथवा 'स्त्रीधन' के अधिकारी उसके मरने पर उसके रिश्तेदार (दायाद) होते थे। जो विधवाएँ 'कुटुम्बकामा' होती थीं अर्थात् दूसरा विवाह करना चाहती थीं उनको ब्याह के अवसर पर वह सब धन-द्रव्य दे दिया जाता था जो उसे उसके पति व श्वसुर से प्राप्त हुआ हो। लेकिन श्वसुर की आज्ञा बिना विवाह करने पर विधवा को कुछ नहीं दिया जाता था।[27] अतः स्पष्ट है कि 'धर्मकामा' विधवाएँ समाज में प्रतिष्ठा के साथ जीवन-यापन करती थीं और 'कुटुम्बकामा' श्वसुर की सम्मति पाकर साधिकार विवाह कर सकती थीं; क्योंकि कौटिल्य ने 'सती' होना आत्महत्या करने के समान घृणित और दण्डनीय बतलाया है।[28] इन वृत्तों से श्रीदत्त का कथन कि सती-प्रथा वैदेशिक मूल की थी और उसका प्रचार भारत मे शकों द्वारा हुआ था इतिहास-संगत प्रतीत होता है।[29]

---

27. Kau. Artha. Chp. ii, Bk. iii.

28 Raja Dharma, K V. Rangasvami Aiyangar, p 187.

29. Civilization In Ancient India, By R. C. Dutt, vol; III. p 332.

स्त्रियों की दशा

मौर्य-युग में स्त्रियों का समाज में प्रतिष्ठित स्थान था। वे ऊँची शिक्षा प्राप्त कर सकती थीं और आवश्यकता पड़ने पर पुरुषों की तरह शासन और युद्ध में भी समान रूप से भाग ले सकती थीं। मेगास्थनीज ने पुरुष दार्शनिकों के साथ दर्शन का अध्ययन करनेवाली ब्रह्मचारिणी स्त्रियों का भी उल्लेख किया है जो इस बात को प्रकट करता है कि स्त्रियों को उच्च विद्याओं का अध्ययन-मनन करने और तापसी जीवन द्वारा सत्य अथवा ब्रह्म का साक्षात्कार करने अथवा मोक्ष प्राप्त करने का सहज अधिकार था। कौटिल्य अर्थशास्त्र में भी भिक्षुकी और परिव्राजकाओं का उल्लेख है जो (गुप्तचर विभाग की भिक्षुकियों को छोड़कर) संसार से विरक्त होकर आत्मलाभ के लिए सन्यास ग्रहण कर लेती थीं। बौद्ध अनुश्रुतियों के अनुसार सम्राट अशोक की बेटी संघमित्रा 'धर्मप्रचारार्थ' भिक्षुकी बनकर लंका गयी थीं।

यूनानी लेखकों के विवरण से यह भी प्रकट है कि राजघराने की स्त्रियाँ आवश्यकता पड़ने पर शासन-सूत्र भी अपने हाथों में ले लेती थीं और संकट के अवसरों पर स्त्रियाँ भी अपने पुरुषों के साथ सच्ची वीरांगनाओं की तरह रण में कूद जाया करती थीं। कर्टियस के अनुसार मस्सागा के राजा अस्सकेनस (Asaacanus) के मरने पर उसकी माता क्लिओफिस (Cleophis कुछ लेखकों ने उसे पत्नी कहा है) ने राज्य का शासन-भार संभाल कर सिकन्दर से प्रतिरोधात्मक युद्ध किया था।[30] यूनानी आक्रमण के अवसर पर मस्सागा में सात हजार भारतीय शस्त्रोपजीवी (भृत-सैनिक-धन के लिए लड़ने वाले) सैनिक भी थे। मस्सागा के आत्म-समर्पण करने के बाद भृत-सैनिकों को सिकन्दर ने सुरक्षा के साथ वहाँ से चले जाने की स्वीकृति दे दी थी; लेकिन उनके

---

30 Ancient India And Its Invasion By Alexander, pp. 194–195.

दुर्ग से निकलते ही यूनानी दल उन पर टूट पड़ा था। इस संघर्ष में जब बहुत से भारतीय भृत-सैनिक मर गये व आहत हो गये तो अन्त में उनकी स्त्रियाँ भी शस्त्र लेकर यूनानी दल पर टूट पड़ीं और अपने सुनाम और गौरव के अनुरूप रण में जूझकर स्वर्ग सिधार गयीं।[31]

यूनानी लेखकों और कौटिल्य से हमें यह भी मालूम है कि प्रासाद के भीतर राजा की अंग-रक्षक-सेना धनुर्धारी स्त्रियों की थी और स्त्रियाँ गुप्तचर-विभाग में भी काम करती थीं।

विद्या के केन्द्र—शिक्षा-प्रचार

स्ट्राबो ने लिखा है कि मेगास्थनीज के अनुसार नगर के पास की उपत्यकाओं व वन-कुंजों में ब्राह्मण दार्शनिक निवास किया करते थे और अपने आश्रमों में जिज्ञासु विद्यार्थियों को विद्याओं का ज्ञान दिया करते थे। आश्रमों में ब्राह्मणों के प्रवचन और दर्शन तर्क-वितर्क भी हुआ करते थे। इन आश्रमों में विद्यार्थी-ब्रह्मचारी ३७ वर्ष की उम्र तक विद्याध्ययन किया करते थे।[32] धर्मशास्त्रों के अनुसार सामान्यतः विद्यार्थी ब्रह्मचर्य-आश्रम में रह कर २५ वर्ष तक ही अध्ययन करता था—अतः जैसा कि एल्फिन्सटन का कहना है—"The Greek writers erroneously prolong the period during which students listen to their instructors in silence and respect...(History of India; p. 236)। कौटिल्य के अनुसार क्षत्रिय कुमारों के लिए विद्याध्ययन का काल १६ वर्ष की उम्र तक ही था।[33]

31, Ibid; p. 270.

32. India As Described In Classical Literature, p. 66.

33. Kau Artha. Chp. V. Bk I.

आश्रम के नियम और आचार बहुत कड़े थे। यदि कोई विद्यार्थी गुरु के भाषण के समय बीच में बोल उठता या खाँस व थूक देता तो मेगास्थनीज कहता है उसे असंयमी समझकर उसी समय आश्रम से बाहर कर दिया जाता था।[34]

ब्राह्मणों के बच्चों की शिक्षा, मेगास्थनीज के अनुसार गर्भावस्था से ही प्रारम्भ हो जाती थी क्योंकि गर्भवती होते ही ब्राह्मण-स्त्री को विद्वानों और आचार्यों की देख-रेख में रख दिया जाता था जो उसे अच्छी बातें व उपदेश दिया करते थे। पैदा होने के बाद बच्चे को एक के बाद दूसरे आचार्यों की देख-रेख में रखा जाता था और सयाने होने पर वह कुशल आचार्यों से शिक्षा पाता था।

श्री लासन (Lassen) का कहना है कि भारतीय परम्परा के अनुसार विद्यार्थी का एक ही आचार्य होता था, क्योंकि धर्मशास्त्रों की ऐसी ही आज्ञा थी। यह बात सही है; किन्तु एक ही आचार्य से अभिप्राय 'मन्त्र-दीक्षा' देनेवाले आचार्य से है—वैसे विभिन्न शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त करने के लिए अन्य कई आचार्यों से ज्ञान प्राप्त करने पर कोई रोक न थी। अर्थशास्त्र में राजकुमार की शिक्षा का क्रम बतलाते हुए कौटिल्य ने कहा है कि चूडा-कर्म होने पर बच्चे को लिपि और संख्या का ज्ञान कराना चाहिए, और यज्ञोपवीत के बाद त्रयी (तीन वेद), आन्वीक्षिकी, वार्ता, दण्डनीति आदि शास्त्रों का विशिष्ट-आचार्यों व व्यवहार-कुशल राजनीतिज्ञों द्वारा शिक्षा दी जानी चाहिए।[35] अर्थशास्त्र का यह विवरण मेगास्थनीज आदि द्वारा अनेक आचार्यों से अनेक तरह के विषयों की शिक्षा दिये जाने के कथन की सत्यता प्रमाणित करता है।

---

34. Ancient India As Described In Classical Literature; pp 65-66.

35. Kau. Artha Chp. V. Bk. I.

मेगास्थनीज ने श्रमणों के आश्रमों में स्त्री-छात्राओं के विद्याध्ययन का उल्लेख किया है जो पुरुष-छात्रों की तरह ही ब्रह्मचर्य का जीवन व्यतीत करती थीं—"Women study phi!osohpy with some of them (Sarmanes), but they tco abstain from sexual inter-course.[36] इस उद्धरण से प्रकट है कि छात्र और छात्राएँ समानरूप से शिक्षा-केन्द्रों में उच्चशिक्षा प्राप्त कर सकती थीं।

शिक्षा के सम्बन्ध में यूनानी लेखकों ने जो विवरण दिया है तथा अर्थशास्त्र में जो अनेक तरह के शास्त्रों व विद्याओं (जैसे इतिहास के अन्तर्गत इतिवृत्त, आख्यायिका, पुराण, उदाहरण धर्मशास्त्र व अर्थशास्त्र विषयक विद्याएँ) का वर्णन मिलता है उससे सिद्ध है कि मौर्यों का युग विद्या की उन्नति और शिक्षा के प्रसार में एक विशिष्ट स्थान रखता था। मौर्यों के समय विद्या का प्रचार ऊँचे वर्गों तक ही सीमित न था जन-साधारण में भी अधिकांश लोग लिखना-पढ़ना जानते थे जैसा अशोक के अभिलेखों की बोलचाल की भाषा एवं उनके सर्वदेशीय विस्तार से अनुमान किया जा सकता है।[37]

---

36. Ancient India As Described In Classical Literature; p. 67·

37. श्री वि. स्मिथ अशोक के अभिलेख का उल्लेख करते हुए लिखता है—

"The care taken to publish the Imperial edicts.. on rocks and pillars situated in great cities, on main lines of communication or at sacred spots frequented by pilgrims, implies that a knowledge of reading and writing was widely diffiused and that many people must have been able to read the documents. The same inference may be drawn from the fact that the inscri-

मौर्यों के युग में ब्राह्मणों और श्रमणों के आश्रमों के अलावा जिनका यूनानी लेखकों ने उल्लेख किया है, बौद्ध-विहार, देव-मन्दिर और ब्रह्मदेय ग्राम[38] (ये कर और दण्ड-मुक्त गाँव धर्म-कर्म तथा अध्ययन-अध्यापन करनेवाले ब्राह्मणों जैसे—ऋत्विक्, आचार्य, पुरोहित, श्रोत्रिय आदि को दान में दिये जाते थे; शायद 'परिहारक' गाँव भी इसी प्रयोजन के लिए थे और शायद इन्हीं गाँवों को गुप्तों और हर्ष के युग में 'अग्रहार'–ग्राम कहा गया है) शिक्षा और विद्या के प्रमुख केन्द्र थे।

चिकित्सा-शास्त्र

मेगास्थनीज ने भारतीय चिकित्सकों की प्रशंसा करते हुए कहा है कि 'वे अपने शास्त्र के बल पर अनेक सन्तान उत्पन्न करा सकते हैं तथा दवाइयों द्वारा इच्छानुसार नर अथवा मादा बच्चे भी पैदा करा सकते हैं।' उनके बनाये मलहम और लेप (Plaster) सुप्रसिद्ध हैं। दवाइयों के बजाय वे भोजन को ठीक से संचालित करके रोगों को दूर किया करते हैं।[39]

अर्थशास्त्र से भी प्रकट है कि मौर्य-युग में चिकित्सा शास्त्र बहुत उन्नत था। अर्थशास्त्र में पशुओं तथा मनुष्यों की चिकित्सा करनेवाले वैद्यों का उल्लेख है। पशुओं के वैद्य को 'अग्निकस्थ' और मनुष्यों का उपचार करनेवाले को 'चिकित्सक' कहा गया है। राज्य की तरफ से

---

tions are composed, not in any learned scholistic tongue, but in vernacular diatects intelligible to the common people......Asoka; pp. 138–139.

38 १ अ. अधि. २

39. Ancient India As Described In Classical Literature; p. 67.

ब्राह्मणों की तरह चिकित्सकों को भी गाँवों में कर-मुक्त भूमि-दान दे दी थी, जो इस बात का प्रमाण है कि मौर्य सरकार चिकित्सकों को भी बढ़ावा देने में पीछे न थी, ताकि वे अपने शास्त्र में कुशलता-लाभ करने में सतत प्रयत्नशील रहें।[40]

साहित्य

मौर्य-युग में लिखी गयी पुस्तकों में कौटिल्य अर्थशास्त्र और कथा-वत्थु ही केवल हम तक पहुँच सकी हैं। उस समय में पढ़ाये जानेवाले विभिन्न धर्मशास्त्रों, शिल्पों और इतिहास आदि पर भी पुस्तकें लिखी गयी होंगी यह सरल ही अनुमान किया जा सकता है लेकिन दुर्भाग्य से आज उनमें से कोई हमें प्राप्त नहीं हो सकी है।

शास्त्रकारों और साहित्यों की मुख्य भाषा 'संस्कृत' ही थी;[41] यद्यपि अशोक के समय में पाली और विभिन्न प्रदेशों की भाषा को भी राजकीय प्रोत्साहन प्राप्त था जैसा कि अशोक के शिलालेखों से प्रत्यक्ष है। ये तथ्य पुनः मेगास्थनीज के 'लिखित कानून' न होने और 'लेखन-प्रणाली' का प्रचलन न होने के उल्लेख का खण्डन करते हैं।

भारतीयों का मूलस्थान

मेगास्थनीज के अनुसार भारत की सभी जातियाँ स्वदेशीय मूल की थीं और उनमें कोई भी विदेशीय न था—'It is said that India, is peopled by races both numerous and diverse, of whieh not even one was originally of foreign descent,

---

40 Kau Artha, Chp. I. Bk. II.

41. कैम्ब्रिज हिस्ट्री के अनुसार—'Sanskrit remained the language of the Brahaman Schools, of public and private ritual, and also of secular literature except perhaps in the case of folk poesy' vol. I; p. 483.

but all were evidently indigenous'—इस उल्लेख से प्रकट है कि ई० पू० चौथी शताब्दी के यूरोपीय विद्वान् भारतीयों का मूल स्थान भारत को ही मानते थे। अतः यह वृत्त वैदिक आर्यों के भारतीय-मूल के पक्ष में ही साक्ष्य उपस्थित करता है।[42]

शिव और कृष्ण

मेगास्थनीज तथा उसके आधार पर कुछ अन्य यूनानी लेखकों ने यूनानी देवताओं डिओनिसस (Dionysos) और हिराकिल्स (Herakles) के नामों का उल्लेख करते हुए कहा है कि इनको भारतीय अपना देवता मानकर पूजते हैं और उन्हें भारत में ही अवतरित हुआ समझते हैं तथा उनके सम्बन्ध में भारत के पण्डित कतिपय गाथाएँ भी कहा करते हैं। अनुमानतः पण्डितों ने यूनानियों को जो पौराणिक-गाथाएँ अपने देवताओं आदि के सम्बन्ध में सुनायी थीं उन्हें ही मालूम होता है उन्होंने (यवन-लेखकों) कुछ परिवर्तनों के साथ अपने देवताओं (Dionysos और Heracles) से जोड़ दी थीं।[43] इसीलिए स्ट्राबो कहता है—'The accounts about Herakles and Dionysos, Megascthenes and some few authors

42 Ancient India; p. 35.

43. मेगास्थनीज ने भारतीय पण्डितों का आधार लेकर डिओनिसस के सम्बन्ध में इस प्रकार लिखा है— They (भारतीय पण्डित) related that in the most primitive times,...Dionysos made his appearance coming from the regions lying the west.. He overran the whole of India...The heat having become excessive, he carried his troops away from the plains up to the hills—called Meros. Having after this turned his attention to the artificial propo-

with him consider entitled to credit, (but the majority, among whom is Eratosthencs, consider them incredible and fabulous, like the stories current, among the Greeks—Ancient India; pp. 109–110.)

---

gation of useful plants, he communicated the secret to the Indians, and taught them the way to make wine, as well as other arts conducive to human well being He was; besides, the founder of large cities;...he also showed the people how to worship the deity, and introduced laws and courts of justice. It is related also of him that he led about with his army a great host of women, and employed, in marshalling his troops for battle, drums and Cymbals' Ancient India. pp 36-38.

It is also said that Dionysos first yoked oxen to the plough, and made many of the Indians husbandmen...and that he also taught them the satyric dance... he instructed the Indians to let their hair grow long in honour of the god, and to wear the turban; and that he taught them to anoint themselves with Ungents,...(Ibid; p. 200)

हिराक्लिस के सम्बन्ध में वह आगे कहता है—"They (भारतीय पण्डित) further assert that Herakles, also was born among them. They assign to him like the Greeks the club and the lion's skin. He far surpassed other men in personal strength and prowers, and cleared sea.

निःसन्देह यूनानी देवता डिओनिसस और हिराकिल्स की भारत सम्बन्धी गाथायें जैसा कि एरियन ने लिखा है—कवियों की कल्पना की उपज थीं—These stories about Dionysos are of course but fictions of the poets...Ancient India, p. 180)। वस्तुतः मेगास्थनीज आदि को यहाँ की कुछ जातियों के आचार-व्यवहार तथा उत्सवों के जुलूस, पूजा के प्रकार व रण के वाद्यों आदि में यूनानी ढंग दिखाई पड़ा और इसी कारण उन्होंने भारतीय देवताओं में डिओनिसस और हिराकिल्स के रूपों को प्रतिबिम्बित पाया। स्ट्राबो कहता है कि यूनानियों ने भारत की क्षुद्रक जाति (Oxydrakai = क्षुद्रक) को डिओनिसस की सन्तान समझा था क्योंकि उनके प्रदेश में अंगूर पैदा होते थे और उनके युद्ध के अभियान बेक्कस अथवा डिओनिसस के यान व जुलूस के तरीके पर हुआ करते थे तथा दूसरे अवसरों पर वे फूलों से

---

and land of evil beasts...He was the founder also, of no small number of cities, the most renowned and greatest of which he called Palibothra...' (Ancient India; pp 26 to 39).

हिराक्लस की उपासना के मुख्य केन्द्रों का उल्लेख करते हुए मेगास्थनीज कहता है—"This Herakles is held in special honour by the Sourasenoi (शौरसेनी) an Indian tribe who possess two large cities, Methora (मथुरा) and Cleisobora (कृष्णपुर), and through whose country flows a navigable river called the Iobares (जमुना) ......It is further said that he had a very numerous progeny... (for like, his Theban namesake, he married many wives)'—Ibid; p. 201.

चित्रित पोशाकें पहिन कर ढाल बजाते गायकों के साथ प्रासाद से बाहर निकला करते थे।[44]

इराटोस्थनीज के आधार पर भारत की शिवि नामक जाति (Sibai) का वर्णन करते हुए एरियन ने लिखा है कि यूनानी उनको हिराकिल्स के उन साथियों की सन्तान समझे जो यहीं बस गये थे; क्योंकि "Besides being dressed in skins, the Siboi carry a cudgel, and brand on the backs of their oxen the representation of a club, wherein the Makedonians recognized a memorial of the club of Herakles."[45]

अत: प्रकट है कि जिन देवताओं को मेगास्थनीज आदि ने डिओनिसस और हिराकिल्स समझा। वे वस्तुत: भारतीय देवता ही थे।[46] डिओनिसस का स्थान 'पहाड़ों' में बताया गया है; उसके प्रिय वाद्य -झल्लरी (Cymbal) और मृदंग (Drum) कहे गये हैं, उसकी

44. Ancient India As Described In Classical Literature; p. 13.

45. Ancient India; p. 196.

46. श्री माइक्रेण्डेस का कथन है कि—"The Greeks who accompanied Alexander into India identified the gods whom they saw principally worshipped by the inhabitants with certain of their own gods. In this they but followed the usual practice of their countrymen who were ever ready to recognize the identity of any foreign god with some one or other of their own pantheon..." Ancient India As Described In Classical Literature; p. 64; fn. 3.

सेविकाओं में स्त्रियां मुख्य बतायी गयी हैं; अपने उपासकों को बाल (जटा) बढ़ाना और दाढ़ी रखना उसीने सिखलाया था; नृत भी उसीने सिखाया था और अंगूर की खेती करना व मदिरा बनाना भी उसीने सिखाया था। यह वृतान्त लक्षित करता है कि भारत के जिस देवता को उन्होंने डिओनिसस समझा वह वस्तुत: शिव व महादेव हैं—क्योंकि शिव कैलाश-पति हैं; विषपान करनेवाले हैं; जिस परम्परा पर उनके उपासक बहुधा उत्सवों पर भाँग-धतूरा का सेवन करते हैं जो मदिरा की तरह ही नशीली वस्तु है, शिव के उपासक सिर पर बड़ी-बड़ी जटायें भी धारण करते और दाढ़ी रखते हैं; देवदासियाँ विशेषतया शिव-मन्दिरों मे ही रखी जाती रही हैं, नृत का अधिष्ठाता होने के कारण शिव नटराज भी कहलाते हैं और वे ही युद्ध के अधिष्ठाता देवता 'हरहर महादेव' भी हैं। भारतीय देवता जिसे हिराकिल्स कहा गया है वह हमारे 'कृष्ण' हैं; क्योंकि शौरसेन-प्रदेश अथवा मथुरावाले (Methura) ही उनके निकटतम थे; उन्हीं के प्रदेश में जमुना (Iobares = Iomanes = Yamuna) बहती है और उनकी ही अनेकों रानियाँ होना प्रसिद्ध है। कालिया नाग का मन्थन करके समुद्र = जमुना नदी को उन्होंने ही विष से मुक्त किया था। क्लिसबोरा नाम से जिस भारतीय नगर के नाम की ध्वनि निकलती है उससे प्रतीत होता है कि वह कृष्ण के नाम पर बसा कृष्णनगर था।[47]

---

47. कैंब्रिज हिस्ट्री का लेखक डिओनिसस और हिराकिल्स पर मत व्यक्त करते हुए लिखता है—

"Greek mythology told of the wine God Dionysos as some one who had led about Asia a wandering army of revellers, garlanded with vine and ivy, to the accompaniment of drums and cymbals and in India the relegious procession in honour of Shiva, the royal

इन्द्र-गंगा-सूर्यदेव

स्ट्राबो ने लिखा है कि यूनानी इतिहासकारों के अनुसार भारतवासी जीअस, (Zeus Ombrios = वर्षा और तूफान का यूनानी देवता), गंगा-नदी और कतिपय स्वदेशीय देवी-देवताओं की पूजा करते थे। स्पष्टतया जीयस से अभिप्राय हमारे मेघ के देवता इन्द्र से है जिसे यूनानी शिव और कृष्ण की तरह अपना जीअस समझ बैठे। सिकन्दर के भारतीय-आक्रमण के साथियों में चेरस (Chares) नामक एक यूनानी ने भारतीयों के एक देवता सोरोडिओस (*Soroadeios*) का भी उल्लेख किया है जिसे वे 'मदिरा का देवता' समझे, लेकिन उससे वस्तुतः अभिप्राय 'सूर्यदेव' से है।[48]

मेगास्थनीज के अनुसार देवताओं की पूजा के लिए यज्ञ और बलि आदि धार्मिक-कृत्य किये जाते थे। उपासना के समय सिर पर कोई वस्त्र नहीं रखता था और बलि के पशु को शस्त्र के बजाय गला घोंट कर मारा जाता था।[49] यह विधि शायद किसी विशेष जाति में रही होगी क्योंकि पशुओं को इस तरह से मारने का शास्त्रों में कोई नियम नहीं मिलता।

---

progresses with drum and cymbals, especially characteristic of certain tribes, seem to have struck them as Bacchic in character. Evidently Siva was India's memory of the conquering god, and these usage had been learnt from him ages ago."

Heracles the Greeks seemed to themselves to discover in Krishna '—Vol. I.p. 408.

48 Ancient India As Described In Glassical Literature; pp. 74–75. Cam. Hist. Vol. I; p. 422.

49. Ancient India; p. 71.

भारत के दार्शनिक

स्ट्राबो ने लिखा है कि मेगास्थनीज के अनुसार पहाड़ों में रहने वाले दार्शनिक शिव (डिओनिसस) के और मैदानों में रहने वाले कृष्ण (हिराक्लिस) के अनुयायी थे।[50] उसका संकेत शैव और वैष्णव सम्प्रदाय के दार्शनिकों से प्रतीत होता है। शिव के अनुयायी मेगास्थनीज के अनुसार मलमल के महीन व चमकीले कपड़े पहनते, सिर पर पगड़ी धारण करते और इत्र आदि का प्रयोग करते थे। स्ट्राबो का कहना है कि एक दूसरे सिद्धान्तानुसार मेगास्थनीज ने दार्शनिकों को ब्राह्मण (Brahmanes) और श्रमण (Carmanes = Sarmanes = श्रमण बौद्धसाधु) नाम से दो प्रकारों में विभाजित किया है। इनमें से ब्राह्मण दार्शनिकों का बहुत मान था क्योंकि वे अपने सिद्धांतों के दृढ़ थे।

दार्शनिक बहुत सादगी से नगरों के पास घिरे हुए कुंजों अथवा आश्रमों में रहा करते थे—They live in a simple style, and lie on beds of rushes or (deer) skins. They abstain from animal food and sexual pleasures—Ancient India p. 99. मेगास्थनीज ने कहा है कि ब्राह्मण स्त्रियों को दर्शन का ज्ञान नहीं कराते थे; लेकिन दूसरे स्थान पर उसने यह भी कहा है कि दार्शनिकों के पास अध्ययन करने वालों में ब्रह्मचारिणी स्त्रियाँ अथवा कुमारियाँ भी होती थीं। मेगास्थनीज का कथन परस्परविरोधी है और उससे मालूम होता है कि दर्शन आदि शास्त्रों के अध्ययन पर स्त्रियों पर कोई प्रतिबन्ध नहीं था क्योंकि कतिपय स्त्रियाँ भी ज्ञान-अर्जन के हेतु दार्शनिकों के आश्रम में जीवन बिताती थीं।

मेगास्थनीज ने कुछ कठिन प्रयोग करने वाले हठयोगियों का भी

50, Ibid; p. 97; India As Described In Classical Literature; p. 64.

उल्लेख किया है जो कठिन व्रत व तपश्चर्या—जैसे सारे दिन एक प्रकार का आसन बाँध कर बैठे रहना आदि क्रिया करते थे।

मेगास्थनीज ने दैवज्ञों (diviners), ऐन्द्रजालिकों (Sorcerer = जादू-टोने वाले) और उन पुरोहितों का भी उल्लेख किया है जो मृतक-संस्कार कराने की विधि आदि में पारंगत होते थे। ये लोग गाँवों और नगरों में भिक्षाटन कर जीविका चलाते थे।[51]

ब्राह्मण दार्शनिकों के सिद्धान्तों का उल्लेख करते हुए मेगास्थनीज ने कहा है कि 'मृत्यु' को वे सुखद जीवन का प्रभात मानते हैं और इसलिये मृत्यु से पूर्व वे बहुत संयम से रहा करते हैं। वे मनुष्य पर आने वाली किसी घटना को भला या बुरा नहीं कहते और सब बातों को स्वप्न की तरह अवास्तविक मानते है।

यूनानियों की तरह वे सृष्टि का आदि और अंत मानते हैं और उनके विचार में जिस ईश्वर ने सृष्टि को सृजा और जो उसका पालन करता है वह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में व्याप्त है। वे आदि तत्वों (पंचतत्व) को मानते है और जल को सृष्टि का मुख्य तत्व बतलाते है। पृथ्वी को वे ब्रह्मांड के मध्य में स्थित कहते हैं। जन्म, आत्मा और इसी तरह के अन्य विषयों के सम्बन्ध में उनके यूनानियों के ही जैसे विचार हैं। वे आत्मा के अमरत्व और परलोक के न्याय पर भी विश्वास करते हैं और प्लाटो की तरह उन्हें आख्यायिकाओं द्वारा समझाते हैं।

श्रमण दार्शनिकों में जो Hyloboi कहलाते थे सबमें प्रतिष्ठित थे। वे वन में रहते, कन्द-मूल-फल खाते और पेड़ों की छाल पहिनते थे। वे सुरा और सुन्दरी से दूर रहते थे। राजागण उनके पास भविष्य-सम्बन्धी (घटनाओं के कारणादि) बातें पूछने को दूत भेजा करते थे और उनके द्वारा पूजा से देवताओं को सन्तुष्ट करते थे। Hyloboi दार्शनिकों के इस

51. Ibid; p. 98ff; and p. 65–67.

विवरण से मालूम होता है कि वे शायद 'वानप्रस्थी' साधु थे। प्राचीन लेखक क्लिमेन्स के अनुसार वे भी श्रमणों में ही शामिल थे। उसने कुछ अन्य दार्शनिकों का भी उल्लेख किया है जो Boutta (बुद्ध) के उपासक थे (Anc. Ind. p. 105)।

मेगास्थनीज ने चिकित्सकों को भी दार्शनिकों की श्रेणी में रखा है और कहा है कि Hyloboi के बाद समाज में उनका बहुत मान था क्योंकि वे मानव प्रकृति का अध्ययन किया करते थे। उनका जीवन सादा होता था। वे चावल और जौ खाते थे जो उन्हें लोग सहर्ष भेंट में दिया करते थे।[52]

स्ट्राबो ने प्रमनाइ (Framnoi) नाम के दार्शनिकों का भी उल्लेख किया है जो ब्राह्मणों के विरोधी थे। सम्भवतया वे बौद्ध या जैन दार्शनिक थे।[53]

अरिस्टोबुलस (Aristoboulos) ने तक्षशिला में रहने वाले दो ब्राह्मण साधुओं का उल्लेख करते हुए कहा है कि वे जनता के मार्ग-दर्शक थे, इसलिए लोग उन्हें खाने की सभी वस्तुएँ बिना मूल्य के देते थे। सिकन्दर के साथ उन्होंने खड़े रहकर भोजन किया था। वे कठोर तपस्या करने वाले थे। इसका प्रदर्शन उनमें से एक ने वर्षा और धूप में लेट कर और दूसरे ने हाथों में लकड़ी की शहतीर थामे एक पैर पर खड़े होकर किया था।[54]

प्लुटार्क ने कुछ दार्शनिकों का 'Gymnosophists' नाम से उल्लेख किया है जो नग्न रहा करते थे। उनसे अभिप्राय शायद ब्राह्मण नागा-

---

52. Ancient India' p. 102.

53. Ancient India As Descaibed In classical literature; p. 76.

54. Ibid; p. 68.

साधुओं से प्रतीत होता है। इन साधुओं ने भारतीयों को सिकन्दर व उसके साथियों के विरुद्ध भड़काया था, जिससे उन्हें काफी विपत्तियाँ उठानी पड़ी, अत: उनमें से बहुतों को सिकन्दर ने मरवा दिया था। अत: सिकन्दर ने दस नंगे साधुओं को बन्दी भी बनाया था, लेकिन उनके दार्शनिक विचारों से प्रभावित होकर बाद में उन्हें मुक्त कर दिया था।[55]

नि:सन्देह, ब्राह्मण देश भर में प्रतिष्ठित होने के साथ वीर पुरुष भी थे; अत: एरियन ने लिखा है—"They (ब्राह्मण) were men of spirit." उन्होंने ही सिकन्दर के विरुद्ध भारतीय राजाओं—मुसिकेनास (Mousiknnos) और ऑक्सिकेनास (Oxykanos) आदि को भड़काया था और यूनानियों के कोप की परवाह न कर मालवों को अपने दुर्ग में शरण दी थी।[56] यद्यपि उनका विद्रोह तब सफल नहीं हुआ लेकिन जागरुक ब्राह्मणों ने अपने को मिटाकर स्वतन्त्रता और राष्ट्र के लिए उत्सर्ग करने की राष्ट्रीय भावना को भारतीयों के हृदयों में मिटने न दिया। उनके इस उत्सर्ग का ही परिणाम था कि शीघ्र ही चाणक्य और चन्द्रगुप्त ने उनके अधूरे कार्य को अपने हाथों में लेकर यूनानियों को देश से खदेड़ भारत को पुन: स्वतन्त्र कर दिया।

अन्तिम संस्कार

मेगास्थनीज आदि यूनानी लेखकों के अनुसार भारतीय मृतकों की यादगार में बहुत साधारण समाधि बनाते थे;[57] क्योंकि भारतीयों के विचार में आदमियों के सुकर्म और उनकी प्रशंसा में बने गीत ही उनकी

---

55. Plutarch's Lives; pp. 481-491.

56. Ancient India And Its invasion By Alexander; p. 144.

57. Ancient India; p. 70.

स्मृति बनाये रखने को पर्याप्त थे।[58] अरिस्टोबुलस ने मृतकों को फेंककर गिद्धों द्वारा खिलाये जाने का भी उल्लेख किया है। यह पद्धति शायद ईरानी प्रभाव के कारण तक्षशिला जैसे सीमान्तिक प्रदेशों के कुछ एक जातियों में ही प्रचलित रही होगी क्योंकि अरिस्टोबुलस ने मृत-पतियों के साथ चिता में स्त्रियों के जलने का भी उल्लेख किया है (India As Described In Classical Literature; p. 69.)।

भारत के नगर

ई० पू० चौथी शताब्दी में भारत में छोटे-बड़े अनेक नगर वर्तमान थे। मेगास्थनीज के आधार पर एरियन कहता है कि नगरों की पूरी और सही संख्या देना कठिन है। समुद्र और नदियों के तट पर बसे नगरों के मकानादि अत्यधिक वर्षा और बाढ़ के कारण लकड़ी के बनते थे और ऊँची जगहों के नगरों के मकान आदि ईंट और मिट्टी से ही बनाये जाते थे। सबसे बड़ा नगर पाटलिपुत्र था।[59]

स्ट्राबो ने लिखा है कि यूनानी लेखकों के अनुसार झेलम (=Hydaspes) और व्यास (=Hypanis) के बीच पाँच हजार नगर विद्यमान थे।[60] पाटलिपुत्र के अलावा अन्य बड़े नगरों का भी यूनानियों ने उल्लेख किया है जिसमें प्रमुख सिन्धु और झेलम के बीच बसा तक्षशिला नगर था। उसके आस-पास का प्रदेश भी बहुत आबाद और उर्वर था।[61] यह नगर व्यापार का बहुत बड़ा केन्द्र होने से बहुत समृद्ध व धनी था। अशोक के राज्याभिषेक के अवसर पर तक्षशिला का

---

58. Ibid; p. 204.

59. Ibid; pp. 204–205.

60. Ancient India As Described In Clussical Lite-rature; p. 9.

61. Ibid; pp. 33–34,

कोष ३६ कोटी स्वर्ण मुद्राओं से पूर्ण था।[62] गांधार प्रदेश में पुष्कलावती भी[63] (यूनानियों का Peukelaitis) बहुत बड़ा नगर था।

पंजाब के नगरों में मस्सागा और सनगल विशाल दुर्गवाले नगर थे।[64]

बौद्ध-साहित्य के विवरणानुसार उज्जैन और विदिशा भी उस समय के बड़े नगरों में से थे। नगरों की इस प्रचुरता का कारण उद्योग-धन्धों और व्यापार का उन्नत होना था। कौटिल्य तथा मेगास्थनीज ने पाटलिपुत्र आदि नगरों की व्यवस्था का जो वर्णन दिया है उससे स्पष्ट है कि नगर सुव्यवस्थित तथा अनेक उद्योग धन्धों के केन्द्र थे। साथ ही यह भी अनुमान होता है कि सभी प्रादेशिक बड़े नगरों की शासन-व्यवस्था पाटलिपुत्र के प्रकार की ही रही होगी।

उत्सव जुलूस

मौर्य-युग के नगरों की समृद्धि का वहाँ के उत्सवों के जुलूसों में प्रदर्शित वैभव से प्रत्यक्ष अनुमान किया जा सकता है। स्ट्राबो ने लिखा है कि भारतीयों के जुलूसों में सोने-चाँदी से अलंकृत अनेक हाथी, चार घोड़ोंवाले रथ और बैलों की जोड़ियाँ साथ-साथ चलती थीं। उनके बाद सुसज्जित परिचारकों का विशाल दल होता था जो सोने के बासनों, ताम्र के रत्नजटित प्यालों और सुवर्ण के तारों से कढ़े वस्त्रों आदि को लिए रहते थे। जुलूस के साथ भैंसे, चीते और पालतू शेर तथा अनेक रङ्ग-विरङ्गी व गानेवाली चिड़ियाँ भी ले जायी जाती थीं। विलटार्कस के अनुसार जुलूस के साथ चार-पहियों की गाड़ियों में बड़े-बड़े पत्तोंवाले पेड़ ले जाये जाते थे जिनकी टहनियों पर पक्षियों के पिंजरे लटके होते थे।[65]

---

62 Cunningham's Ancient Geography of India; ed. By S N. Majumdar. p. 122.

63. Ancient India; p 180.

64. The Invasion Of Alexender; p. 194 & 115.

65. India As Described In Classical Literature p 75.

भारतीय जंगली पशु-पक्षी आदि

मेगास्थनीज ने बहुत से हिंसक पशुओं आदि का उल्लेख किया है। यहां के बाघ, बन्दर, सर्प, उड़नेवाले बिच्छू, असाधारण कुत्ते और हाथी आदि यूनानियों को विशेषरूप से अद्‌भुत प्रकार के पशु मालूम दिए (Ancient India; pp. 56 to 71) थे।

मेगास्थनीज के अनुसार सबसे बड़े बाघ प्राच्य-प्रदेश में होते थे। उसने एक पालतू बाघ का उल्लेख किया है जिसे चार आदमी लिये जा रहे थे लेकिन तब भी वह अपने पिछले पैरों से एक ऊँट को पकड़कर घसीट रहा था।

प्राच्य-प्रदेश के बन्दर बड़े कद के कुत्तों से भी बड़े होते थे। इन बन्दरों के मुख काले और शेष बदन गोरा होता था। उनकी पूँछ दो हाथ से भी अधिक लम्बी होती थी। ये बन्दर पालतू थे और आदमियो से छेड़-छाड़ नहीं करते थे। कुछ बन्दर ऐसे भी थे जो उनके साथ छेड़ने-वालों पर चट्टान भी गिराया करते थे। एलियन ने कुछ लाल रङ्गों के बन्दरों का भी उल्लेख किया है जो स्त्रियों पर झपटा करते थे।[66]

मेगास्थनीज ने बड़े-बड़े उड़नेवाले असाधारण बिच्छुओं का भी उल्लेख किया है जो रात में निकला करते थे। असाधारण शक्ति वाले बहादुर कुत्तों का उल्लेख करते हुए उसने कहा है कि एक कुत्ते ने एक बार एक शेर और एक सांड को इकट्ठे ही पकड़ लिया था। कुत्ते को अक्षत छुड़ा तो लिया गया लेकिन तब तक वह सांड मर चुका था।

मैगास्थनीज ने कहा है कि बहुत से पालतू जानवर भारत मे तब जङ्गली अवस्था में भी थे। एलियन के अनुसार कुछ पहाड़ी प्रदेशो मे जङ्गली भेड़, बकरी, कुत्ते और बैल वनों में घूमते-फिरते थे (Ancient India, P. 59)। उसने जङ्गली घोड़ों और गधों का भी उल्लेख किया है (Ibid; P. 163)।

66. Ibid; p. 145.

मेगास्थनीज के अनुसार भारत के कुछ सर्प इतने दीर्घ-काय होते थे कि वे पूरा बारहसिंगा और बैल तक को निगल जाते थे। एलियन ने भी लिखा है कि भारत में असंख्य प्रकार के सर्प होते थे जो मनुष्य व पशु दोनों के लिए घातक थे। किन्तु उसने कहा है कि भारत में औषधियों के ऐसे भी पौधे होते थे जो सभी तरह के सर्प-दंश में काम आते थे। भारतवासियों को इन पौधों की बहुत जानकारी थी और वे सफलता से उसका प्रयोग करते थे। किसी को जब सर्प काटता था तो लोग तुरन्त उसे बचाने के लिए दवा लेकर पहुँच जाते थे।[67] नियार्कस ने सँपेरों का भी उल्लेख किया है जो देशभर में घूमते-फिरते और सर्प के काटेवालों की दवा किया करते थे।[68] एलियन ने नाग-पूजा का भी उल्लेख किया है। उसने लिखा है कि सिकन्दर ने जब भारत के नगरों पर आक्रमण किया था तो उसने बहुत-सी जगह भारतीयों को सर्प और कुछ अन्य पशुओं की श्रद्धा से पूजा करते पाया था। एक नगर के लोगों ने सिकन्दर से गुफा में रखे गये सर्प को तंग न करने की याचना की थी जिसे उसने मान लिया था।[69]

भारत के मोर और पीले वर्ण के कबूतर यूनानियों को बहुत ही आकर्षक लगे थे। एरियन ने लिखा है कि यूनानी लेखकों के अनुसार—सिकन्दर मयूरों से इतना आकृष्ट हुआ था कि उन्हें मारने वालों के लिए उसने कड़ी सजा घोषित कर दी थी। एलियन ने पीत-वर्ण के जङ्गली कबूतरों का उल्लेख करते हुए कहा है कि वे खूँखार होते थे और उन्हे पालतू नहीं किया जा सकता था। उसने तीन तरह के शुक या तोतों का भी जिक्र किया है जो आदमियों की बोली बोल सकते थे।[70]

---

67 Ibid; p. 140.

68. Ibid; p 52.

69. Ibid; p. 145.

70. Ibid; pp. 139–145 and 146—डैमेकस (Daim-

सबसे अधिक यूनानी भारतीय हाथियों से आकृष्ट हुए थे जिनका उन्होंने बहुत दिलचस्पी के साथ वर्णन किया है। हाथी से सवारी करने के अलावा हल लगाने का काम भी लिया जाता था।[71] सबसे बड़े और भीमकाय हाथी प्राच्य-प्रदेश और तक्षशिला के होते थे।

हाथी और घोड़े युद्ध के पशु होने से राज्य की सम्पत्ति समझे जाते थे इस कारण कोई उन्हे वैयक्तिक इस्तेमाल के लिए नहीं रख सकता था। मेगास्थनीज ने विस्तार के साथ जंगली हाथियों को पकड़ने और उन्हें पालतू बनाने की विधि का भी उल्लेख किया है। उसके अनुसार कोई-कोई हाथी २०० वर्ष तक जीवित रहते थे।[72]

हाथियों को युद्ध-कर्म और सलामी देने आदि की शिक्षा दी जाती थी। एलियन ने लिखा है कि दर्बार के लिए भारतीय सम्राट जब महल से निकलते थे तो उस अवसर पर एक हाथी सलामी देने के लिए नियत रहता था। हाथियों से घास, लकड़ी आदि ढोने का काम भी लिया जाता था।[73]

मेगास्थनीज के अनुसार हाथी बहुत ही स्वामिभक्त पशु था। युद्ध में घायल हुए महावतों को हाथी अपनी पीठ पर लादकर रणक्षेत्र से सुरक्षित स्थान को हटा ले जाते थे। युद्ध के समय हाथी अपने घायल व गिरे हुए स्वामी के प्राण बचाने के लिए लड़ते भी थे।[74]

---

achos = बिन्दुसार के दरबार का यूनानी राजदूत) ने सेव के रंगवाले कबूतरों का भी उल्लेख किया है; p. 145 fn. 2.

71. Ancient India, p. 155.

72 Ibid; pp. 90–92.

73. India As Described In Classical Literature; pp. 142–143.

74. Ancient India; 92.

एलियन ने लिखा है कि सिकन्दर के साथ लड़ते हुए जब पोरस घायल हुआ तो उसके हाथी ने, जो स्वयं बहुत घायल था, अपनी सूंड से मृदुलता के साथ उसके शरीर पर के चुभे बाणों को बाहर निकाल फेंका और धीरे-धीरे आहिस्ता से उसे अपनी पीठ से उतारकर जमीन पर लिटा दिया।[75]

एरियन के अनुसार भारतीय स्त्रियाँ किसी प्रेमी से हाथी का उपहार पाने पर अपने को उसे सौंप देती थीं। जो स्त्री उपहार मे हाथी लब्ध करती थी वह अनुपम सुन्दरी और गौरवशालिनी समझी जाती थी।[76] यह कथन राज-पुरुषों और उनकी प्रेमिकाओं से ही अभिप्राय रख सकता है क्योंकि यूनानी लेखकों के ही अनुसार राजा के अलावा सामान्य-जन निजी उपयोग के लिए हाथी घोड़े नहीं रख सकते थे।

व्यवसाय—खनिज पदार्थ

व्यवसायियों और शिल्पियों का मेगास्थनीज ने चौथी जाति के रूप में उल्लेख किया है। उसके अनुसार कुछ व्यवसायी राज्य को कर और काम के रूप में राजस्व दिया करते थे। लेकिन शस्त्र-अस्त्र और जहाज अथवा पोतों के बनानेवालों को राज्य की ओर से मजदूरी और रसद मिलती थी। आयुधों और जहाजों का निर्माण व्यवसाय केवल सरकार ही कर सकती थी। अतः व्यापार और यात्रा के लिए जहाज राज्य के नाव-सेनापति से ही किराये पर मिल सकते थे।[77]

75. India As Described In Classical Literature, p. 139.

76. Ancient India, p. 222.

77. India As Described In Classical Literature, p. 53.

अर्थशास्त्र में जहाजों के अधिकारी को नावाध्यक्ष कहा गया है, जिसका काम समुद्र, नदीमुख (नदी और समुद्र के संगम-स्थान), देवसर (बड़ी झीलें, प्राकृत और बनायी हुई), स्थानीय तथा दूसरे दुर्ग-नगरों के पास की नदियों में चलनेवाले जहाजों का पूरा हिसाब रखना होता था। जो लोग समुद्र से शंख व मुक्ता लेने के लिए राज्य की नाव लेते थे उन्हें नौकाहाटक (किराया) देना पड़ता था। अर्थशास्त्र के अनुसार लोग निजी नौका भी काम में ला सकते थे (शायद वे छोटी प्रकार की नावें 'क्षुद्रनाव' रही होंगी क्योंकि मेगास्थनीज के अनुसार जहाजों का व्यवसाय केवल राज्य ही कर सकता था)। बडे पोतों के लिए अर्थशास्त्र में 'महानाव' कहा गया है, जिसका पोतवाहक अथवा कैप्टिन 'शासक' कहलाता था।

ब्राह्मणों, परिव्राजकों, बच्चों, व्याधिग्रस्तों, राजदूतों और गर्भिणी स्त्रियों से नाव-हाटक नहीं लिया जाता था। बन्दरगाहों (पत्तन) में प्रमाणित परदेशी व्यापारियों को ही प्रवेश मिल सकता था।[78]

मेगास्थनीज और कौटिल्य का यह विवरण मौर्य-युग के पोत-व्यवसाय और वैदेशिक व्यापार की स्थितिपर अच्छा प्रकाश डालता है।

मेगास्थनीज ने कई एक व्यवसायों जैसे—लकड़ी का काम करने वाले शिल्पि, लोहार और खनिकों (खान में काम करने वाले) आदि का उल्लेख किया है।[79] नियार्कस ने भारतीय कारीगरों की प्रशंसा करते हुए लिखा है कि वे इतने चतुर थे कि यूनानियों के पास स्पंज (Sponge) व तेल की कुप्पियाँ (vessels) आदि देखकर वे उन्हे शीघ्र ही स्वयं बनाना सीख गये थे। भारतीय लिखने के लिए विशेष प्रकार का बुना कपड़ा काम में लाते थे। उसने तांबे के ऐसे बर्तनों का भी उल्लेख किया है जो जमीन पर गिरते ही मिट्टी के बासन की तरह

78. Kau Arth. Chp. XXXIII; Bk. II.
79. Ancient India; p. 86.

टूट-फूट जाते थे। उसने भारत में उत्पन्न होने वाले अनेक बहुमूल्य पत्थरों और मोतियों आदि का भी उल्लेख किया है।[80]

मेगास्थनीज ने 'मरकत' (margarita) मोती का उल्लेख करते हुए कहा है कि इसे भारतीय व्यापारी बहुत चाव से खरीदते हैं और भारत में उसके लिए उसके तौल का तिगुना सोना बदले में दिया जाता है, क्योंकि सोना उन्हीं के यहाँ की उपज है (और मरकत यूनान से खरीदा जाता था)।[81] उसने खानों का उल्लेख करते हुए बतलाया है कि भारत में सोना, चाँदी, ताँबा, लोहा, टीन आदि बहुत होता था जिनसे बासन, आभूषण और आयुध बनाये जाते थे (Ancient India p. 31)।

स्ट्राबो ने अनेक तरह के बहुमूल्य पत्थरों और रत्न-जटित ताम्र के प्याले आदि का तथा स्वर्णतारों से बनी व कढ़ी पोशाकों का भी उल्लेख किया हैं।[82] यह विवरण उस युग के भारत की औद्योगिक व व्यावसायिक उन्नति का परिचय देता है। किन्तु इसके विपरीत जैसा कि स्ट्राबो ने लिखा है, कतिपय यूनानी लेखकों का यह विचार कि भारत में सोने-चाँदी की अनेक खानें थीं, लेकिन खनिज विद्या और कच्ची धातुओं को शोधने की परिक्रियाओं से परिचित न होने के कारण भारतीयों को अपनी दौलत का पता नहीं था, असंगत प्रतीत होता है।[83]

80. India As Described In Classical Literature; p. 73.

81. Ancient India; pp. 201–202.

82. India As Described In Classical Literature; p. 75.

83. Ibid; p. 38.

मेगास्थनीज आदि तथा कौटिल्य अर्थशास्त्र के विवरण से प्रत्यक्ष है कि खनिज पदार्थों और खनिज विद्या आदि का भारतीयों को पूरा ज्ञान था। अतः भारतीयों को खनिज विद्याओं आदि से अपरिचित समझने वाले यूनानियों को शायद स्वतः ही भारत का सही वृतान्त ज्ञात नहीं हो सका था। अर्थशास्त्र के अधिकरण २ के अध्याय १२ में आकराध्यक्ष के कार्यों का जो विवरण है वह खनिज-कर्म और खनिज-उत्पादन के उल्लेखों से पूर्ण है। कोषाध्यक्ष द्वारा रत्न-परीक्षा वाला अध्याय (अ-११-अधि-२) भारत में उत्पन्न होने वाले अनेक तरह के बहुमूल्य रत्नों, मोतियों व बहुमूल्य पत्थरों आदि के वर्णन से परिपूर्ण है। इन अध्यायों के वर्णन इस बात को प्रकट करते हैं कि उस समय भारत में धातुओं और रत्नों का उद्योग बहुत विकास पर था।

यूनानी लेखकों ने भारत के महीन मलमल व स्वर्ण तारों से खचित जरीदार वस्त्रों का भी उल्लेख किया है जो उस समय के वस्त्र-व्यवसाय की उन्नतावस्था का परिचायक है। इसकी अर्थशास्त्र से भी पुष्टि होती है जिसके अनुसार सूती वस्त्रों (कार्पासिक) के उत्पादन के मुख्य केन्द्र माधुर (मधुरा = मदुरा, पांड्य-प्रदेश की राजधानी), अपरान्ता (सौराष्ट्र-कोंकण आदि पश्चिमी प्रदेश), कलिंग, काशी (बनारस), वंग (बंगाल), वत्स (कौशाम्बी) और महिष (महिष्मती-कुन्तल देश की राजधानी) थे।

विशेष प्रकार के मूल्यवान्, महीन, रंगीन और काम किये वस्त्रों को 'दुकूल' कहा जाता था। यूनानियों ने जिन जरीदार, सुन्दर व रंग-बिरंगे तथा स्वर्ण से कढ़े वस्त्रों का उल्लेख किया है वे शायद 'दुकूल' ही थे। वंग का बना दुकूल श्वेत और स्निग्ध, पांड्य प्रदेश का काला और मणि के जैसा स्निग्ध और सौवर्णकुड्य (कामरूप) का सूर्य-वर्ण का होता था।

काशी में बना दुकूल काशिक, मगध में बना मागधिका और पाड्य-प्रदेश का बना क्षौम नाम से सुविख्यात था। रेशमी वस्त्रों को कौशेय और चीनपट्ट कहते थे। चीनपट्ट चीन के बने रेशमी वस्त्र का नाम था। यहाँ पर यह उल्लेख करना दिलचस्प होगा कि यूनानी 'कपास' (रूई) से परिचित न होने के कारण उसे पेड़ों पर पैदा होने वाली ऊन समझे थे।[84]

ऊन का व्यवसाय भी उन्नत था। अर्थशास्त्र में दस प्रकार के ऊनी कम्बलों का उल्लेख है। भेड़ की ऊन के अलावा कुछ जंगली जानवरों के बालों (मृगरोम) से भी कम्बल बनाये जाते थे।

भिङ्गिसी नाम का कम्बल वर्तमान वाटर-प्रूफ की तरह वर्षा से बचने (वर्षवारण) के लिए काम आता था। यह श्याम रंग का और आठ खंडों को जोड़कर बनाया जाता था। 'अपसारक' नाम का कम्बल भी 'वर्षवारण' के काम आता था। ये दोनों कम्बल नैपाल मे बनते थे।[85]

भारत की इस व्यावसायिक उन्नति का मुख्य कारण उस समय देश-विदेशों के साथ घनिष्ठ व्यापारिक सम्बन्ध का होना था। मेगास्थनीज व इराटोस्थनीज के आधार पर एरियन ने लिखा है कि भारत का यूनान के साथ बहुत व्यापार हुआ करता था।[86]

अर्थशास्त्र में उल्लेखित 'पारविषयिक' (परदेश से आने वाले) व्यापारियों, समुद्र में चलनेवाले जहाजों तथा 'चानीपट्ट' (चीन का रेशमी वस्त्र) आदि के उल्लेखों से भी उस समय के घनिष्ठ वैदेशिक व्यापारिक सम्बन्धों की पुष्टि होती है।

---

84. India As Descrided In Classical Literature; p. 25

85. कौ. अर्थ. अ. ११. अधि २.

86. Ancient India; p. 201.

खेती-फसलें

मेगास्थनीज ने लिखा है कि भारत की भूमि बहुत उर्वर थी जिस कारण वर्ष में अनाज और फलों की दो फसलें पैदा होती थीं। फलो की पैदावार का विशेष स्थान उसने हिमालय पर्वत बतलाया है। उसका कथन है—

'India has many huge mountains (हिमालय से अभिप्राय मालूम होता है) which abound in fruit trees of every kind, and many vast plains of great fertility—more or less beautiful, but all alike intersected by a multitude of rivers.' (Ancient India; pp. 30–31).

स्ट्रावो के अनुसार इराटोस्थनीज का भी कहना है कि जाड़े और गर्मी दोनों समय भारत में वर्षा होने से फसलों की जोरदार उत्पत्ति मे कोई बाधा न पड़ती थी। फल भी बहुतायत से पैदा होते थे। कुछ पौधे ऐसे थे जिनकी जड़ें मीठी होती थीं और कुछ पौधे ऊन (रूई से अभिप्राय है) उत्पन्न करते थे।[87] ऊन के पेड़ का उल्लेख करते हुए यूनानी लेखक अरिस्टोबुलस (Aristoboulos) ने कहा है—"That there is a stone within the flower pod and that when this is extracted the remainder is combed like wool" उसने मुसिकों के प्रदेश में स्वतः पैदा होने वाले गेहूँ और शराब उत्पन्न करनेवाले अंगूरों का भी उल्लेख किया है।[88]

इराटोस्थनीज ने भारत की पैदावारों में चावल, बाजरा, सन, गेहूँ, जौ, विभिन्न प्रकार की दालें तथा सब प्रकार के फलों आदि का

87. India As Described In Classical Literature; p 25.

88. Ibid; p. 27.

जिक्र किया है। उसने खाये जाने वाले कुछ ऐसे फलों के उत्पादन का भी उल्लेख किया है जिनसे यूनानी स्वयं परिचित नहीं थे। पशुओं के लिए भी अनेक तरह की खाद्य वस्तुएँ उत्पन्न हुआ करती थीं।[89]

अर्थशास्त्र में भी अनेक प्रकार के अनाज व साग आदि के नाम दिये गये हैं—शाली (विशेष प्रकार का चावल), व्रीहि (चावल), कोद्रव (कोदो), तिल, माष (मसूर), कुलुत्थ (एक प्रकार की दाल), यव (जौ), गोधूम (गेहूँ), कलाय (मटर की प्रकार का), अलसी (तीसी), सर्षपा (सरसों) तथा वल्लीफल (कद्दू), पिप्पली, मृद्वीका (अँगूर), इक्षु (गन्ना) आदि।[90]

वर्षा तथा सिंचाई का पूरा प्रबन्ध रहने से बराबर दो फसलें हुआ करती थीं जिस कारण मेगास्थनीज का कहना है कि भारत मे कभी दुर्भिक्ष नहीं पड़ा और न कभी खाद्य-सामग्री की कमी ही हुई। अकाल न पड़ने का दूसरा मुख्य कारण मेगास्थनीज ने भारतीयों का युद्ध-नियम दिया है, जिसके अनुसार कृषक-वर्ग को पवित्र और अवध्य माना जाता था और खेतीवाली भूमि को नष्ट नहीं किया जाता था। उसने कहा है कि शत्रु-देश की भूमि को भी भारतीय आग लगाकर नष्ट नही करते थे न वहाँ के वृक्षों को काटते थे।[91]

दुर्भिक्ष का कभी न होना भारत के पौराणिक साहित्य से प्रमाणित नहीं होता लेकिन इतना सही प्रतीत होता है कि खाद्य सामग्रियों की विशेष कमी उस युग में न रही होगी।[92]

---

89. Ancient India; p 55 and p. 31.

90. कौ. अर्थ. अ. २४ अधि—२.

91. Ancient India; pp. 32–33.

92. ई० सन् की पहली शताब्दी में हुए दिओन (Dion Chrysotcm) नामक एक पश्चिमी लेखक ने भारत की समृद्धि का वर्णन करते हुए कहा है कि भारत की नदियाँ "Flow not, with

मौर्य-युग में खेती की समृद्धि का मुख्य कारण सिंचाई का सुप्रबन्ध था। मेगास्थनीज का कहना है कि चूँकि अधिकतर भूमि में सिंचाई होती थी इसीलिये प्रतिवर्ष दो फसलें हुआ करती थीं—

"The greater part of the soil is under irrigation, and consequently bears two crops in the course of the year"—(Ancient India; p. 31).

कौटिल्य अर्थशास्त्र से भी प्रकट है कि सिंचाई के लिए अनेक तरह से प्रबन्ध किया जाता था, जैसे—(१) हस्तप्रावर्तिमम् (मजदूरों से पानी निकलवाकर सिंचाई करना); (२) स्कन्धप्रावर्तिमम् (पानी कन्धों पर ले जाया जाता था); (३) स्त्रोतोयन्त्रप्रावर्तिम् (यंत्र द्वारा पानी खींचा जाता था), और (४) नदी, सर (झील), तड़ाग (तालाब) और कूप (कुएँ) से सिंचाई के लिए पानी लिया जाता था। विभिन्न प्रकार से पानी लेने पर अर्थशास्त्र में विभिन्न 'कर' की दरें दी गयी हैं जिससे प्रकट है कि पानी के उपरोक्त साधनों का प्रबन्ध राज्य की ओर से रहता था (कौ० अर्थ० अ० २४, अधि–२)।

नियार्कस ने भारत की कुछ जातियों में सामूहिक तौर पर खेती किये जाने का भी उल्लेख किया है। उसके अनुसार फसल तैयार होने पर सब साझीदारों को वर्ष-भर के योग्य अनाज बाँट दिया जाता था और बचा अनाज जला दिया जाता था ताकि लोग आलसी न होने पावें (Strabo xv; C 716. CHI. vol I p. 414)।

---

water, but one river with pellucid wine, another with honey, and another with oil..." (India As Described In Classical Literature; p. 175.) पुराणों में भी क्षीर अथवा दूध आदि के समुद्रों का वर्णन मिलता है जो कि आर्थिक समृद्धि का काव्यमय उल्लेख है।

औषधी और रङ्ग के पौधे

अनाज और फलों के अलावा औषधी में काम आनेवाली वनस्पतियो की भी खेती की जाती थी। स्ट्राबो ने लिखा है कि अरिस्टोबुलस और अन्य लेखकों का कहना है कि भारत में अनेक तरह की औषधियाँ तथा अनेक तरह के रंगों को उत्पन्न करनेवाले पौधे उगाये जाते थे।[93] अर्थशास्त्र में सीताध्यक्ष (कृषि के अध्यक्ष) के कार्यों में विभिन्न प्रकार के अनाजों व फलों के साथ औषधियों का उत्पादन करना भी दिया है। अर्थशास्त्र में कहा गया है कि औषधियों को उपयुक्त भूमि तथा गमलो (स्थल्याम्) में उगाना चाहिए।[94]

मौर्यों के युग में चिकित्सा का प्रबन्ध मनुष्य और पशु दोनों के लिये था जैसा कि अर्थशास्त्र और अशोक के अभिलेखों से सर्वविदित है। अतः औषधियों के उत्पादन पर विशेष ध्यान रखा जाता था। अशोक के द्वितीय शिलालेख में कहा गया है कि 'अपने विजित राज्य तथा दक्षिण के सीमांत राज्यों और हिन्दूकुश की दूसरी ओर अन्तियोकस तथा उसके अन्य पड़ोसी राज्यों में देवताओं के प्रिय द्वारा दो तरह की चिकित्साओ का प्रबन्ध किया गया है—मनुष्यों और पशुओं की चिकित्सा का'', और चिकित्सा के सुप्रबन्ध के लिए शिलालेख में आगे कहा गया है—"औषधियाँ, जो मनुष्यों के लिए उपयोगी हैं, जहाँ-जहाँ नहीं है, वहाँ-वहाँ भेजी गयीं और लगायी गयीं।'' इस वृत्त से यह भी प्रकट होता है कि विश्व-कल्याण के हित मौर्य-युग में भारत से विभिन्न औषधियों के पौधे व बीज अथवा वनस्पति पश्चिमी-एशिया, मध्यएशिया और मिश्र आदि देशों में भेजे और प्रचारित किये गये थे।

---

93. India As Described In Classical Literature; p. 28.

94. कौ अर्थ. अ०. २४. अधि. २.

विष और निराकरण

अरिस्टोबुलस के अनुसार राज्य का यह नियम था कि यदि कोई व्यक्ति किसी 'विष' का पता लगाता तो उसे साथ ही उसके निराकरण अथवा शमन का उपाय भी निकालना होता था; अन्यथा उसे प्राणदंड मिलता था। लेकिन जो निराकरण सहित विष-द्रव्य (दवाई के उपयोग के लिए) का पता लगाते थे उन्हें राजा से पुरस्कार मिलता था।[95]

भोजन-वस्त्रादि

मेगास्थनीज ने भारतीयों का जीवन सुखद, सरल और मितव्ययतापूर्ण बतलाया है। उसने कहा है कि भारतीयों का मुख्य भोजन भात और दाल था।[96]

मेगास्थनीज के अनुसार भारतीय जब भोजन पर बैठते थे तो प्रत्येक के सामने एक चौकी रखी जाती थी जिस पर सोने के थाल में चावल परोसा जाता था और उसमें फिर भारतीय ढंग से तैयार किये गये अनेक स्वादिष्ट व्यञ्जन मिलाये जाते थे।[97]

मेगास्थनीज को भारतीयों का अकेले और अनियमित समय से भोजन करने की आदत अच्छी नहीं प्रतीत हुयी थी, क्योंकि उसकी दृष्टि मे सामाजिक और नागरिक जीवन के लिए यह आदत अच्छी नहीं मानी जा सकती। उसका कहना है—"They have no fixed hours when meals are to be taken by all in common, but each one eats when he feels inclined The contrary custom would be better for the ends of social and c vil life"[98]

---

95. India As Described In Classical Literature; p, 28.

96. Ibid; p. 56 And Ancient India; p. 69.

97. Ancient India p. 74.

98. Ibid; p. 70.

मेगास्थनीज के अनुसार यज्ञों के अवसरों को छोड़ भारतीय मदिरा कभी नहीं पीते थे। मदिरा चावल के बजाय जौ से तैयार की जाती थी।[99]

पहाड़ों में रहनेवालों को छोड़कर शेष भारतीय एरियन ने लिखा है निरामिषी थे।[100]

भारतीयों के सौंदर्य-प्रेम और विलासप्रियता का उल्लेख करते हुए मेगास्थनीज ने कहा है कि भारतीय सुवर्ण और रत्नों से जड़ी तथा महीन मलमल की सुन्दर चित्रित पोशाकें पहिनते थे। जब वे बाहर निकलते थे तो उनके पीछे परिचारक-गण छत्र लिये रहते थे क्योंकि सौन्दर्य-प्रेमी होने से वे अपनी छवि बढ़ाने का हर प्रकार प्रयत्न किया करते थे।[101] यह उल्लेख निस्सन्देह समृद्ध भारतीयों से ही सम्बन्ध रखता है।

नियार्कस के अनुसार भारतीय पूर्ण श्वेतवस्त्र धारण करते थे। उसने भारतीय पोशाक का विवरण देते हुए कहा है कि एक वस्त्र वे कमर से नीचे पहिनते थे जो घुटनों के नीचे तक रहता था और एक वस्त्र वे कन्धों पर डाले रहते थे और उसी के एक छोर से सिर को लपेट लेते थे। कमर से नीचे पहिने जानेवाले वस्त्र से अभिप्राय धोती से ही है जो कि आज भी हमारा मुख्य पहिनावा है।[102]

नियार्कस के अनुसार समृद्ध भारतीय हाथी-दाँत के कुंडल पहिना करते थे और दाढ़ी को अनेक तरह के रंगों से रंगा करते थे।

---

99. Ibid; p. 69; India As Described In Classical Literature; p 56.

100. Ancient India; p 222.

101 India As Described In Classical Literature, p. 57.

102. Ancient India; p. 219.

जूते सुफेद चर्म के बनते थे जिनकी एड़ियाँ बहुत मोटी बनायी जाती थीं ताकि पहिननेवाला ऊँचा दिखाई पड़े।[103]

भारतीयों के सवारी के मुख्य साधन ऊँट, घोड़े और गधे थे। इन्हे साधारण-जन प्रयोग में लाते थे लेकिन समृद्ध तथा राजवंश के लोग हाथी की सवारी करते थे।[104]

व्यायाम-मनोरञ्जन

मेगास्थनीज के आधार पर स्ट्रावो ने लिखा है कि भारतीयो के व्यायाम का मुख्य तरीका शरीर को रगड़ना अथवा मालिश करना था। इसके अनेक तरीके थे लेकिन विशेषतया शरीर को लकड़ी के बेलनो से रगड़ा जाता था (Ancient India; p. 70)।

जन-मनोरंजन के लिए नाटक, नृत्य, गान-वादन तथा नटों व सौभिकों (जादूगरों अथवा ऐन्द्रजालिकों) आदि के खेल हुआ करते थे। चारण लोग कथा-कहानी सुनाकर लोगों का मनोरंजन किया करते थे। इन विभिन्न कर्मों वालों के अर्थशास्त्र के द्वितीय अधिकरण के सत्ताइसवे अध्याय में नाम दिये हुए हैं।

एलियन के अनुसार भारतीयों का मुख्य मनोरंजन मनुष्यों व पशुओं–बैल, घोड़े आदि की लड़ाई तथा दौड़ थी। पशुओं की दौड़ पर राजा और उच्चवर्ग के लोग सोने और चाँदी में बाजी भी लगाया करते थे। उसने लिखा है कि पशुओं और मनुष्यों के मल्ल-युद्ध के लिए—भारतीय सम्राट प्रतिवर्ष एक दिन नियत रखता था—(India As Described In Classical Literature; p. 145)। पशुओं की दौड़ का जिक्र करते हुए वह आगे कहता है—"The Indians make much ado about the oxen that run fast; and both the king himself

103 Ibid; p 220.

104. Ibid; p. 222..

and many of the greatest nobles take contending views of their swiftness, and make bets in gold and silver;... They yoke them in Chariots, and incur hazard on the chance of victory—(Ibid; p 146).

पशुओं में भारतीय राजा हाथियों की लड़ाई में विशेष आनन्द लेते थे (Ibid; p. 165)।

भारतीय और उनके उच्चादर्श

भारतीयों के शारीरिक सौष्ठव और गठन के सम्बन्ध में यूनानी लेखकों ने कहा है कि भारतवासी लम्बे व पतले और वजन में दूसरे लोगों से हल्के होते थे।[105] नियार्कस ने भारतीयों के सुन्दर स्वास्थ्य का उल्लेख करते हुए कहा है कि भारत के लोग संयम से रहते और सुरापान नहीं करते थे, इसलिये वे बहुत कम बीमार पड़ते थे। कतेसिअस के अनुसार भारतीयों को सिर दर्द, दंतशूल व व्रण के रोग नहीं होते थे—(India As Described In Classical Literature. p. 52 and fn. I.)।

मेगास्थनीज ने भारतीयों के आदर्श चरित्र और उच्च नैतिकता की प्रशंसा करते हुए कहा है कि भारतवासी सत्यता और शील की प्रतिष्ठा करते हैं, इसलिये वे वृद्धों को जब तक कि वे विशिष्ट ज्ञानी न हों विशेष सम्मान नहीं देते।[106] नियार्कस के अनुसार भारतीय अपने राजाओं के सामने साष्टांग दंडवत् करने के बजाय हाथ उठाकर उनका अभिवादन करते थे।[107] भारतीयों की सत्यवादिता और कानूनों की सरलता का

105. Ibid, p. 221.

106. Ibid; p. 70.

107. India As Described In Classical Literature; p. 73. Camb. Hist. vol. p. 416.

उल्लेख करते हुए मेगास्थनीज ने कहा है कि भारतीय अदालतों की बहुत कम शरण लेते थे। आपसी इकरारों व धरोहरों के लिये उनमें कभी झगड़े नहीं होते थे। धरोहर आदि के लिए उन्हें मुहर व गवाहों की आवश्यकता नहीं पड़ती थी। उनके घर व धन-द्रव्य अधिकतया बिना किसी रक्षण के खुले ही पड़े रहते थे।[108]

---

108. Ancient India; p. 70.

सहायक पुस्तकों आदि की सूची

1. The Cambridge Shorte Histry of India; ed. J. Allen.
2. The Beginnings of South Indian History; S. Krishna Swami Aiyangar.
3. Political History of Ancient India;—H. Raychaudhuri.
4. The Age of Imperial Unity; Ed. R. C Majumdar.
5. The Oxford History of India; V. A. Smith.
6. Chandragupta Maurya And His Times. R. K. Mukerji
7. History of Ancient India; R. S. Tirpathi.
8. Asoka—Vincient Smith.
9. An Imperial History of India; K. P. Jaiswal.
10. Age of The Nandas & Mauryas; Ed. K. A. Nilkantha Shastry.
11. Buddhist India;—Rhys Davids.
12. The Greeks In Bactria And India;—Tarn.
13. The Cambridge History Of India; Vol. I.
14. भारतीय इतिहास की भूमिका—डा० राजबली पांडे।
15. चन्द्रगुप्तमौर्य—प्रो० हरिश्चन्द्र सेठ।
16. Roman History; Vol. II. Appaia Trans By White.

17. Aryan Rule In India; E. B. Havell.
18. Dynastics Of The Kali Age; F. E. Pargiter.
19. The Early History Of Bengal. F. G. Monahan.
20. The Beginnings of Art In Eastern India; R. P. Chanda.
21. Ancient India; McCrindle.
22. Ancient India As Described In Classical Literature; McCrindle.
23. Kautilyas Arthasastra. Ed. R. Shama Shastri (1929).
24. कौटलीयम् अर्थशास्त्रं–महामहोपाध्याय गणपतिशास्त्री।
25. Parisistaparvan. Ed. H. Jacobi.
26. Lives;—Plutarch.
27. The Dipavamsa; H. Oldenberg.
28. Divyavdana. Cowell And Nell.
29. The Mahavamsa; W. Geiger.
30. The Mahavanisatika. Turnour.
31. The Questions of King Milinda: vol. XXXVI. Ed. F. Max muller. Trans—By T. W. Rhys Davids.
32. मुद्राराक्षस—Trans. C. R. Devadhar.
33. India And The Western World; Rawlinson.
34. The Invaison Of India By Alexander The Great; McCrindle.
35. On The Weapons, Army Organization And Political Maxims Of The Hindus; Gustava Oppert.

36. Cunningham's Ancient Geography Of India; By S. N. Majumdar.

37. Epigraphia Indica; Vol. VIII.

38. Indian Culture; Vol. II.

39. Indian Historical Quarterly; Vol. V.

40. The Indian Antiquary; Vol. XXI, 1892.

41. Journal of Bihar And Orissa Royal Society; Vol. XVI; 1930.

42. Raja Dharma; K. V. Ranga Svami Aiyangar.

43. Civilization In Ancient India; R. C. Dutt. Vol. III.

44. The Position Of Women In Hindu civilization; Dr. A. S. Altekar.